Adarsh Library & Reading Room
Geeta Bhawan
JAIPUR
मंजुशिमा
शिवप्रसाद सिंह

कठिन है डगर पनघट

हमसे अच्छी तो फरिश्तो की बसर क्या होगी,
गम की रौनक जो इधर है उधर क्या होगी ।
पूछते है वे कि हुए क्या जो खिले थे गुंचे,
खिल चुके है जो भला उनकी खबर क्या होगी ॥

आज लगता है कि दर्द कभी मीठा भी होता है । उस वक्त नहीं लगा । उस वक्त तो यही लगा कि एक काले दमघोट तल-घर में गिर पड़ा हूं—अचेत-सा । कमरे में कोई अंधकूप रहा होगा, उसी में लुढ़क गया था । और क्या थी, कैसी थी, उस कुएं की अनतता, कि लुढककर जब गिरा तो... पत्थर के टुकड़े के मानिन्द गिरता हुआ चलता गया । उल्का टूटकर अनत आकाश से जैसे लुढकती चली जाती है, चली जाती है, वैसे ही रसातल का भी एक अनत होता होगा । मैं उसी निराधार रसातल मे गिरता चला जा रहा था ।

मै जानता हूं कि व्यक्ति की नियति को मानवजाति पर आरोपित करना लेखक की स्वस्थ रचनाधर्मिता के विरुद्ध है । मैं सैडिस्ट नहीं हूं । मै यह आशा करके नहीं चला था मंजुशिमा लिखने, कि मेरे जैसे दुख से ग्रस्त लोगो को थोड़ी ढाढ़स मिलेगी, सुकून मिलेगा । लोग कहते हैं सुख जब बटता है, हजार गुना हो जाता है, पर जब दुख बटता है, आधा हो जाता है, होता होगा । मैं अपने किसी निकटतम व्यक्ति को भी इस पीड़ा का साझीदार बनाना नही चाहता । मै दुख बाटने के लिए क्या उस महापात्र का वेश पहनूं जो रोज टोटका करता है कि कोई मरे और उसके श्राद्ध का सारा दान पाऊं । मैने तो सपने में भी नही सोचा कि मेरे पाठक मेरी ही तरह दुख की अग्निज्वाला के भीतर से गुजरें तभी उन्हें मंजुशिमा की रचना-प्रक्रिया का बोध हो सकता है । वैसे मुझे यह भी अहसास सदा बना रहा ।

रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय ।
सुनि इठलैहे लोग सब, बाटि न लैहें कोय ॥

हां, एक साझीदारी जरूर चाहता हू । दुख शब्द बडा भ्रामक है किंतु यह मानव जीवन के चक्र का प्रतीक है, इसी कारण लोग इसे कम करने के लिए, पीडा के साथ एक और लच्छी जोड देते हैं यानी आशा । मनुष्य को दुःख के बाद सुख की प्रतीक्षा रहती है । यह सब हमारी परंपरा के कवि-मनीषी हमेशा कहते आये है । मृच्छकटिक मे नाटककार ने कहा— सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते (मृच्छ 1-10)

अर्थात् दुःखों का अनुभव करने के बाद ही सुख शोभित होता है । हमारे संस्कृत के सर्वोत्तम कवि कालिदास तो इसे और भी अधिक आग्रह के साथ रेखांकित करते हैं :

यदेवोपनतं दुःखात्सुखं तद्रसवन्तरम्,
निर्वाणाय तरुच्छाया तप्तस्य हि विशेषतः । (विक्रमोर्वशीयम् 3/21)

"सुंदरी, ऐसी बात न करो । दुःख के बाद सुख का जो रस होता है वह तो अद्भुत हो जाता है । संतप्त व्यक्ति के लिए धूप के बाद तरु की छाया कितनी सुखकर लगती है ।" लगी होगी, बंधु आप लोगों को । बंधु क्यों, हे मेरे प्रपितामहो! तुम धन्य थे कि तुम्हें दुःख तो मिला, पर तुम्हारे भाग्य में सुख का लोकोत्तर रस भी था । संतप्त तो हुए पर ताप की चरमकोटि पर सप्तपर्णी की छाया तुम्हारी महा-प्रतीक्षा भी करती रही । तुम्हें तो हर तरह से दुःख के बाद सुख की शोभा ही दिखी। पर मेरे मन के करीब का महाकवि जब धीरे से लंबी सांसें खींचकर उदास हो जाता था तब सिर्फ उसी की ईमानदार पंक्तियों में सत्य दिखता था । न तो छाया मिलती है न तो प्यासे के लिए कोई शीतल रस । पानी तक तो नहीं मिलता। वही सही है । विरलों के भाग्य में दुःख से छिटककर सुख की युटोपिया नसीब होती है । मेरे लिए तो भवितव्यता यही है :

दुःख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूं आज जो नहीं कही ।
हो इसी कर्म पर वज्रपात, यदि धर्म रहे नत सदा माथ ।
इस पथ पर मेरे कार्य सकल, हों भ्रष्ट शीत के-से शतदल ।
कन्ये गतकर्मों का अर्पण कर, करता मैं तेरा तर्पण ।

अंधियाली बीत रही थी । ब्राह्म मुहूर्त का उजास फूटने वाला था । मैं चुपचाप एक कोने में खड़ा था । सामने के झुरमुट से डरा कंपित एक व्यक्ति भागा चला आ रहा था । उसके पीछे, एक बड़ी भीड़ ठेलमठेल मचाये दौड़ रही थी । तमाम लोग पत्थर के, ईंटों के टुकड़े उठा-उठाकर उस पागल को मार रहे थे।

"नहीं, मैंने ऐसा कुछ नहीं किया ।" वह हाथ जोड़कर पीछे खड़ों से माफी भी मांग रहा था और पत्थरो से बचने के लिए भाग भी रहा था ।

"मारो, मारो स्साले को । वह 'निराला' बन रहा है । सोचता है कि मरी लड़की की बात कहकर दया उपजा लूंगा । लोग इसके सामने घुटने टेककर इसकी प्रशस्ति गायेंगे; मारो, मारो, मारो ।"

मैंने उस आदमी को गौर से देखा । मैं पेड़ के तने के पीछे छिपा था । पर साफ देख रहा था । वह मैं ही था ।

मै ही चिल्ला रहा था । मैं ही गिड़गिडा रहा था, "नहीं, तुम गलत सोच रहे हो दोस्तो, मैं तो जाने कब से आपसे डरा-डरा भाग रहा हूं । आप सब लोग गलत आदमी को मार रहे हो । मैं निराला नहीं हूं । मैंने तो ढाई लाख रुपये

जुटा-जुटाकर ट्रांसप्लांट कराया । निराला तो मामूली चिकित्सा भी नहीं करा पाये। फिर भी वह नहीं बची । दुःख की कथा शाश्वत रही मेरे साथ । मेरे पास कुछ भी धर्म नहीं है, फिर नतमस्तक किसे करूं । मैं तो धर्म मानता ही नहीं । मेरे कर्मों का कोई मूल्य है ही नहीं । कूड़े का मूल्य होगा भी क्या । फिर किस कर्म को शाप दूं । जो विफल हो गया, उसे पुनः विफल कहना तो वज्र मूर्खता होगी । और जो विफल है उसे शीतकमल की तरह बिखर जाने से कौन रोक पाता है । मैं अदना आदमी मृत्यु से टकराने चला था, निराला से नहीं । वे तो अमर हैं । मैंने दंभ किया था कि सर्वोत्तम चिकित्सा के लिए जो भी बलिदान करना हो, करूंगा । मैंने किया, फिर मैं मृत्यु को जीत चुका था, नतमस्तक कर चुका था । पर अंत में वह जीत गयी । मृत्यु जीती, मैं हारा । पर मैं संतुष्ट हूं । इसीलिए कि मैंने उसे मृत्यु के मुख में जाने से रोक दिया था । क्या हुआ कि वह तीन साल तक ही जी पायी । यह भी बहुत है । अगर मैंने मृत्यु को एक मिनट के लिए भी रोक दिया तो मैं सफल हूं । मैं टूट गया तो क्या हुआ । मृत्यु भी तो टूट गयी मेरे लिए । मेरे कुछ मित्र जो पहले मुझे ठीक-ठाक कहा करते थे । आज कह रहे हैं कि मैं अहंकारी हूं। आलोचनाएं सह नहीं पाता । तुनकमिजाज हूं । मैं पंत की तरह सोच-सोचकर शांत चित्त से नहीं लिखता । निराला की तरह खौलने लगता हूं । पता नहीं किस साइत में निराला का अपार्थिव अंश मेरे रक्त में आ गया जो बहुत गड़बड़ी मचा रहा है । निराला जैसी रचना तो सपना ही रहीं, खौलने और तुनक-मिजाजी में जरूर उन्हें भी लांघ गया । चलिए, कहीं तो आपने जान बख्श दी । अवगुण भी गिनाये तो एक महाकवि के साथ जोड़कर । यही क्या कम है?

आचार्य गुरुवर द्विवेदी जी पर आयोजित परिचर्चा गोष्ठी के लिए डॉ. राजमणि शर्मा के आग्रह पर स्व. मातुश्री महादेवी जी को निमन्त्रित करने गया था । बेसाख्ता हंस रहा था किसी बात पर । तभी एक किशोरी आयी—"आपको देवी जी बुला रही हैं ?"

मैं घबड़ाया— "सिर्फ मुझे बुला रही हैं ?"

"हां, आपको—उन्होंने कहा कि जो आदमी हंस रहा है बहुत जोर से, उसे बुला लाओ ।"

खैर, ये बातें पहले लिख चुका हूं एक निबंध में । उन्होंने पूछा था, "क्यों इतना अट्टहास क्या पीड़ा को छिपा सकेगा । कुछ लिख रहा है मंजुश्री पर?"

"हां, लिख रहा हू और लगता है कि तेरी कृपा और निराला के आशीर्वाद से एक छोटी-सी ठीक-ठाक रचना बन जायेगी ।"

"क्यों, मेरी कृपा और निराला के आशीर्वाद से इसका तात्पर्य ?" मैं समझ नहीं पायी । "देख तू बात सहला रही है । चल संतरा उठा । छीलकर ढेर लगा चुकी और तू उठा नहीं रहा है खा भी नहीं रहा है । यह सब जो कह रही है तो यह

तेरी कृपा है । निराला हैं नहीं, वे तो आशीर्वाद ही दे सकते हैं न?"

उसकी आंखें छलछला आयी थीं— "शिव लगता है जब तक तेरी पुस्तक आयेगी मैं भी निराला की तरह केवल आशीर्वाद ही दे सकूंगी ।" आज वे छलछलाई आंखें बहुत-बहुत मन को सालती हैं । वह नारी थी— मीरा के समान गरल पीने वाली । मंजु का उसके लिए महत्त्व था । मेरे लिए महत्त्व क्या ? पुरुष हूं ? लोग कहते हैं कि यह पागल है; मूर्ख है । कर्ज लेकर कोई व्यर्थ की बोझ बनी एक लड़की को सिर पर उठाये दौड़ता है क्या ? हां, मैं पागल हूं । मुझे गर्व है कि मैं पागल हूं; मैं बहुत बड़ा अहंवादी हूं; मैं पागल हूं । बिना अहं के मैं उसकी चिकित्सा का सपना भी नहीं देख सकता था । बेटी-चेटी के लिए यह सब करना अहंकार है, तो है ? मैं महाहंकारी हूं । मै वेवश भिखारी न बना, न बनूंगा । न हाथ फैलाया, न फैलाऊंगा । टूट जाऊंगा, पर झुकूंगा नहीं । मैं अस्मिता का महान् स्तूप हूं । इसे अपने दोनों पाटों में पीसकर महाकाल रिक्त अंतरिक्ष में उड़ा देगा । मैं वही चाहता हूं ।

"लड़के-गम की रौनक फरिश्तों तक को नहीं मिलती । बहुत खूब, बहुत खूब । तेरे इस सेंटेंस ने मुझे हंसा ही दिया । जिंदगी कितनी सूनी लगती है जब वेदना साथ नहीं होती । तुमने अंग्रेजों के महान सामंती कवि शेक्सपीयर को पढ़ा है ? "थोड़ा-थोड़ा पढ़ा है ।" कोई बात नहीं, काफी है । उसने एक जगह लिखा है — **वेदना जासूसों का छोटा गिरोह लेकर नहीं, सैनिकों की बटालियन लेकर आती है** । अब बोलो तुम्हारे से ऊपर जब यह वेदना घहराई तो वह अकेले आयी थी ? नहीं न आयी थी ? स्वयं की लंबी बीमारी, रेनेल फेल्योर की दारुण चिंता, किडनी न पा सकने की स्थिति में रोज-रोज हारना, हारकर जीना, फिर इसी क्रम में दुःखों का गझिन होते जाना, यह सब कुछ आया था । ठीक है ऐसा ही होता है । लेकिन लड़के-वेदना से ज्यादा विश्वसनीय किसी का भी साथ नहीं होता । बड़ी फेथफुल जीवनसंगिनी होती है वह जब सब साथ छोड़ देते हैं तो वेदना से विदाई लेना चाहो तो भी तब भी वह विदा नहीं होती—बोलने वाले कीट्स थे । सुनो :

> वेदना से कहा कि साथ छोड़ दो तुम मेरा,
> वह हंसी और बोली ऐसा इरादा नहीं मेरा ।
> सच वह कितनी खुशी भरी संगिनी है,
> ममता से भरी अनमोल रंगिनी है ।

आप से अगर कहूं कि दुःख का अर्थ होता है, 'दुष्टों की खान में जीना' तो आप हंसेगें । हंसने की बात नहीं है । 'दुष्टानि खानि यस्मिन्' यही है व्युत्पत्ति दुःख की। इस हिसाब से देखें । मुझे तो लगता है कि शायद इस खान में सड़ते-सड़ते समाप्त हो जाने के अलावा और चारा ही नहीं है । दुष्टों को सहना उतना कठिन नहीं होता जितना सज्जन की उपस्थिति । इस दुःख-कातर व्यक्ति को भी अनेक

लोग मिले, जो उन दिनों की अंधेरी रातों में सहानुभूति का एक क्षीण ही सही, छोटा ही सही । आशा का नन्हा दीपक जरूर जलाने का प्रयत्न करते थे । मैं उन लोगों के प्रति आभारी हूं । पर मैं जानता हूं कि सत्य का प्रामिसरी नोट जब कालातीत होता है तो वह भी व्यर्थ हो जाता है । सरकार आश्वासन देती है कि वह प्रामिसरी नोट जब चाहोगे, सौ रुपया दे देगा, पर मैं इतना अपभित हो जाता हूं कि कभी-कभी लगता है कि धन की सत्ता के खिले फूलों को जज्बात कालांतर में ढूंढना सरासर गलती है । *धन की आवश्यकता की एक सीमा है* । इसलिए धन तमस् का रूप भी लेता है और धन तामसिक माहौल को तोड़ने का एक औजार भी होता है । धन पर गेंडुर मारे बैठे विषैले नागों को धन दूध पिलाकर पालता है और उस हर कर्म से लज्जित होता है । जिसे उसके पाले हुए नाग करते हैं । ये गरीब को डसकर मृत्यु की ओर धकेलने में सहायता पहुंचाते हैं । क्या हुआ कि मैंने धन से जीवन खरीदने की मामूली-सी कोशिश की थी । धन जब भोक्ता के अस्तित्व को ही गवा दे, धन यदि रोगी के सिरहाने रखने वाले उगलदान की ही तरह हो, तो धन की तीसरी गति तो अनिवार्य होगी । वह *भोगा नहीं गया*, तो अतृप्त बनाता है और वह सही ढंग से नियोजित नहीं हुआ तो गलत हाथों में जाता है अर्थात् धन का भोग, *धन से कीर्ति और यश की प्राप्ति नहीं हुई तो उसकी अनिवार्य गति होती है*— विनाश । मेरे लिए तीनों गतियों की घटते देखने की फुर्सत कब थी । कर्ज के धन की केवल एक गति होती है— दुश्चिंता का बोझ । इसे बहुत हल्का बना दिया कुछ सचमुच के हमसफर और हमदम बंधुओं ने । इस वक्त अपने स्वभावसिद्ध अहेतुकी कृपा के प्रदाता डॉ. गंगासहाय पांडेय को मैं नमस्कार करता हूं, कृतज्ञ हूं। बोझ हट गया तो भी कृतज्ञता से बड़ा सुख और क्या है जो उन्हें प्रदान करूं।

आपने कभी ख्वाजा मीर दर्द के बारे में कुछ पढ़ा है ? पढ़ा तो मैंने भी नहीं था । पर बहुत प्रशंसा सुनी थी । वे शांति उपलब्ध करके उसी में जीने वाले सूफी संत थे। शांति की लड़ाई भी हर व्यक्ति को उसी तत्परता से लड़नी पड़ती है जितनी तत्परता मौत की लड़ाई के लिए चाहिए होती है । मैं जिंदगी भर अशांत रहा । जब भी अशांत स्थिति भारी हो जाती थी, कोशिश करता था कि सब कुछ अल्लम-गल्लम जो दिमाग में जमा है, उखाड़-पछाड़ कर बाहर फेंक दूं । उस समय इस प्रक्रिया में शवासन से शांति मिलती थी । पर शवासन कुछ देर के लिए आंशिक इलाज तो बनता है, पर एक शांत, सिरीन टेम्परामेंट, मिजाज [illegible] निर्मित नहीं कर पाता । शांति की लड़ाई बहुत कठिन है । हर ईमानदार [illegible] पर तोहमत आयद की जाती है । कोई शांति की लड़ाई लड़ने का मौका [illegible] देता । जब 'दर्द' तोहमत से नहीं बचे तो शिवप्रसाद किस खेत की मूली है [illegible] एक दिन कल्लूमियां से कहा, "जानेमन, यह शाहाना, कौव्वाली [illegible] मेरा मन बड़ा उदास हो जाता है । तुम जब हारमोनियम पर

लगता है सूखे ज़ख्म को कुरेद रहे हो । शांति का पनघट पाना सचमुच बहुत कठिन है ।

तुहमत चंद अपने जिम्मे घर चले
जिसलिए आये थे हम सो कर चले
जिंदगी है या कोई तूफान है—
हम तो इस जीने के हाथों मर चले
शमअ के मानिन्द हम इस बज्म में
चश्म-नम आये थे दामन-तर चले
वहुत कठिन है डगर पनघट की
वहुत कठिन है डगर पनघट की...

'दामनंतर' करके भी मैं जीता रहा । शांति की लड़ाई जारी है । ऐसे में एक दिन अचानक डॉ. रामविलास शर्मा से मुलाकात का अवसर मिला । हम मुद्दत बाद मिले थे । मैं उनसे खिंचा रहा, वे मुझसे खिंचे रहे । होता है यह सब अलग-अलग मत रखने वालों के वीच । पर जव हम मिले तो वे एक क्षण मुझे देखते रहे । एक क्षण मै उन्हें देखता रहा । फिर वे बोले, "देखो, पिछले सात वर्षो, से तुम किस तरह दारुण परिस्थितियों में जूझते रहे हो, उससे मैं पूर्ण परिचित ही नहीं, प्रत्येक घटना के हर मोड़ को बहुत विस्तार से जानता हूं । उन्होंने अपनी जानकारी की वात की तो मैं स्वयं चकित था कि एक व्यक्ति जो मेरे कभी भी निकट नहीं रहा, वह इस तरह सही घटित स्थितियों का वर्णन कैसे कर रहा है । मैंने उस दिन रामविलास जी से कुछ कहा नहीं । हां, यह सव लिखते मन को वहुत पीड़ा भी हो रही है कि मंजु-व्यथा-कथा में रामविलास जी इतने डूबे थे कि वे मंजु से सेवा पर उतर आये । आचार्य की पुत्री सेवा की व्यथा तो मंजु से भी ज्यादा बड़ी है । मंजु अपने बाप को सिर्फ सात वर्ष तक ही व्यथित करती रही । वह घुल-घुलकर जीती रही मरने के लिए और अभागा बाप घुल-घुलकर मरता रहा जीने के लिए । सेवा तो रामविलास को संभवतः उनके पूरे जीवन भर व्यथित करती रहेगी । मैंने अपने दो-एक छात्रों को जो आचार्य से मिलते रहे हैं, उपालंभ दिया कि तुम लोगों ने कभी सेवा की दर्द भरी कहानी नहीं वतायी तो वे सब स्वयं चकित थे, बोले, "यह तो उन्होने कभी वताया ही नही"। मन उदास इसलिए है कि सरोज स्मृति को समझने के लिए मंजु-व्यथा और मंजु-व्यथा को समझाने के लिए सेवा-संताप के भीतर से गुजरने की अनिवार्यता हर वाप को कव तक झेलनी पड़ेगी । आज मैं उस मुलाकात की सर्वोत्तम उपलब्धि को शत-प्रतिशत स्वीकार करता हूं कि रामविलास जो हों, मुझे इससे क्या लेना-देना पर रामविलास जी सही अर्थों में मनुष्य हैं । और मनुष्य वनने के प्रयत्न की कड़ी लड़ाई में भाग लेने से फरिश्ते भी कतराते हैं । मैं उन्हें सिर्फ एक शब्द कह सकता हूं—धन्यवाद आचार्य! इस आदमियत को कभी भूल नही पाऊंगा । तुम समीक्षक वड़े हो या नहीं, इसे तो इतिहास वतायेगा

लेकिन तुम्हारे भीतर का आदमी बड़ा है । मैं इतना जरूर कहूंगा ।

उर्दू के कुछ शेर, हिंदी कविताओं के टुकड़े, सिनेमा के गीत, बाइबिल की पंक्तियां, व्यंग्य का कटु प्रयोग, अंग्रेजी की कविताओं के अनुवाद—यानी ढेर सारा कूड़ा-करकट भरकर उसे अहंकार से उपनिषद कहना कितनी बड़ी मूर्खता है । ठीक है, बंधु ! मैं आपके मानसिक जगत् में उपनिषद का जो अर्थ है—यानी अपौरुषेय, अगम्य उस अर्थ में लिखना तो दूर सोचता भी नहीं । उपनिषद निकट बैठकर ही समझी जाती है । मृत्यु के जितना निकट रहा उसे अगर यह कूड़ा-करकट बांध ले तो मैं उपराम हो जाऊंगा । नहीं बांध पाये तो मैं नेति-नेति कहकर पलायन कर जाऊंगा—महाजनो येन गतः स पन्था ।

अगर नामों की सूची बनाऊं तो मर्दुमशुमारी जैसी लगेगी । बहुत लोगों ने मेरे लिए बहुत किया । यह सब इतना तुच्छ नहीं है कि धन्यवाद कह देने से चुकता हो जायेगा। सचमुच का स्नेह सौजन्य कभी चुकता नहीं किया जाता । इस उपन्यास में स्थान-स्थान पर उन तमाम लोगों का जिक्र है । मेरे प्रति सहानुभूति का एक शब्द भी जिसने प्रदान किया वह मेरा नमस्य है । मैं उनकी वदान्यता को भुला नहीं पाऊंगा ।

हां, इस उपन्यास को लिखते वक्त कभी-कभी कई जगहों पर ऐसा भी हुआ है कि मैं अनावश्यक रूप से कटु हो गया हूं । लेखन की हरारत में ऐसा हो जाता है । उसे बदल दूं तो उनके प्रति थोड़ा-सा न्याय जैसा तो लगेगा, पर वे रचना-प्रक्रिया के भीतर के तापमान के बैरोमीटर बनकर आये हैं, जलन और वेदना के साक्षीभूत हैं, अतः ज्यों का त्यों रहने दिया है । मेरे मन में प्रभु यीशु और कृष्ण के बीच कोई अंतर नहीं है । मैं भगवान कृष्ण को प्रणाम करता हूं तो वहीं एक मोमबत्ती प्रभु यीशु के नाम पर भी जला देता हूं । इसलिए ईसाई धर्म, व्यक्ति, संस्थाएं सभी मेरे लिए नमस्य हैं । क्रोध में मैंने जब स्वयं अपनी आत्मा को कड़वी से कड़वी गालियां दीं तो दूसरों पर भी छींटे उड़े होंगे। सबके प्रति श्रद्धावनत हूं , क्षमा प्रार्थी हूं । वैसे आजकल बडा चमत्कार करने में लगा हूं । जिंदगी तो लोगों को लहू-लुहान करने में बीती । अब बूढ़ा हुआ तो लगता है कि शांति आखिरी मंजिल होनी चाहिए । आजकल उसी शांति की खोज रहा हूं । इस खोज की डगर बहुत बडी कठिनाइयों से भरी है । शांति के जल का पनघट पा जाना इतना आसान नहीं होता । इसलिए मन के गुबार को उडाने से अगर आपकी आंखों की किरकिरी बन भी गया तो क्षमा कर दीजिएगा ।

ओम् शम्

शिवप्रसाद सिंह

सुधर्मा, 13 गुरुधाम कालोनी
25 फरवरी, 1989 (मंजुश्री की उन्नीसवीं वर्ष गांठ पर)

वेदनोपनिषद्

भोक्ता : शिवप्रसाद सिंह

देवता : पवमान इच्छा शक्ति

जिसकी मात्र एक किरण मानव-विरोधी

तामसिक प्रकृति के अंधकार को तोड़

देने के लिए संघर्ष-रत है ।

शांति पाठ

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः

स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः

स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातुः ॥

ओऽम् शान्तिः, ओऽम् शान्तिः

ओऽम् शान्तिः

1

समवे स्वजन दुखकारिका सम्प्रदानसमयेऽर्थहारिका
यौवनेऽपि बहुदोषकारिका दारिका हृदयदारिका पितुः

पता नहीं, आज से कितने वर्ष पहले किसी नारी-द्रोही ऋषि का यह कथन सामने आया । वे ऐतरेय ब्राह्मण पर अपना भाष्य लिख रहे थे । "जन्म के समय अपने आत्मीय जनों को दुख पहुंचाने वाली, वर को प्रदान करते समय अतुल धन का अपहरण करने वाली, युवती के रूप में उद्दाम वेग से विधि-निषेध की सारी सीमाएं तोड़ देने वाली, दारिका तो निश्चित रूप से माता-पिता के हृदय की विदारिका होती है ।"

हमारा देश इस तरह की चीजों को हृदय से चिपकाये अथवा मूड़ पर बोझ की तरह उठाये चलता आ रहा है शताब्दियों से ।

मैं वाराणसी तो उन्नीस सौ पैंतालीस में ही आ गया था । पर अपना रहना-सहना नगर के धुर उत्तरीय छोर पर था । मन में साहित्यलेखन के कीटाणुओं का प्रवेश नहीं हुआ था । समय गुजरता गया । वह एक अलग कथा है। मैं उन्नीस सौ पचपन में प्राध्यापक की नौकरी पा गया था और दुर्गाकुंड के सामने काली कोठी में रहता था । इस बीच न केवल रचना के कीटाणुओं का प्रवेश हुआ बल्कि 1951 के प्रतीक के अक्टूबर अंक में प्रकाशित 'दादी मां' ने पर्याप्त शोर-शराबा मचा रखा था । कुछ ने इसे नयी कहानी की शुरुआत कहा । किसी ने नये-पुराने लेखकों पर व्यंग्य करते हुए कहा कि रचना में ताजगी कहां से आती है, इसे शिवप्रसाद सिंह से सीखें । पत्नी अपढ़ गवार थी । मैं सुपठ गंवार । कुछ अर्थों में तो पत्नी मुझसे अधिक कुशल थीं । वे विशेश्वरगंज जाकर पूरे वर्ष के लिए गेहूं, चावल खरीदकर रख लेती थीं । शाक-सब्जी आदि सब उनके कर्त्तव्य-क्षेत्र के भीतर था जिसके लिए न मुझे सट्टी जाना पड़ता था न कहीं और । लेखन एक मात्र कार्य था ।

पत्नी गर्भवती थीं । मैंने कहा कि यहां किसी जानकार मित्र आदि को पकड़ूं तो तुम भरती तो हो जाओगी, पर कौन भोजन बनायेगा । कौन तुम्हें सवेरे का नास्ता पहुंचायेगा । मैं इस तीन वर्षीय सुपूत को संभालूं या घर-द्वार देखूं । दुनिया में जितनी भी शरारतें हो सकती हैं, सबके पुंजीभूत विग्रह थे श्री नरेंद्र।

"आप यह सब कर भी लेव, तब्बो अस्पताल हम उहां नहीं जायेंगे।"

"क्यों ?"

"क्योंकि वहां आधे से अधिक मर्द डॉक्टर रहते हैं और आधी डाक्टरनियां। एक ही कमरे में सबको लेटा देते हैं और पंद्रह-पंद्रह मिनट पर मर्द डॉक्टर आकर पूछते हैं– क्या हाल हैं।"

"तब ?"

"तब का ? आप मुझे अपर इंडिया पर चढ़ा दीजिए मैं गांव पहुंच जाऊंगी। वैसे वहां भी मुझे सास-ननद की ठसक सहनी पड़ेगी पर वह मुझे कबूल है।" वह दिन था पहली फरवरी उन्नीस सौ उनसठ। मैंने उस दिन अपनी निरर्थकता का पहला अनुभव किया। जिसके हाथ को पकड़कर शपथ ली थी—यदिदं हृदये तव तदिपदं हृदये मम। उसे एकाकी अबोध शिशु के साथ गाड़ी में बैठाकर मैं पुल से देख रहा था। गाड़ी चली, चलती गयी और मैं एक बोझिल-सा वातावरण लेकर बहुत देर तक रेलिंग से टिका खड़ा रहा।

मैं 26 फरवरी को अपर इंडिया से गांव के लिए चल पड़ा। मेरे मन में पुत्र या पुत्री को लेकर कोई प्रश्न नहीं था। मैं जब बखरी में गया तो हमेशा की तरह सीधे दादी मां के कमरे में पहुंचा।

"बेटी-चेटी हुई है– चेखुर जैसी।" वे बोलीं।

मैं दादी मां को दोष क्यों दूं। अगर बेटी के पीछे कोई शब्द जोड़ना ही हो तो चेटी से अधिक उपयोगी कौन शब्द मिलेगा।

आज से तीन वर्ष पहले इसी तरह के वातावरण में जब गांव पहुंचा तो आंगन में दरी बिछी थी। बहनें, भाभियां, दायादिनें ढोल पीट-पीट कर गा रही थीं।

आयहु मोरे परोसिन गोत देयादिन हो
ललना होरिलवा जनमवा के सोहर गाई सुनावहु हो।

नउनियों, बारिनों, भाटिनों ने मेरी धोती का लटकता छोर पकड़ लिया। किसी तरह बीस-पच्चीस दे-दिलाकर छुटकारा मिला, बखरी के बाहर आया। और आज भी वही बखरी है। एक नये प्राणी का आगमन हुआ है, पर कितना भुतहा सन्नाटा छाया है। जैसे मैंने और मेरी पत्नी ने कोई बहुत बड़ा अपराध कर दिया हो। दुःखी तो मेरी पत्नी भी होगी पर उनके ऊपर कोई तनाव नहीं होगा। क्योंकि जनम से लेकर आज तक केवल उन्हें एक बात सिखायी जाती रही है कि लड़की व्यर्थ का बोझ है। वे भी लड़की-लड़के में प्रबल भेद मानने वाली रघुवंशियों की कुलोद्भूता है, फिर किसी से पीछे क्यों रहें। "ये दारिका परिचारिका करि पालबी" जब सीता जैसी दारिका को परिचारिका बनाने की विनती जनक ने

दशरथ से की तो आप इसे विनम्रता-प्रदर्शन कह लीजिए, शिष्टाचार कह लीजिए पर इसके पीछे क्या ऐतेरेय ब्राह्मण के ऋषि के फण की फूत्कार सुनाई नहीं पड़ रही है ।

कामा के मामूली जमींदार की आश्रिता मोतीबाई की गुड़िया, भोलानाथ तिवारी, भैया जी, और जाने कितने-कितने अपरिचित हाथों में मुस्कराती रिझाती मंजु। सरदारिन की दुकान से बधा हुआ घुघुनी और जलेबी का नास्ता जिसमें सबसे बड़ी बाधा थे दुर्गाकुंड के बंदर । बार-बार मना करने और भूत का भय जगाने वाले निषेधों को तोड़कर नरेंद्र के साथ दरगाहों की यात्रा, कब्रिस्तानों में घोड़े की पीठ जैसी बनी हुई कब्रों पर सवार होकर अंतरिक्ष लांघ जाने की ललक— सारे उत्पातों के समाचार मुझे पडोसियों से मिल जाते थे । पर मैंने उन दोनों को वहा जाने से कभी रोका नहीं । दुर्गाकुंड के लड़के लड़कियों के साथ प्रात काल की घुड़दौड़ शिशु-विहार की छात्रा । भारी भरकम झोला कंधे पर लादे घर लौटना । पुन उसी घुड़दौड़ का शेष भाग पूरा करने का उल्लास । हम उम्र शिशुविहार की सहेलियों को चाय का निमंत्रण, बेमतलब की खिलखिलाहट और बीच में ही अट्टहास के टेप का टूटना । "बाबूजी बिगडेंगे, हिश् ।" दुर्गाकुंड का सावनी मेला— पूरे एक महीने चर्खी पर बैठकर अंतरिक्ष और पाताल की यात्रा । गांव की मेला देखनहरू औरतों का एक-दूसरे को अंकवार में भरकर रोना— रोना कम गाना ज्यादा— दूसरी ओर से झुंड बाधे औरतों का डिबनाद...

> कइसे खेले जाइब सावन में कजरिया
> बदरिया घेरि आयी ननदी----------

कामाकोठी से गुरुधाम में आगमन, एडमिशन परीक्षा में प्रथम श्रेणी ।

"मंजु कुछ खिलाओ-पिलाओ, प्रथम श्रेणी प्राप्त किया है तुमने ।"

"आप न खिलाइयेगा ?"

"लो यह दस रुपये का नोट, नरेंद्र के साथ जाकर मिठाइया ले आओ । राखी का त्यौहार जो पिछले बीस वर्षों से इस अभिशप्त व्यक्ति के घर नहीं मनाया जाता था, पुनः आरंभ, रंग-बिरंगी राखियां, दधि, हरिद्रा चावल के तिलक । नरेंद्र के हाथ में राखी बंधती थी और पचास रुपये मुझे देने पडते थे, इसका हरजाना । अचानक एक दिन बोली— "मैं आपको भी राखी बाधूगी, अमुक-अमुक की लडकियां सब अपने पापा को बाधती हैं ।"

"लो भाई', बांध दो ।"

अब पचास की जगह पूरे सौ ।

पी. यू सी. ।

"बाबूजी !"

"हूं"

"सुनिए भी तो आप तो, लिखे ही जा रहे हैं, मुझे पी. यू. सी. में प्रथम श्रेणी मिली है।"

"अच्छा, वाह मंजु, लो, दस रुपये !"

"मैं नहीं लूंगी ।"

"क्यों ?"

"मैंने रुपये के लिए तो परीक्षाफल बताया ही नहीं था आपको । केवल दो लड़कियों को मिली है यह श्रेणी ।"

"अच्छा, आओ, पीठ ठोंक दूं ।"

उसने मेरे पैरों पर माथा रख दिया, मैं सहलाता रहा ।

"अब जाओ नरेंद्र के साथ मिठाइयां ले आओ और परिवार के लोगों का तथा परिचितों का मुंह मिठा कराओ ।"

सेंट्रल गर्ल्स स्कूल से कई बार पिकनिक, स्काउटिंग कैंप (इलाहाबाद) जिनमें घनिष्ठ अंतरंग सहेली कनकमंजरी का रहना अनिवार्य था ।

बी. ए. प्रथम श्रेणी, खिलखिलाहटें, मिठाइयां ।

"डॉक्टर साहब !"

"कौन है ?"

"मै हूं, राममोहन पाण्डेय ।"

"आओ पंडित, तुम तो दूज के चांद हो गये हो ।"

"घर के प्रपंच में पड़ा हूं गुरुदेव, मैंने आपका भार हल्का कर दिया।"

"क्या हुआ ?"

"मैंने मंजु के लिए एक योग्य युवक चुना है । वे लोग शांति निकेतन में रहे हैं। पिता तो रिटायर्ड हैं पर लड़का एम. एस-सी. कर रहा है । डॉक्टर साहब, इतना हीरा है लड़का कि आज के जमाने की कोई भी बुरी आदतें नहीं है उसमें । एक बहन है अविवाहिता जो प्राध्यापिका है ।"

"उन्होने विवाह क्यों नहीं किया ?"

"अब इसका तो पता लगाना होगा ।"

"तो पता लगा लो ।"

पंडित चले गये । तभी बगल के कमरे से मंजु उठी और मेरे पास आकर बैठ गयी।

"मैं उस घर में नहीं जाना चाहती जिसकी मालकिन अविवाहिता प्राध्यापिका हो।"

"क्यों ?" "क्या अविवाहिता प्राध्यापिकाएं चुड़ैल होती है ।"

"आप नहीं जानते ।" वह उठकर पुन: बगल वाले कमरे में चली गयी । तभी उत्तर प्रदेश नाटक प्रतियोगिता का आयोजन नागरी नाटक मंडली के तत्त्वावधान में हुआ। श्री सन्याल, कुमुद नागर और मैं निर्णायक थे । वह प्रत्येक नाटक मेरे साथ देखने जाती ।

जब सोना बाबू का नाटक 'आधे अधूरे' का मचन समाप्त हुआ तो मैं इधर-उधर देखता मंजु को खींचता नेपथ्य में पहुंचा । कम से कम दस नाट्य सस्थाएं अपने द्वारा खूब ठोक पीटकर तैयार किये गये नाटकों को प्रस्तुत करने आयी थीं और एक विशेषज्ञ की हैसियत से किसी भी नाट्य संस्था से प्रस्तुतीकरण के बाद मिलना एक अपराध था, तो भी सोना बाबू जैसे घनिष्ठ मित्र से बिना मिले घर लौट आना मेरे लिए औपचारिकता का निर्वाह नहीं लगा, बल्कि जिस व्यक्ति ने 'घाटियां गूंजती हैं' का सर्वप्रथम मंचन किया 'कर्मनाशा की हार' का नाट्य रूपांतर किया, यह रेडियो नाटक आकाशवाणी दिल्ली की आज्ञा से राष्ट्रीय महत्त्व का माना गया और चालीस केंद्रों से इसका प्रसारण हुआ । चालीस रुपयों के चैक इन केंद्रों से मेरे और सोना बाबू के पास लगातार आते रहे । विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी के भाई पुरुषोत्तम मोदी ने इसे आकाशवाणी से कई बार सुना और उन्होंने कहा कि डॉक्टर साहब अगर आप अनुमति दें तो यह रेडियो रूपांतर मैं 'छोटे नाटक' नामक पुस्तक में सम्मिलित कर लूं ?" मुझे क्या ऐतराज हो सकता था' "यह आपकी एक अद्भुत कृति है" मोदी साहब ने नि संकोच कहा । मैंने कहा कि "इसके वास्तविक निर्णायक तो पाठक ही होंगे पर आपके एक वाक्य को मैं जेब में रख लूंगा ।" यानी कि यह अद्भुत कृति है । चलिए । कम लोग ऐसा कहते है ।

"बैठा जाय ।" सोना बाबू हक्का-बक्का हो गये ।

मैं जानता था कि उनकी मित्रता निबाहने में मैंने निर्णायक की सीमा तोडी है।

चाय आयी "बैठो, मंजु ।" सोना बाबू ने कहा, "कैसा लगा यह, आधे अधूरे।"

"चाचा जी, आपके नाटक में दो चीजें बहुत खटकीं । एक तो प्रथम पुरुष के रूप में आपकी पोशाक यानी काला पतलून, काला सर्ट, काली टाई और काला फ्लैट हैट । आप एक जासूस बनकर तो आये नहीं थे । सब लोगों ने आपकी पोशाक देखकर जान लिया कि यह कोई अपराध-कथा होगी ।"

सोना बाबू उसे खूब जानते थे । विवश मुस्कराते रहे, "दूसरी बताओ ।" "जो लडके वाला कार्नर है वह एकदम निष्क्रिय रहा । लडका कैलेंडर से काटकर फिल्मी अभिनेत्रियों की तस्वीरें चिपकाया करता है । पूरे माहौल से अलग उसने अपना माहौल बना लिया है, पर ऐसा कुछ उतरा नहीं ।"

"माफ करना मंजु । यह सब मैंने जिस अभिनेता को सिखाया था वह अपनी शादी में चला गया । लाचार एक नौसिखुये से काम चलाना पड़ा ।"

ज्योतिंद्र सिंह सोहल ने बहुत तैयारी के साथ 'अंधायुग' के मंचन का निर्णय लिया । नाटक का मैंने मुहूर्त किया, तैयारियां शुरू हुई ।

सोहल ने कहा था, "गुरुदेव, आप इस नाटक के दो पृष्ठ इस तरह पढ़ें जैसे क्लास में पढ़ा रहे हों ।"

मैंने पढ़ दिये । "क्यो, इसका क्या करेंगे आप ?"

"अपने अभिनेताओ को बार-बार सुनायेंगे कि इस तरह के काव्य नाटकों के पढ़ने की शैली कैसी होती है ।"

महीने भर बाद नाटक के प्रस्तुतीकरण के मौके पर मुझे और मंजु को वी. आइ. पी. लोगों के लिए सुरक्षित सोफे पर बैठाया गया ।

"क्यों मंजु, कैसी लगी यह प्रस्तुति ?"

"जाने दीजिए चाचा जी, चाय-पान के माहौल में कड़ुआहट ले आना ठीक नहीं है ।"

"कुछ तो कहो ।"

"देखिए, आपकी मंच रचना बेजोड़ थी और आपने ओपेन थियेटर की शैली का अच्छा उपयोग किया । पीछे डूबते सूर्य के सामने दो खंभे लगाकर धृतराष्ट्र, गांधारी, संजय को अलग एक कार्नर देकर दो प्रहरियों की परिक्रमा को भी स्वाभाविक बना दिया । पर एक त्रुटि ऐसी हुई है जिसने इस मंचन को बिल्कुल असंतुलित बना दिया । मैं तो तापस दा का नाम सुनकर आयी थी, क्योंकि वे मंच पर प्रकाश की अद्भुत संरचना करने वाले अप्रतिम व्यक्ति माने जाते हैं । वे कोई सिंबालिक प्रतीकात्मक चीज फोकस द्वारा उत्पन्न करेंगे, पर उन्होंने तो गीध की लंबाई-चौड़ाई की अनुकृतियां बनाकर फोकस फेंका तो मंच पर कहीं गीध थे ही नहीं । ऊंचाई से फैंके गये फोकस ने केवल काले-काले विराट् धब्बों से मंच को भर दिया ।"

सोहल ने कहा, "गुरुदेव, मैं आगामी नाटकों का जब भी मंचन करूंगा तो आप चाहे स्वस्थ हों या अस्वस्थ, बिना मंजु के यहां आने का कष्ट किया तो मुझे एक साथ उल्लास और रंजोगम का अनुभव होगा । आप मेरी त्रुटियों की चर्चा कभी करते नहीं और यह लड़की पता नहीं किस जन्म का संस्कार लेकर आयी है कि डिरेका यानी डी.एल.डब्ल्यू.के प्रेक्षागृह में इसकी उपस्थिति मेरे लिए अनिवार्य हो गयी है । तापस दा जैसे विद्युतकर्मी की त्रुटि बताने वाली मेरी भतीजी एक विशेषज्ञ की तरह निमंत्रित रहेगी ।" जब हमें गुरुधाम कालोनी स्थित आवास पर छोड़ने (जन संपर्क अधिकारी) सोहल आये तो मैं रास्ते भर चुप रहा । सोहल मेरी

मानसिक बनावट से परिचित थे इसलिए उन्होंने अंधायुग की प्रस्तुति पर मुझसे कुछ नहीं पूछा । प्रकारांतर से कह दूं कि सोहल एक प्रौढ़ सिख, प्रतिभासम्पन्न कथाकार, रंगमंच के परिश्रमी निर्देशक हैं । उनकी मानसिकता से जुड़ी एक व्यथा-कथा है । यह सब जानकर दिल उदास हो जाता है । मेरे पास 1984 के दिसंबर अंत में यानी इंदिरा जी की हत्या के बाद सोहल आये । उन्होंने आंखें पोंछते हुए कहा, गुरुदेव मंजु दगा दे गयी------ वह इतनी दूर तक ही आपका साथ देने आयी थी । मैंने पूछा, "सोहल, तुम बहुत उदास लगते हो ।" वे बोले, "आपकी अस्तित्ववाद वाली पुस्तक मैं इधर पढ़ रहा हूं । मुझे चारों तरफ से हजारों-हजार आंखें घूरती दिखाई पड़ती हैं । मेरे घनिष्ठ संबंध जो भी हों, वे सब हिंदुओं से रहे हैं । मेरी बहन हिंदू घर में ब्याही गयी है । अचानक मैं इस नगर में 'अजनबी' कैसे बन गया । मैंने किसी भी हिंदू को, गुरुग्रंथ की शपथ लेकर कह रहा हूं, गुरुदेव, कभी अपने से अलग नहीं माना । आपके अलावा यहां कोई भी साहित्यकार नहीं है जिसने सोहल की तीस कहानियों को पढ़कर घोषणा की हो कि तुम नवोदित पीढ़ी के कथाकारों की अगली पंक्ति में प्रतिष्ठापित होगे, आपने रविवार, साप्ताहिक हिंदुस्तान, सारिका, धर्मयुग के संपादकों को पत्र लिखा कि कृपया "अस्वीकार करने के पहले दस मिनट समय निकालकर इस कहानी को पढ़ जायं ।"

केवल रविवार में एक कहानी छपी, और जहां तक स्थानिक 'सोकाल्ड' साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं का संबंध है, सबने सोहल को दुत्कार दिया । अब चालीस कहानियों की मामूली पूंजी को मैं इकट्ठा करके दियासलाई की एक कांटी से सर्वदा के लिए नष्ट कर दूंगा । पर यह अजनबी अपने साथ काम करने वाले हिंदू भाइयों की कुरेदती हुई नजरों का सामना कब तक करता रहेगा । "सोहल, शायद तुमने अपने बच्चों के नाम रखने के लिए ग्रंथी से विनय की होगी और उन्होंने आदर के साथ गुरुग्रंथ साहब का कोई भी पृष्ठ उलटकर उसी में प्रयुक्त किसी शब्द को तुम्हारे बच्चे का नाम रख दिया होगा और अगर कहने की इजाजत दो तो मैं कहूंगा कि तुमने गुरुग्रंथ साहब का कभी पारायण नहीं किया होगा।"

सोहल मुस्कुराये—"सच, पारायण नहीं किया है, गुरुदेव !"

"तो लो एक कहानी ही सुनो ।

पौष शुक्ल सप्तमी संवत् 1723 विक्रमी ।

आज पटना में एक अवतारी बालक ने जन्म लिया । सिक्खों के नवें गुरु तेगबहादुर सिंह के घर में उनकी धर्मपत्नी गूजरी ने बड़ी तपस्या की होगी, तभी ऐसा बालक उनके परिवार का खिलौना बनकर आया । बालक गोविंद राय अभी कुल सात वर्ष के थे । चूड़ीदार सलवार और सफेद कुर्त्ता में लिपटा यह बालक अपने हमउम्र लड़कों के साथ खेलता रहा और एक दिन ऐसा आया कि वह बालक

अपने समवयस्कों का नेता बन गया ।

चौबदार चिल्लाया, "हटो लड़को, रास्ता छोड़ो, झुककर सलाम करो, पटना के नवाब साहब की सवारी आ रही है ।" वह नन्हा बालक जिसके केश केसरिया फीते से बंधे थे, बोला, "तुममें से कोई खड़ा न हो, कोई सलाम न करे, कोई सिर न झुकाये ।"

यह तेजस्वी बालक अपने पिता गुरु तेगबहादुर और मातुश्री गूजरी देवी के साथ गुरुद्वारा आनंदपुर पहुंचा ।

एक दिन सैकड़ों लोगों ने गुरुद्वारा घेर लिया । वे हाथ जोड़कर बैठ गये । "बोलिए तो आप लोग, मामला क्या है गुरु तेगबहादुर ने पूछा ?"

"हम कश्मीरी ब्राह्मण हैं महाराज, हम बड़े संकट में घिर गयें है, औरंगजेब ने ऐलान किया है कि अगर कश्मीरी पंडितों ने इस्लाम कुबूल नहीं किया तो उनका वध कर दिया जायेगा ।"

कश्मीरी पंडित रोये जा रहे थे । विवश होकर, वे सिक्खों के नवें गुरु की शरण में आये थे । बिल्कुल बदहवास । तभी एक किशोर केसरिया साफा बांधे खेलता-कूदता अपने पिता के आसन के पास पहुंचा ।

"ये लोग कौन हैं बाबा, ये इतने घबराये क्यों है, इस तरह रो क्यों रहे हैं?"

"कश्मीरी पंडितों पर संकट के बादल घिर गये है बेटे, औरंगजेब इन्हें मुसलमान बनाना चाहता है । और उसकी आदत है कि जो बात मुंह से निकल गयी उसमें कोई तरमीम नहीं करता वह । यह बड़ा विकट संकट है ।"

"इसका कोई उपाय है ?" बारह वर्ष के किशोर ने पूछा ।

"हां, है ।" उसके पिता ने कहा, "औरंगजेब के प्रचंड धर्म विरोध की द्वेषाग्नि में कोई धर्मात्मा अपनी आहुति दे तो यह संकट टल जायेगा ।"

"आपसे बढ़कर कौन धर्मात्मा है भारत में, आप स्वयं अपनी आहुति क्यों नहीं देते ? गोविंदराय ने अपने पिता की आंखों में झांकते हुए पूछा ।

पिता ने किशोर को वक्ष से सटा लिया । मुख चूम लिया । उन्हें विश्वास हो गया कि गोविंद गुरुगद्दी के सम्मान की रक्षा कर सकेगा ।

संवत्‌,1732 में गुरु तेगबहादुर ने पंडितों की रक्षा के लिए एक उपाय बताया, "पंडितो, आप लोग दिल्ली जाकर औरंगजेब से कहें कि हमारे नेता गुरु तेगबहादुर हैं, यदि वे धर्म-परिवर्तन का प्रस्ताव स्वीकार कर लेंगें तो हम भी इस्लाम कबूल कर लेंगे ।"

औरंगजेब साम, दाम, दंड, विभेद चारों नीतियों पर चलकर तेगबहादुर को तोड़ने की कोशिश करता रहा । पर फक्कड़ गुरु को न तो धन की माया थी, न तो शांति खरीदने की चाहत । वे न तो दंड से डरे, न तो मतभेद पैदा करने वालों की

नीति से । भाई मतिदास को आरे से चिरवाया गया, भाई दयाल को बड़े से कड़ाल में रखकर उबलवाया गया । पाचों शिष्यों की यातनाएं उन्होंने अपनी आंखों के सामने देखी । वे जपजी का पाठ करते रहे । संवत् 1732 में चांदनी चौक में गुरु तेगबहादुर का शीश काट दिया गया । शीशगंज गुरुद्वारा उसी घटना का साक्षी है ।

"बात यह है कि सोहल, मैं जब भी दशमेश यानी गुरुगोविंद सिंह के बारे में कुछ भी पढ़ता हूं तो एक तरह से कहो तो विक्षिप्त हो जाता हूं । बारह वर्ष के किशोर से भारत क्या आकांक्षाएं रखता था । अपने पिता के बलिदान पर उनकी पलकें गीली नहीं हुई । वह युद्ध की तैयारी करने के लिए, पूरी शक्ति से भारतीय अस्मिता की रक्षा के लिए हिमालय के जंगलों में सेनाएं संगठित करते रहे ।

जब मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा कि सिक्ख युवकों ने दशमेश रेजिमेंट बनाया है तो मैं इतना आह्लादित हुआ कि आंखें छलछला आयीं । "देह शिवा वरदान मुझे शुभ कर्मन ते कबहूं न टरौं ।" मैंने सोचा कि अब हरमंदर साहब और दुर्गियाना फिर एक साथ जुड़ जायेंगे ।

हिंदुओं के धर्म को बचाने के लिए खालसा की स्थापना हुई । प्रत्येक हिंदू ने शपथ ली कि परिवार के प्रथम पुत्र को खालसा को भेंट करेंगे । "यह शपथ किसने तोड़ी ?"

स्पष्ट है कि हिंदुओं ने ।

आप परेशान तो रहे होंगे कि बात मंजु की हो रही थी और मैं बहक गया अपने पथ से । नहीं बंधु, मैंने तीन साल तक चंडीगढ़ से मद्रास की धुरी नापी है।

मैंने यह जानकर लिखा है कि हिंदू आत्मालोचन करें ।

पंजाब से तमिलनाडु तक जो एक सीधा मेरुदंड खड़ा है उसे मंजु के साथ कैसे देखा है, कैसे परखा है मैंने, वह आपके सामने आयेगा ।

2

भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र । (अभिज्ञान शाकुंतलम्, 1/16)

बहुत कुछ भुलाना चाहा है । सफलता नहीं मिली है । घाव कभी भरता नहीं, उस पर धूल चढ़ती जाती है । जरा-सा कुरेदने पर टीस जग जाती है।

यद्यपि आज मैं किसी भिन्न मानसिकता में जी रहा हूं । सोलह नवंबर उन्नीस सौ इक्यासी को मेरी बीस वर्षीया एक मात्र पुत्री मंजु बहुत बेचैन थी । रात में उसे बैठने में, लेटने में या दो तकियों को लगाकर उन पर पीठ टिकाकर आराम करने में, यानी किसी भी स्थिति में, पीड़ा ही पीड़ा थी । जो उसका पीछा नहीं छोड़ती थी । मैंने नरेंद्र से कहा कि जैसे भी हो, डॉ. वाजपेयी को बुला लाओ । मैं निश्चिंत था, उनके आने की प्रतीक्षा कर रहा था, क्योंकि ऐसे अवसर कभी आये ही नही कि हमारी प्रार्थना सुनकर डॉ. चंद्रमोहन वाजपेयी न पहुंचे हों । यह ठीक है कि वे हमारे पड़ोसी हैं । एक ही लेन में हम दोनों के मकान हैं । पर डॉ. वाजपेयी और मुझमें एक बड़ा अंतर है । उन्होंने जीवन मे जाने कितने रोगियों को देखा होगा । उनकी जीविका का आधार है रोगी की जांच करके रोग का निदान करना और रोग के अनुसार आवश्यक सलाहें देना । कहावत है कि अगर घोड़ा घास से दोस्ती करेगा तो खायेगा क्या ?

मैं पिछले सप्ताह रक्तचाप से पीड़ित था । अधिक से अधिक प्रातः चार से पांच बजे तक उठ जाता हूं, किंतु उस दिन छह बजे जगा और मुझे लगा कि कोई बहुत बड़ा पत्थर मेरी छाती पर रखा हुआ है । मैं शायद उठ न पाऊंगा । मैंने नरेंद्र से कहा कि देखो वाजपेयी जी है ? वाजपेयी जी रक्तचाप नापने की घड़ीनुमा मशीन के थैले को हाथ में दबाये आ गये, मुझे लगा कि हम बड़भागी हैं कि इस लेन में एक साथ तीन-तीन बहुत विख्यात डॉक्टरों का निवास है । डॉ. देशपाण्डे, डॉ. जालान और डॉ. वाजपेयी ।

"क्या हुआ ?" वाजपेयी जी ने पूछा ।

"लगता है कि छाती पर बहुत बड़ा पत्थर रखा है ।"

उन्होंने रक्तचाप की जांच करके कहा, "170-110 । सारा भार या आपकी

भाषा में कहूं तो बहुत बड़े पत्थर के बोझ का कारण यही उच्च रक्तचाप है ।"
"डाक्टर साहब मैं इक्कीस मई 1985 को आठ घंटे बेहोश रहा, तब से जाने क्या हो गया है कि मेरा रक्तचाप स्थिर नहीं रहता । अगर दवा न लूं तो पूरा शरीर तपने लगता है और लूं तो चक्कर आने लगते हैं ।"

वाजपेयी मुस्कराये—" ऐसी स्थिति में आप डेढ़ साल से पीड़ित हैं । अपने आप एडलफेन या एमडोपा लेकर सोचते हैं कि रक्तचाप स्थिर हो जायेगा । यह आपके दिमागी टेंसन का नतीजा है । पिछले दो वर्षों में रक्तचाप को स्थिर करने वाली दो-तीन अचूक दवाएं निकली हैं, जिन्हें न आप जानते हैं न आपके विश्वविद्यालय के डॉक्टर । कृपया आप सात दिन तक इस गोली को लेकर देखें कि कैसा प्रभाव पड़ता है ।" मैंने डॉक्टर वाजपेयी की जेब में एक हरा पत्ता डाल दिया। उन्होंने घूरकर देखते हुए कहा, "क्या आप यह चाहते हैं कि मैं कभी न आऊं ?" उन्होंने नोट लौटा दिया ।

बहरहाल डॉ. सी. एम. वाजपेयी जी आये । उन्होंने बहुत देर तक ब्लडप्रेशर, हृदय की धड़कनों को देखकर विचार करके कहा, "मंजु को कल लंग्स वाले विभाग में ले जाइए और किसी अनुभवी डॉक्टर से चिकित्सा कराइए । मैं एक गोली दे रहा हूं, खिला दें, उसे आराम हो जायेगा ।"

मैंने अपने पाठकों के सामने कह दिया कि मैं सुपठ गंवार हूं । इसे आप सीधे अभिधार्थ में पाप स्वीकृति या कन्फेशन समझना चाहें तो समझ लीजिए । मेरे पुत्र नरेंद्र चूंकि आधी रात तक अपनी परीक्षा की तैयारी करते हैं, तो जाहिर है कि वे देर से जागेंगे । वे सोये हुए थे । मेरे ठीक बगल के कमरे में पलंग पर लेटी मंजु सिसक रही थी । मैं इतना सेंस्टिव प्राणी हूं कि इस तरह की सिसकियों को झेल नहीं पाता । मैंने गुरुधाम की चौमुंहानी से एक रिक्शा बुलाया और डॉक्टर श्रवण तुली के फ्लैट पर पहुंचा ।

श्रवण तुली और उनकी पत्नी निर्मल, मेरे जीवन में काशी विश्वेश्वर के प्रसाद के रूप में आये । थोड़ा पुण्य शेष रहा होगा कि निर्मल मेरी शोध छात्रा बनी । मैंने प्रथम परिचय से आज तक निर्मल को कभी भी शोध छात्रा मात्र नहीं समझा । वे मेरी मित्र भी हैं, परामर्शदात्री भी । नंबर 23 की दो-मंजिले से उसने खिड़की से झांक कर देखा । मंजु को देखते ही श्रवण के साथ सीढ़ियां लांघती निर्मल आकर खड़ी हो गयीं ।

"क्या बात है सर, आप इतने उदास क्यों हैं ?"

"मैं इस सबोधन से बहुत घबराता हूं निर्मल, इसलिए तुम मुझे मात्र डॉक्टर साहब ही कहो ।" वह मुस्करायी और चुप हो गयी ।

मैंने प्रो. श्रवण से रात भर की पूरी स्थिति विस्तार से बतायी । उन्होंने मंजु को हल्की थपकी लगायी और अपने फ्लैट में चले गये । कपड़ा बदलकर वे अपने

स्कूटर के पास पहुंचे और रिक्शा और स्कूटर अस्पताल की ओर चल पड़े । बड़े तुली को मैंने भी श्रवण की तरह बड़ा भाई मान लिया था । और वे जब कभी-कभी जिद करते कि चलिए अपनी कार से आपको गुरुधाम पहुंचा दूं तो मैं बड़े पशोपेश में पड़ जाता था । प्रो. तुली कार चलायेंगे और मैं पीछे की सीट पर आसन जमाये बैठा रहूंगा । ऐसी स्थितियों को मैं ईश्वरीय विडंबना मानता हूं । मेरी लाख विनतियों को अस्वीकार करते हुए (काशी हिंदू विश्वविद्यालय के चिकित्सा संस्थान के निर्देशक) गुरुधाम पहुंचकर, मुझे मकान के दरवाजे पर छोड़कर लाख प्रार्थनाओं के बावजूद चाय पीने के आग्रह को ठुकराकर लौट आते । इसीलिए उनके पास मैं बिना श्रवण को लिये कभी गया नहीं । मैं इतना भावुक हूं, यह कंफेशन मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूं कि मैं बड़े से बड़े व्यक्ति की सहायता को ठुकरा देता हूं और सहज ढंग से व्यवहार करने वाले छोटे से छोटे व्यक्ति के अनुरोध को स्वीकार कर लेता हूं । बड़े तुली न तो कभी बड़प्पन दिखाते हैं न छुटपन । अब मैं क्या करूं, इसे आज तक समझ नहीं पाया । सोनारपुरा की अंधेरी गली में रहनेवाले चित्रकार देवप्रकाश को ढूंढ़ते स्वयं चल पड़ता हूं और आश्चर्यचकित देव जब कहता है, "गुरुदेव, आपने एक लोकल कार्ड ही भेज दिया होता कि मैं संध्यावेला में आ रहा हूं तो मैं चौमुंहानी पर खड़ा रहता और आपको टेढ़ी-मेढ़ी गलियों में भटकना नहीं पड़ता ।" मुझे साथ लेकर वह एक पक्के-अधपक्के मकान के दो तल्ले पर स्थित कोठरी में पहुंचा । मैंने कहा कि चाय आदि की औपचारिकता छोड़ो और अपने नये चित्रों को दिखाओ । वह सारे कनवेस मेरे सामने रखता जाता, मैं देखता जाता, न कमेंट न सलाह, कुछ भी नहीं, एक सन्नाटा । उसने पूछा— "कैसे लगे गुरुदेव, आपको ये चित्र ?"

"मैं समझ नहीं पाया शायद, पर तुम्हारे समूचे चित्रों में सिर्फ एक रंग का आधिपत्य है वह है काला, एंश (राख के रंग) भी हैं । कहीं-कहीं । क्या तुम्हें इस अंधकार में ज्योति की एक भी चिनगारी नहीं दिखी । तुम इतने पराजित-असहाय और उदास क्यों हो ?"

उसने कहा, "नियति ।"

"सुनो देव, तुम्हारी बीसियों चिट्ठियां हैं मेरे पास । तुम जब पहली बार कामा कोठी में आये तो कमरे में प्रविष्ट होते ही भद्रकाली का चित्र टूटकर जमीन पर गिरा और छोटे-छोटे शीशे के टुकड़े मेरे कमरे में फैल गये । उस समय भय के मारे तुम्हारा चेहरा पीला हो गया । मैंने कहा कि यह कोई अशुभ-सूचक घटना नहीं है । गौरैया पंछियों का गर्भाधान पूर्ण हो चुका है । वे अपने बच्चों के लिए घोंसला बना रही हैं । चित्र के पीछे लगी सुतली टूट गयी । तुम चिंता मत करो। भद्रकाली मां हैं। वे मात्र दंड देना ही नहीं, कृपा करना भी जानती हैं। क्या तुम प्लेन-चेट में विश्वास करते हो । क्या तुमने मरे हुए लोगों की प्रेतात्माओं को

बुलाकर उनसे अपनी स्थिति के बारे में जिज्ञासा व्यक्त की है ? यह बहुत खतरनाक खेल है देवू--------।"

वह मेरे चरणों में गिर पड़ा, "गुरुदेव, मैंने न सिर्फ यह गलती की, बल्कि अनेक प्रेतात्माओं के चंगुल में फंस गया हूं । आपने कैसे जाना... ?

"खैर चलो, अगला चित्र निकालो ।"

"अगला चित्र छोड़िये, मुझे बचा लीजिये आप, बचा लीजिए ।" वह धारासार रोये जा रहा था ।

"पागल हो तुम । मैं क्या भूत भगाने वाला ओझा हूं । तुमने क्या मुझसे पूछा था कि यह खतरनाक खेल खेलता रहूं या बंद कर दूं । अब प्लेनचेट पर किसी ऐसी आत्मा को ढूंढो जो तुम्हें बचा ले । देवू, यह धूर्त-विद्या है । मैंने कभी इसमें दिलचस्पी नहीं ली । यद्यपि मैंने स्वामी अभेदानंद की 'लाइफ बियंड डेथ' को अच्छी तरह पढ़ा है । और मदाम ब्लातोवस्की की 'आइसिस अनवेल्ड' भी है मेरे निजी पुस्तकालय में । पर मैंने इस समूचे क्रियाकलाप को" "होक्स" मानकर ठुकरा दिया है । मैं काले जादू, टोने-टोटके में विश्वास नहीं करता । प्रेतात्माओं को बुलाने वाली माध्यमों (मीडियम्स) को मैं ठग-विद्या का आधार मानता हूं । ये नाना प्रकार से कभी बेहोशी का प्रदर्शन करते हुए, कभी चेहरे को रक्तशून्य बनाकर, गर्दन को निर्जीव की तरह झूलती हुई दिखाकर तरह-तरह की आत्माओं को बुलाती हैं और अभेदानंद की उपर्युक्त पुस्तक मे दर्जन भर ऐसे फोटो चित्र छपे है जिनमें मीडियम के मुख या मस्तक के सामने अवतरित प्रेतात्मा का पूरा चेहरा दिखाया गया है । योगानंद की "आटोबायग्राफी ऑफ ए योगी' में जाने कितने आध्यात्मिक योगियों के वर्णन हैं, जो मुझे खींचते तो हैं, पर तर्क पर खरे नहीं उतरते । मैं जानता हूं कि त्राटक-सिद्ध कोई भी पुरुष या स्त्री आपके नेत्रों में त्राटक के माध्यम से अंतःकरण तक का दृश्य देख सकती है, पर उसमें शताब्दियों से हिमालय में रहने वाले हिंदी भाषी बाबा, लाहिड़ी महाशय, युक्तेश्वर आदि जिस तरह की अलौकिक क्रियाएं करते हैं वह जाने क्यों समझ के परे की चीज लगती है।"

"मेरे लिए क्या आज्ञा है गुरुदेव ?" देवू उसी प्रणिपात मुद्रा में बोला ।

"भई क्या बताऊं तुमको, जो अपने परिवार के किसी सदस्य के साथ घटी घटना के आघात को सहने की शक्ति नहीं रखता, वह तुझे कैसे उबार पायेगा । मेरे दो बच्चे जुलाई 1953 में एक ही दिन हैजे से मर गये । क्यों मरे ? लोग कहेंगे तुम्हारे पाप के कारण । मैं ऐसी धारणाओं के विरुद्ध कुछ न कहकर 'कंफेशन' पाप-स्वीकृति 'का नकाब ओढ़ लेता हूं ।

वह भी श्रावण ही था— सन् 1953 का । मेहंदी की महक, झूलों और रसबुंदियों

में भींजना, कितना अच्छा लगता है यह सब । चारों ओर जल से सिंचित भूमि, हरियाली की कालीनों पर सीधे आकाश से उतरता वर्षा का महान राजा । जल के सीकर से भींगे मतवाले हाथी पर चढ़ा हुआ, चमकती हुई विद्युत रेखा के ध्वज फहराता, बादलों की गर्जन से अपने आगमन की सूचना देने वाले मर्दल (मादल) को बजाता, प्रेमी जनों का अत्यंत प्यारा पावस आ गया ।

ऐसा नहीं कि मेरे जीवन में इस तरह का श्रावण आया ही नहीं, कई बार आया, वर्षों अतिथि बनकर विश्राम करता रहा ।

इसी श्रावण ने 1953 में मेरी दो संतानें छीन लीं, जिसके लाल-लाल कपोलों को देखकर गिरिजा तिवारी और अखिलेश्वर उपाध्याय कहा करते थे कि यह अरुणाभा सीधे अपने पिता से मिली है ।"

"इसीलिए पिता के चेहरे पर लाली कम हो गयी है ।" अखिलेश्वर व्यंग्य करते-हंसते, तब तक चिरौंजी (चिरंजीव) गिरिजा तिवारी की गोद से कूदकर अपने समवयस्कों की भीड़ में खो जाता । वंशानुगत संस्कारों को सिर पर ढोने वाले मेरे जैसे गंवई नवयुवक का अपने बच्चे को गोद लेना भी अपराध माना जाता, खासकर संयुक्त परिवार में । इसलिए मन मसोसकर जड़वत् खड़ा रहता।

मुझे याद है कि मेरे गांव के श्री गुप्तेश्वर सिंह की कन्या का विवाह था । बारात कुरहना ग्राम से आयी थी । शाम को द्वारपूजा के बाद जनवासे में बारात की महफिल शुरू हुई । बारातियों की ओर से सूखे मेवे वितरित होने लगे, गुलाबजल भरी पिचकारियां सीधे आंखों को लक्ष्य करके फुहारे बरसाने लगीं । इसके बाद एक बड़े थाल में पान पेश किये गये । चिरौंजी एक पान खा चुका था और दूसरा उठा ही रहा था तभी मैंने एक थप्पड़ लगाया । वह रोते हुए घर चला गया । मेरी दादी मां ने मेरे स्थान पर उसे अब अपना सर्वाधिक प्रिय पात्र बना लिया था । उन्होंने जाने क्या-क्या देने का वादा किया, रोते हुए चिरौंजी को मनाने के लिए तरह-तरह के खिलौनों की चर्चा होती रही।

उसकी केवल एक टेक थी, "बाबूजी काहे मरलं हंऽऽ।"

मेरी पत्नी ने कहा, "आवे दा, आज मइया (दादी मां) बतइहैं ।"

मैंने मार तो दिया, पर जी उचट गया । जिसे परिवार और समाज के डर से कभी गोद में नहीं उठाया , बहुप्रशंसित अरुणाभ कपोलों का चुंबन कर वक्ष से नहीं लगाया, जिसके लिए कोई कपड़ा, कोई खिलौना नहीं लाया, वह 'बाबूजी' नामक प्राणी का थप्पड़ खाकर क्या सोच रहा होगा । मैं आंगन में पहुंचा तो चिरौंजी की चिरौरी हो रही थी । सिर्फ एक प्रश्न ।

"बाबूजी काहे मरलं हं--------।"

मुझे देखते ही वह चुप हो गया ।

"काहे मरल ह हो, चिरौंजी के ?" दादी मां बोलीं ।

"जब एक पान खा चुका था तो दूसरा क्यों उठाया ?"

"ऊ हम अपने खातिर थोड़े लेत रहलीं ।"

"तब ?"

"ऊ तो सिरिया खातिर लेत रहीं ।" सिरिया हमारा चरवाहा था।

"अच्छा भाई अब कभी नहीं मारूंगा ।" मैंने कपोलों पर थपकी दी और वह मत्त मयूर की तरह मेरे चारों ओर घूम-घूम कर नाचता रहा । फिर भी उसे गोद में नहीं उठाया । उठाने का साहस नहीं हुआ ।

और वह 1953 में अपने अपराधी 'बाबूजी' को छोड़कर चला गया । वह अपने साथ अपनी एक वर्षीया बहन को भी लेता गया । ताकि कोई न रहे इस अपराधी बाप के साथ जिससे वह मन बहला सके ।

डॉ. इकबाल नारायण को लोगों ने अपनी-अपनी दृष्टियों से देखा होगा । कुछ लोग उन्हें काइयां, कायस्थ बुद्धि का छल-छद्म करने वाला धूर्त, हर समस्या को *आगे टसका देने वाला नीतिज्ञ तथा अपने परिवार के लाभ के लिए तरह-तरह की* साजिशें करने वाला चरित्रहीन व्यक्ति मानते थे ।

भूतपूर्व कुलपति से मैं कई बार मिल चुका हूं । उन्होंने हमेशा मेरे सम्मान और प्रतिष्ठा को बरकरार रखने का प्रयत्न किया है । चाहे वह प्रोफेसरों की नियुक्ति का मामला हो, पांच-पांच सालाना बढ़ोत्तरियों की बात हो, वे हमेशा प्रयत्न करते रहे कि मेरे निकट साहित्यकारों का एक ऐसा संगठन बन सके जो उन्हें बौद्धिक समर्थन दें । बौद्धिकों के योगदान को महत्त्व देने वाले प्रशासन के लोग यह भूल जाते हैं कि जिस भ्रष्ट वातावरण की उपज प्रशासन है, उसी की उपज बौद्धिक भी है।

16 नवम्बर 1981

जब श्रवण के साथ मैं और मंजु अस्पताल पहुंचे तो पता चला कि डाक्टर झा छुट्टी पर हैं । श्रवण ने एक मित्र डाक्टर से मेरा परिचय कराते हुए कहा, "सामने हैं अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के लेखक-------"

मैंने कहा, "श्रवण की यह आदत है कि बिना वजह मेरी अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा करते हैं । मैं अपनी बीमार बेटी को लेकर आया हूं । वह रात भर इतने कष्ट में थी कि एक मिनट के लिए भी उसे आंखें झपकाने का अवसर नहीं मिला । इसे सांस लेने में तकलीफ होती है । न लेट पाती है, न बैठ पाती है । सारा परिवार कल रात भर जगा रहा क्योंकि दमघोट (शफोकेशन) सन्नाटे में इसकी चीख कान में जलती शलाका की तरह हमें बेधती रही।"

"बैठ जाइए आप लोग । आओ बेटी !" मंजु इस डॉक्टर के साथ पर्दे के पीछे वाले हिस्से में गयी । कोई पांच मिनट हुए होंगे, वह बाहर आ गयी।

"क्या कहा डॉक्टर ने ?"

"उन्होंने कहा कि मैं अभी तुम्हारे अंकिल और पापा के पास आ रहा हूं । तुम रोकना उन लोगों को।"

हम प्रतीक्षा करते रहे । डॉक्टर महोदय आये । बोले, "बेटी, तुम यहां रुको, हम अभी आते हैं ।" डॉक्टर ने कहा कि "फेफड़ों में कोई गड़बड़ी नहीं है । मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि आप लोग तुरंत हृदय रोग कक्ष में इसे ले जाइए। किसी अनुभवी डॉक्टर को जानते हैं डॉक्टर सिंह ?"

"हां एक तो मेरे परिचितों में प्रो. सोमानी ही हैं।"

"आज तो डॉ. सोमानी का टर्न ही है । उनसे कहिए कि अविलंब लड़की को अटेंड करें ।" मेरी और श्रवण की भुजाओं के सहारे वह हृदयरोग कक्ष में पहुंची । मैं परिचित से परिचित डॉक्टर के यहां मरीजों को देखने के जो नियम बनाये गये हैं उन्हें तोड़ना अपराध मानता हूं । संभव है कि मंजु से भी ज्यादा संकट में पड़ा कोई दूसरा व्यक्ति हो जो इस पंक्ति में खड़ा अपने टर्न की प्रतीक्षा कर रहा हो । वैसे प्रो. श्रवण भी मेरी ही विचारधारा को मानते हैं, पर वे किसी तरह प्रो. सोमानी के पास पहुंचे । मुझे नहीं मालूम कि सोमानी से उनकी क्या बातचीत हुई, पर एक जूनियर डॉक्टर ने पुकारा, मंजु श्री !" मंजु को हाथ का सहारा देकर उस क्यू को लांघता मैं प्रो. सोमानी के कमरे में दरवाजे पर रुक गया । "आइए डॉक्टर साहब!" सोमानी ने देख लिया था । मैं श्रवण के पास जाकर खड़ा हो गया । डॉ. सोमानी अविलंब मंजु को लेकर पर्दे के पीछे गये, उन्होंने उसे मेज पर सुला दिया। वे बड़ी देर तक हृदयगति को देखते रहे । ब्लडप्रेशर की जांच जूनियर डाक्टर शैलेंद्र कर रहे थे । सभी लोग पर्दे से बाहर आये।

"डॉ. सिंह, आप मेरे वार्ड के बेड नंबर दस पर इसे सुला दें और पुर्जा-पुर्जी के चक्कर में मत फंसियेगा । मैंने डॉक्टर त्रिवेदी को लिख दिया है कि अगर बेड नंबर दस का मरीज जिद्द करे तो उसे बाहर निकाल दीजिए । क्योंकि वह पूर्ण स्वस्थ हो चुका है और उसे मैंने कहा था, कल ही बेड खाली करने की आज्ञा दे दी थी।"

डाक्टर शैलेंद्र चलने में थोड़ा लंगड़ाते थे । उनकी पत्नी हिंदी में पी-एच. डी. कर रही थीं, किसी अन्य विश्वविद्यालय में, उनका विषय सूर साहित्य से ताल्लुक रखता था और मैंने उन्हें सूर पर लिखे दो शोध-प्रबंध दिये थे, जिनसे उनकी पत्नी को पथ और पाथेय दोनों मिल गये ।

वे हम लोगों के साथ हृदय-रोग वाले वार्ड में पहुंचे और डॉक्टर त्रिवेदी को

सोमानी साहब की चिट दी ।
"वह अभी-अभी गया है, शैलेंद्र । पांच मिनट रुकिए आप लोग । मैं इस बेड के गद्दे की खोली चादर, तकिये का गिलाफ, सब बदलवा दूं तो इस पर मरीज को लाइयेगा।" डाक्टर त्रिवेदी ने कहा ।

सब कुछ स्वच्छ धवल लगने लगा । मंजु ने राहत की सांस ली । उसे लिटा दिया गया । "डॉक्टर साहब !" डॉ. श्रवण ने कहा, मुझे विभाग पहुंचने में देर हो गयी । अब सारा प्रबंध हो गया, मैं चलूं ?"

"अच्छा !" मैंने और श्रवण ने हाथ मिलाये और कोई हिंट (संकेत) [illegible] वे चले गये ।

19 [illegible]

मंजु शांति से सोयी थी, बाहर कुछ छात्र खड़े थे । मैं 10 नंबर के बेड के [illegible] रखी बेंच पर बैठ गया । मेरा पूरा अंतःकरण, पूरा मनोमस्तिष्क एकदम [illegible] भीतर के पंछी ने पंख फैलाये, स्मृतियों ने आकाश में उड़ान भरना शुरू कर [illegible] किशोरी रमण बालिका महाविद्यालय में एक हिंदी प्राध्यापिका का पद [illegible] उस स्थान के लिए किसी योग्य प्राध्यापिका को चुनना था । मैं [illegible] बतौर विशेषज्ञ आमंत्रित किया गया । यह सब कुछ तो यात्रा का बहाना था । मुझे यथाशीघ्र चयन का काम पूरा करके वृंदावन जाना था । "[illegible] वृंदावन" किस मुद्रा में किस अशिथिल समाधि में यह वाक्य उभरा होगा । इसकी पृष्ठभूमि में जिस श्लोक का नाम लिया जाता है वह तो मौलिकता के [illegible] पूर्णतः धंसा हुआ था । उसे आध्यात्मिक पीठिका पर प्रतिष्ठित तो महाप्रभु चैतन्य ने ही किया । "वही रेवा का तट है, वही प्रौढ़ कदंबानिल है, वही तुम हो, वही मैं हूं किंतु कितना बड़ा अंतर आ गया है । महाप्रभु ने इस अंतर को, [illegible] को "वृंदावन" से जोड़ दिया । वही वृंदावन मुझे खींच रहा था । मैंने [illegible] और वृंदावन आ गया । 'गंभीरा' पहुंचा तो पता चला कि श्रीवत्स गोस्वामी कहीं घूमने गये हैं । उनकी पत्नी ने मुझे देखा और कहा—"बैठ जाइए । वे दस मिनट में आ जायेंगे ।" दूसरे दिन ब्रज यात्रा । सारे पवित्र स्थलों, ह्रदों, [illegible] जाग्रत स्वरूपों, विभिन्न स्थानों, जहां मुरलीधर ने अपनी लीलाएं रचायी थीं, का प्राकट्य किसने किया । वंगीय गोस्वामियों ने । हमने गोवर्धन पार किया, [illegible] गंगा में एक डुबकी लगाने का मन हुआ, पर मुझे शाम को गंगा-यमुना से [illegible] था, मैं समूचे क्षेत्र को तत्रापि बरसाने में, 'श्री जू' के दर्शन के लिए [illegible] गोवर्धन श्रृंखला की छोटी-छोटी डूंगरियों से टकराकर एक [illegible] खींचने लगी । अग्नि में डालकर जिन वस्त्रों की पवित्रता [illegible]

वस्त्रों को जो धारण करती है, उस तप्त कांचन शरीर की आभा मन को मोहित कर लेती है। पैरों में बंधे पायल रुन-झुन कर रहे हैं। कौन बुला रहा है, थोड़ी देर बाद आत्मानंद जी यानी श्रीवत्स गोस्वामी पधारे। अपनी प्रतीक्षा में बैठे इस जन को देखकर बोले "आइए, गुरुदेव" आप को वहां ठहराऊंगा जहां राजे-महाराजे ठहरते हैं।"

"क्षमा करें महाप्रभु, राजों-महाराजों के मृत शरीर की 'ममीज' को उठाकर घूमना भले ही अच्छा लगता हो आपको किंतु यह जन तो ऐसे लोगों को, जो अपने को महामंडलेश्वर, सर्वतंत्र-स्वतंत्र आदि तथा जाने क्या-क्या कहते हैं, पैरों से ठुकरा देता है।"

आत्मानंद जी मुस्कराये और अंतःप्रासाद में चले गये। एक तीखी झंकार पहाड़ियों, करील कुंजों, चीरहरण के वट के निकट बहती यमुना की कलकल ध्वनि में ध्वनि मिलाती चारों तरफ अनुगुंजित हो रही थी।

सखि हे हमर दुःखक नहीं ओर
ई भर बादर, माह भादर सून मन्दिर मोर

वर्षा की डरावनी बादलों से ढंकी रात, भाद्र मास की विद्युत की तड़प और इधर मेरे घर में सन्नाटा। प्रोषितपतिका कह लीजिए, विरहिणी कह लीजिए, मुझे तो यह चक्रवाक मिथुन की बिछुड़ी जोड़ी की चीत्कार की तरह लग रही था। मैं अथाह मौन में डूब गया। क्या गौर तेज श्याम के अभाव को पूरा करने के लिए मचल रहा है। यह किस शून्यता की बात है। क्यों तेरा मंदिर सूना-सूना है मां, क्या तुमने स्वयं यह नहीं कहा था कि प्यारे श्याम सुंदर तुम्हीं बताओ, अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिए किस ब्राह्मण को भोजन देना चाहिए। भगवान ने कहा—"महर्षि दुर्वासा को।" "पर यमुना तो लबालब भरी है। दुर्वासा ऋषि का आश्रम यमुना के दूसरे तट पर है, हम कैसे पहुंचेंगे उनके पास।"

तुम लोग यमुना जी से कहना, कि हमारे श्यामसुंदर अगर पूर्ण ब्रह्मचारी हैं तो हमें राह दो। तत्क्षण तुम्हें यमुना जाने का मार्ग प्रदान कर देगी।"

जैसा बताया गया, वैसा ही आचरण गोप सुंदरियों ने किया। दुर्वासा ने भोजन के बाद गोपियों से कहा कि तुम जब यह कहोगी कि दुर्वासा केवल दूर्वा का भोजन करते हैं तो यमुना राह दे देगी।

हमारे साथ विहार करने वाले कृष्ण ब्रह्मचारी हैं और अभी-अभी इतने पकवान का भोजन करने वाले दुर्वासा केवल दूब-भक्षण करने वाले हैं, यह सब क्या है। गोपियों के इसी प्रश्न की तुम प्रतीक्षा कर रही थी। तुम लोग दुर्वासा को भोक्ता और कृष्ण को विषयासक्त समझती हो। यह सब गलत है। श्रीकृष्ण सब

में रमण करने वाले, सूर्य मंडल में विराजमान हैं जिनको ठीक-ठीक वेदज्ञ भी नहीं जानते, वे ही भगवान तुम्हारे स्वामी हैं । फिर उन्हें ब्रह्मचारी कहना, झूठ कैसे हुआ।

गांधर्वी, इतना कहकर तू मुस्करायी होगी क्योंकि कृष्ण के सही स्वरूप का ज्ञान तेरी कृपा के बिना असंभव है । अधरोष्ठ को ताम्रपर्णी के मोतियों की तरह चमकते दांतों से दबाकर तुमने कुछ सोचा होगा । संवित् और संधिनी दोनों को वशीभूत रखने वाली तुम्हारी शरारत भरा चेहरा केवल उन्होंने देखा होगा जो तुम्हारी भंगिमाओं को जानते हैं । देखना भी चाहता हूं । सारी शक्तियां तुम्हारे अधीन हैं यहां तक कि तुम्हारा प्रेमास्पद तुम्र किशोरी के चरणों में प्रतिदिन शीश झुकाता है ।

बरसाना सितंबर 1980

राधा मंदिर तक जाने के लिए सैकड़ों सीढ़ियां बनी थीं । मैं अत्यंत त्वरा के साथ सीढ़ियों पर सीढ़ियां पार करता चलता जा रहा था । "अभी आधी यात्रा और है गुरुदेव" श्रीवत्स पसीने से डूबे मेरे ललाट को देखकर बोले, "चलते रहिए बीच में विश्राम भक्त कभी करते नहीं ।" सीढ़ियों पर सीढ़ियां लांघता जब मंदिर के सामने पहुंचा तो मैं थककर चूर-चूर हो गया था । ब्लडप्रेशर की मुझे चिंता नहीं थी । *मेरा सारा व्यक्तित्व शून्य में डूब गया था । लगता था मैं रिक्त हूं । एकदम शांत---------*

"मंजु तुम्हारा साथ छोड़ देगी, वह मौत की ओर जा रही है ।" यह ध्वनि क्या थकान से जड़ीभूत मस्तिष्क की उपज है ? या मेरे अवचेतन में दबी कोई पंक्ति है जो मुझपर हावी होना चाहती है ? मैं क्षण मात्र खड़ा रहा । मैंने इस पंक्ति को निराधार कहकर खारिज कर दिया । श्रीवत्स ने कहा—" चलें गुरुदेव, दर्शन कर लें । मैं कठपुतली की तरह जो-जो कहा गया, करता रहा ।

मैं यथार्थवादी हूं । ऊपर कह चुका हूं कि मैं हर विपत्ति सहने के लिए तैयार हूं । जब मंजु 19 दिसंबर 84 को मुझे छोड़कर चली गयी तभी मुझे अभिज्ञान शाकुंतल की पंक्ति का सही अनुभव हुआ । भवितव्यता के द्वार सर्वत्र खुले हैं । वह किसी न किसी द्वार से अपने आने की सूचना दे देती है ।

मैंने आपसे कहा कि अघटित जब तक अघटित है, हमें कभी उस चीज पर सोचने की जरूरत नहीं होती कि वह 'समथिंग' है क्या । मगर उस रिक्तता की स्थिति में जब मस्तिष्क और मन सब शांत हों, एक थकान और हांफते हुए आदमी के सन्नाटों भरे हृदय में अगर शून्य के भीतर से कोई कहता है कि मंजु तुम्हें छोड़कर चली जायेगी तो इस स्पष्ट भविष्यवाणी को, विपत्ति की सूचना को गलत मानने के पहले कई बार सोचना होगा, एक साल पहले घटित इस देव-वाणी का अपलाप कैसे करूं ! पर मैंने किया । इसे अंधविश्वास कहकर दृढ़ता के साथ बबूल के कांटे को खींचकर लहूलुहान अपने ही हृदय को मैं देखता रहा । यह 'होक्स' है, और अब मैंने उसे चिता की एक मुट्ठी धूल की तरह मस्तक पर भस्म की तरह लगा लिया है।

3

न साम्परायः प्रतिभाति बालम् (कठोपनिषद् 1/2/6)

नचिकेता ने यमराज से कहा—" जो बालबुद्धि के अभिमानी लोग हैं जिनके चित्त में यह प्रश्न ही नहीं उठता कि सांपराय क्या है । सांपराय, अर्थात् मृत्यु और मृत्यु के बाद की स्थिति ।

19 नवंबर 1981

पूरा हृदयरोग का वार्ड, हिंदी विभाग के छात्रों-छात्राओं, सहयोगियों से भरा हुआ था । मैं शांत था । रात्रि के लगभग 8 बजे थे । डॉ. सोमानी गर्दन में आला लटकाये इधर से उधर, उधर से इधर, परिक्रमा में डूबे थे । मेरे कान में कोई कह गया कि अब दृश्य दुःखांत होने ही वाला है । मंजु के हृदय से एक विचित्र प्रकार की ध्वनि निकल रही थी । (हार्ट मरमरिंग) अर्थात् सूं-सूं की आवाज, जिसे सुनने के लिए सभी जूनियर डॉक्टर्स उसके हृदय की परीक्षा कर रहे थे । मुझे बुरा भी लगा और इच्छा हुई कि प्रो. सोमानी से कह दूं कि मौत जब सामने खड़ी है तो ...शाय को देखने के लिए उत्सुक पंछी को प्रयोगशाला की वस्तु न बनाएं । मैंने धीरे से नरेंद्र को कहा, "ऊर्ध्व सांस चल रही है, संभालो अपने को ।" उसने तो संभाल लिया अपने को पर मेरी आंखें डबडबा आयीं । रात के दस बजने ही वाले थे कि मैं और नरेंद्र उसे अपनी भुजाओं में लपेटे रहे ।

"बाबूजी !" वह धीरे से बोली," मुझसे अब सहा नहीं जाता।"

"मैं हारे जुआरी की तरह सोमानी साहब के पास पहुंचा, "प्रो. सोमानी, क्या इस अंत को थोड़ी देर टाला नहीं जा सकता ?"

"सारी, डॉ. सिंह !" सोमानी साहब की आंखें नम हो गयीं । तभी डॉक्टर त्रिवेदी दौड़ते हुए सोमानी साहब के पास पहुंचे । "मैं खून की रिपोर्ट ले आया हूं । आप देखें सर, यह कुछ और ही केस है।"

अन्यमनस्क भाव से प्रो. सोमानी ने रिपोर्ट देखीं । ब्लड यूरिया चार सौ के

लगभग था । वे मंजु के पास आये । कामपोज की एक सुई तुरत-----" शैलेंद्र ने सुई लगायी । मैंने नरेंद्र से कहा, "घबराने की बात नहीं है । इसके गुर्दे कुछ खराब स्थिति में हैं । सारा रक्त 'ब्लड यूरिया' (रुधिर मिह) से दूषित हो चुका है । डॉ. सोमानी ने कहा, अगर शीघ्र डायलसिस का प्रबंध हो तो शायद कुछ चमत्कार हो जाये । लोग डॉ. आर. जी. सिंह के यहां दौड़े । कौन-कौन लोग गये, मुझे मालूम नहीं। डॉ. राणा गोपाल तुरंत चल पड़े । वे हृदय रोग-कक्ष में आये । रक्त की जांच रिपोर्ट देखी।

"इसे तुरंत नेफ्रोलोजी में लाइए", उन्होंने कहा कि आज दोनों सिस्टर्स भी छुट्टी पर हैं । जब तक दो नर्सें न हों, डायलसिस कैसे होगी।"

डॉ. शैलेंद्र बोले, "मैं और डॉक्टर त्रिवेदी रात भर वहां ड्यूटी देंगे ।" दवाओं की सूची लेकर नरेंद्र और श्रीकांत मेडिकल दुकानों की ओर दौड़े । शुक्र था कि दो-तीन दुकानें खुली थीं।

मैंने तो डॉ. आर. जी. सिंह को नियति द्वारा प्रेरित देवदूत मान लिया । पेरीटोनियल डायलसिस शुरू हुई । नाभि के नीचे उदर छेदन करके स्टैंड पर लटकी ग्लूकोज वाटर की बोतल से नली पेट के भीतर जाती है और गुर्दे की नली से जुड़ जाती है, वह गंदा तत्त्व बाहर करती जाती है जिसे डॉक्टरों की भाषा में 'डायलिजेट' कहते हैं।

नेफ्रोलोजी कार्यालय के सामने बहुत सुंदर और स्वच्छ बड़ा-सा कक्ष है जिसमें बैठने की जगह नहीं बची । चारों ओर एक वृहद परिवार था जो उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रहा था कि दो घंटे बाद ऊंट कौन-सी करवट बदलता है।

"डॉक्टर साहब !" शैलेंद्र ने पुकारा, "आपको मंजु बुला रही है।"

मैं जूता पहने ही कक्ष में प्रवेश करने जा रहा था कि डॉ. शैलेंद्र ने कहा, "सैंडिल उतार दीजिए।"

मैं मंजु के सिरहाने जाकर खड़ा हो गया । उसके गाल पर थपकी देते हुए मैंने पूछा, "पहले से कुछ अंतर फील कर रही हो।"

"फील न करती होती तो ये लोग आपको यहां आने देते । वैसी बेचैनी अब नहीं है ।

"कुछ खाओगी ?"

"आधी रात को क्या मिलेगा खाने के लिए ?" वह मुस्कराई,"सिर्फ एक कॉफी मंगा दीजिए ।" मैं जब डायलसिस कक्ष से बाहर आया तो सभी की आंखें मेरे चेहरे पर टिकी थीं । कैसी है मंजु । पहले की अपेक्षा काफी परिवर्तन आया है । वह भूखी है । एक कप कॉफी मांग रही थी, मैंने नरेंद्र और श्रीकांत की ओर देखा "मिलेगी कहीं ?" डॉ. श्रवण तुली ने कहा, "नरेंद्र जी, मेरे फ्लैट में जाकर कॉफी ले आइए ।" दोनों थर्मस लिए चल पड़े जैसे हनुमान संजीवनी के लिए चल पड़े थे ।

थर्मस निर्मल का था जिसे वह आज प्रातःकाल लायी थी । उसे ठीक से धो-पोंछ कर जलती हुई यानी बहुत गरम कॉफी आयी।

मैं थर्मस लिए भीतर गया । पैर का सैंडिल पहले से उतरा हुआ था । "लो कॉफी" मैंने कहा, "डॉ. शैलेंद्र, क्या इसका सिरहाना ऊंचा हो सकता है ताकि यह आसानी से कॉफी पी सके।"

तकिया के सहारे उसका शिर थोड़ा ऊपर उठा । वह कॉफी की चुस्की लेती हुई मुस्करायी, "बाबूजी, आपने भइया को सावधान किया कि ऊर्ध्व सांस चल रही है, अपने को संभालो । भइया ने तो संभाल लिया, पर आप नहीं संभाल पाये । आप इस तरह विह्वल होंगे तो यह संघर्ष कब तक ढो सकेंगे ?" वह रोने लगी ।

"तू मेरी चिंता क्यों करती है ?"

"आपने 16 नवंबर को सुबह आठ बजे एक कप चाय ली थी और आज 19 नवंबर की अर्धरात्रि है, आपने कुछ खाया? चाय या कॉफी ही सही, कुछ ग्रहण किया आपने ?"

"तुम चिंता मत करो । मैंने इतने पान खाये हैं आज, इतनी जाफरानी पत्ती गयी है पेट में कि भूख नहीं मालूम होती ।"

"मंजु !"

"हां चाचा जी !" उसने शैलेंद्र की तरफ देखा ।

"तुम कॉफी ले चुकी हो, यह रिस्क मैंने अपने निर्णय से लिया ताकि तुम कुछ ग्रहण तो करो । अब आराम करो ।"

वह फिर मुस्कराती हुई बोली, "बाबूजी, अब मेरी चिंता में अपने को कब तक गलाते रहियेगा । घर जाकर लेट जाइए । तीन-चार घंटे ही सही । आपको ब्लड प्रेशर रहता है, मंजु को बचा भी लिया आपने, अपने को खतरे में डालकर तो न मंजु बचेगी, न आप । यह तो कोई लंबा चक्र लगता है, पता नहीं दुर्गाकुंड की चरखी की तरह, हमें कितनी बार ऊपर जाना होगा और कितनी बार नीचे आना होगा । कौन कहां गिरेगा, यह सब सोचकर रुलाई आती है मुझे, पर मैं तुरंत अपने को संभाल लेती हूं । इसलिए नहीं कि मेरा डिप्रेशन कम हो, बल्कि इसलिए कि कहीं आप सर्किल से झटका खाकर मुझसे दूर न चले जायं ।" मैंने मुस्कुराते हुए कहा, बेटे "यह समय अपने और रिस्क के बीच का फासला नापने का नहीं, अपने भीतर की इच्छा-शक्ति को जगाने का है । वह इच्छाशक्ति जब से जगी है मेरे भीतर, मुझे लगता है कि अभी संघर्ष की शुरुआत है । युद्ध तो आगे आयेगा । मैं राजर्षि परम्परा को थोड़ा-बहुत जान सका हूं, लोगों को भ्रम नहीं होना चाहिए कि मैं छोटा-मोटा राजर्षि हूं । मैं इस लड़ाई को आत्मघाती सैनिकों की तरह लड़ना चाहता हूं यानी (सुसाइड स्क्वाड) के कैप्टन की तरह ।"

"डॉक्टर साहब, अब इसे आराम करने दीजिए । मुझसे राणा गोपाल जी कह

गये हैं कि कम से कम एक पाइंट (एक बोतल) 'ओ निगेटिव' की तुरंत आवश्यकता है।"

मैं डायलसिस कक्ष से बाहर आया । मैंने कहा, "तुरंत एक बोतल 'ओ निगेटिव' की जरूरत है।"

"आप सब लोग जाइए ब्लड बैंक और आपातकाल कहकर उसे खुलवाइए । चलिए हम लोग भी चलते हैं ।" राजमणि शर्मा ने कहा ।"आओ नरेंद्र, मोहन, श्रीकांत, चलो सब लोग।"

कक्ष में बंधुवर बच्चन सिंह, त्रिभुवन सिंह मेरे साथ बैठे थे । ये तो वहां और लोग भी, उनकी संख्या भी काफी थी किंतु मेरी स्मरण-शक्ति की अतिशयोक्ति भरी प्रशंसा करने वाले बंधुवर नामवर सिंह और बच्चन सिंह को 19 नवंबर 1981 की रात विचित्र लगती, जब मैं कहता कि मंजु के प्रति सहानुभूति प्रकट करने जो-जो बंधु आये हैं उनमें कई ऐसे हैं जिनसे मैं अपरिचित हूं । मुझे उनके नाम तक याद नहीं हैं । यह मेरी स्मरण-शक्ति की दुर्बलता का तथ्यात्मक प्रमाण है।

सब लोग अपने-अपने रक्त ग्रुप की सही जानकारी प्राप्त करके लौटे । दुर्भाग्य था मंजु का कि वाराणसी में केवल चार ही लोग थे जिनका रक्तग्रुप ओ-निगेटिव था । मैं इसका पता लगा चुका था । उपस्थित लोगों में जितने भी छात्र-प्राध्यापक गये थे रक्तग्रुप जानने, वे सब निराश लौटे । मुझे ज्ञात था कि मेरे पास एक ऐसा फिक्स्ड डिपाजिट है जिसे मैं कभी भी मंजु की रक्षा के नाम पर अनुरोध करके निकाल सकता हूं । वे हैं मेरे शोध छात्र और अनन्य शिष्य डॉ. विजय नारायण सिंह, जिन्हें मैं सिर्फ विजयी कहता हूं । वे रक्त की जांच कराने नहीं गये।

"मैं जा रहा हूं गुरुदेव !" विजयी ने कहा ।
मैंने उसके चेहरे की ओर देखा, विचित्र आत्मविश्वास और निष्ठा थी, "जाओ।"
एक बोतल खून आया और डॉक्टर शैलेंद्र को सौंप दिया गया ।

सर्किल
यह शब्द कहां से मिला इस लड़की को, उसने दुर्गाकुंड के सावनी मेले की बहुत ऊंची और डीजल से चलने वाली उस सर्किल यानी चरखी पर झूलने का आनंद तो लिया है पर चरखी की जगह सर्किल, और सर्किल के झटके से कहीं दूर जाने की आशंका । यह शब्द इसके दिमाग में यों ही आ गया। कोई तो नहीं कहता कि चरखी और चक्र में कोई अंतर है, फिर भी मंजु ने कहा कि आप इससे रहिए। मैं नहीं चाहती कि इसके झटके के कारण आप मुझसे अलग हों
श्री अरविंद की ह्यूमन सायकिल, से उद्धृत उन्हीं के शब्दों में (

मानवीय आत्मा का संगठित सामंतों, पुरोहितों और अभिजात्यों की तानाशाही का विरोधी था, समाजवाद महाजनी निरंकुशता के खिलाफ विद्रोह था । अब अराजकतावाद संभवतः नौकरशाही समाजवाद के विरुद्ध मानवात्मा के विरोध के रूप में आयेगा । हर धोखे से दूसरे धोखे की ओर मानवता की इस अंधी दौड़ का योरप उदाहरण है ।" अरविंद की ह्यूमन सायकिल, ट्वायनबी और स्पेंगलर से अलग है । ट्वायनवी के हिसाब से महिमामय वचन सभी तरह के दर्शन, आधुनिक आदमी के लिए बदले हुए सुथरे धर्म बिल्कुल निरर्थक हैं । पादरियों के नूतन मनोविज्ञान, ईसाइयत से प्रभावित मार्क्सवादियों तथा प्राणिविज्ञान के सलाह लेने वाले जीव-विज्ञानी मानवतावादी कैथोलिक अबूझ में डूबे ज्योतिषी, रहस्यवादी, नये मानव के उदाहरण देने वाला साहित्य यह सब मुझे ऐसे डेल्टे में धंसे लगते हैं जहां कीचड़, समुद्र और आकाश, जो गहरे से गहरा नीला ही क्यों न हों, सभी प्रकृति की भूरी और बादामी जड़ता में डूबे लगते हैं । पतझड़ी संस्कृति को देखा था उन्होंने । पश्चिमी देशों के वैभव के भीतर टूटती हुई आत्मा को समझा था । एक छोर पर है समृद्धि और थकी मानवता जो सार्थक संस्कृति से नीत्से गेटे तक फैली है जबकि उसके सामने बड़े-बड़े शहरों में कृत्रिम उखड़े हुए लोगों का फैशनमूलक जीवन है । पश्चिम की यह हालत है, पूरब गुलाम है, वहां से कुछ भी नहीं मिलेगा - तो ।

मंजु यह सब कुछ भी नहीं जानती क्योंकि उसे न अंग्रेजी आती थी और न ही फलसफे में उसकी रुचि थी । शायद हिंदी में छपी कुछ कृतियों को जैसे लोहिया के इतिहास चक्र को देखा हो, मैं समझता हूं यह भी मुमकिन नहीं है । वह तो केवल उपन्यासों में— चाहे वे मौलिक हों या अनुवाद— डूबी रहती थी । अतः उसे ट्वायन्बी के हिसाब से डेल्टे में धंसी, कीचड़, समुद्र और नीले आसमान को बादामी जड़ता ओढ़कर शुतुरमुर्ग की तरह चोंच छिपाने वाली, तेज-तर्रार युवती भी नहीं कहा जा सकता । यह मुझे समझा रही है कि बाबूजी आप चरखी से दूर रहियेगा । वह शायद अपने बाप के प्रति अपनी निकटता और आसक्ति के कारण उसे भी कर्तव्य अकर्तव्य में भेद करने वाले अक्षम साहित्यकार जैसा बेगाना मानने लगी।

"ठीक है बेटे, मैं पूरी कोशिश करूंगा कि नियति के इस भौतिक भ्रमजाल से अलग रहूं । तुम न तो मुझे बचा पाओगी और न अपने को, बस केवल एक रास्ता है कि तुम कल्पना में जीना छोड़ दो और मैं अपने को सर्वज्ञ समझने वाला सपना भुला दूं । इसके अलावा कोई विकल्प है ही नहीं ।"

जीव अपने प्रारब्ध में बंधा चौरासी लाख योनियों में भटकता रहता है । मुझे तत्काल कालिदास याद आये । जन्म-जन्मांतर के चक्र में तो जाने-अनजाने तर्क-कुशल अथवा अंधविश्वासी सभी डूब-उतरा रहे हैं । बालक या बालिका के जन्म

के समय आकाश निरभ्र रहा होगा । शीतल, मंद सुगंध से परिपूर्ण वायु अपने संपर्क से थके शरीर को गुदगुदाती भी होगी । अग्नि की लपटें दक्षिण की ओर घूमकर हविष्य ग्रहण कर रही होंगी यानी शकुन ही शकुन ।

"भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम्" (रघु. 3/14)

ऐसे बालक या बालिका का भव यानी जन्म लोक के अभ्युदय के लिए होता है। मैं इस भव से टकराने लगा । जिसके जन्म के समय आकाश तो निरभ्र रहा होगा क्योंकि 25 फरवरी के दिनों में मेघाडंबर कम ही दिखता है, हवा भी वैसी ही होगी किंतु अग्नि की लपटें दक्षिण ओर घूमकर हविष्य ग्रहण कर रही थीं या नहीं "मुझे ज्ञात नहीं ।" लीजिए यह है रक्त सैंपुल शैलेंद्र ने कहा, "इसकी रिपोर्ट दो घंटे के अंदर आ जानी चाहिए ताकि उसे देखकर हम लोग डॉ. आर. जी. सिंह को बताएं ताकि वह यहां किसी को भेजें कि ब्लड यूरिया कितना कम हुआ और यह डायलसिस कितने समय तक चलती रहनी चाहिए ।"

20 नवम्बर 1982

मंजु सोयी थी । मैं घर आया । प्रातःकाल के पांच बज रहे थे । दरवाजा थपथपाया, पत्नी बाहर आयीं, "कइसे बा ?"

"ठीक बा" मैंने कहा कि एक कप चाय पिलाओ तुरंत और अगर ब्रेड ताजी हो तो तीन-चार सेंक कर दे दो । मैं तुरत लौट जाऊंगा ।"

"नहा लेहीं ।"

मैं बाथ से निकला तो थोड़ा फ्रेश होने का अनुभव किया । वैसे मुझे अगर दो दिन बिना विश्राम के बैठे रहना हो तो कोई खास तकलीफ नहीं होती । मंजु की इस बीमारी ने मेरे मन के वहम को कि मैं भी उच्च रक्तचाप का मरीज हूं, निकाल फेंका । मैंने एडलफेन एसिडेक्स की एक गोली, जो हर सुबह नाश्ते के साथ लेता था। छोड़ दी । अंतश्चेतना के सबसे उपरले स्तर से लेकर नीचे के अंतिम स्तर तक सिर्फ एक लक्ष्य था, मंजु को बचाना । चाहे मुझे जो भी करना पड़े, खर्चीली से खर्चीली चिकित्सा में भी मैं पीछे नहीं हटूंगा ।

ब्लड यूरिया गिरकर 83 पर आ गयी थी । सर्वत्र संतोष और उल्लास ही उल्लास था। मंजु ने सुबह का नाश्ता किया, वह एक रात में ही एकदम बदल चुकी थी उसने मौत का सामना करने की दृढ़ इच्छा-शक्ति को जगा लिया था । परेशान वह नहीं, परेशान मैं था । वही उलझन, वही आंखमिचौनी । कोई नहीं बता रहा था कि क्षितिज के पार क्या है ।

पेरीटोनियल डायलसिसें चलती रहीं । जिन व्यक्तियों का रक्त ओ-निगेटिव था, यानी वे चार-पांच जिन्हें मैं जानता था, एक बोतल रक्त देने को तैयार थे । चंचल को दिल्ली जाना था, वह मुझे बिना बताये मंजु के लिए एक बोतल रक्त देकर जा चुके थे । मुनमुन धोबी ने एक बोतल रक्त के लिए चार सौ रुपये लिए।

डॉक्टरी परीक्षा होती रही । जब वह थोड़ा स्वस्थ हुई तो उसे आयी. बी. पी. के लिए एक्सरे कक्ष में ले जाया गया । वहां अनेक दवाएं, इंजेक्शन आदि लगाकर यह जानने की कोशिश की गयी कि गुर्दों (किडनी) की स्थिति क्या है । शाम ढल रही थी । उसके आई. बी. पी. एक्स-रे चित्रों को देखकर आर. जी. सिंह ने घोषणा कर दी कि दोनों किड्नियां खराब हो चुकी हैं, वह भी इस स्थिति में कि उन्होंने एकदम कार्य करना बंद कर दिया है ।

उन्होंने मुझे अपने चेंबर में बुलाया । एक्स-रे तस्वीरों को ट्यूब लाइट के प्रकाश-पटल पर सुनियोजित कर उन्होंने स्केल से जांचते हुए मुझसे कहा, "मुझे बहुत दुःख है डॉक्टर साहब ! आपसे कहना पड़ रहा है कि गुर्दे बिल्कुल नष्ट हो चुके हैं। नयी किडनी प्रत्यारोपण के अलावा कोई विकल्प नहीं है । नयी किडनी अर्थात् रक्त से संबंधित व्यक्ति द्वारा अगर एक गुर्दा मिल जाय तो ट्रांसप्लांट कराना होगा। इस तरह की चिकित्सा या तो पोस्ट ग्रेजुएट मेडिकल कॉलेज अस्पताल चंडीगढ़ में हो सकती है अथवा क्रिश्चियन कॉलेज अस्पताल बेल्लोर में ।"

"इसमें कितना आर्थिक व्यय होगा ?" मैंने पूछा ।

"पहली समस्या गुर्दा दान करने वाले रक्त संबंधी व्यक्ति की तलाश है । आपके परिवार के लोगों को मैं जानता हूं । केवल माता जी की किडनी के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है । जहां तक व्यय का प्रश्न है । बेल्लौर से चंडीगढ़ सस्ता पड़ेगा । आपको कम से कम पचहत्तर हजार की व्यवस्था तो करनी ही होगी।"

मैं कुछ नहीं बोला । मैंने आयी. बी. पी. के एक्सरे फोटोग्राफों को लंबे-चौड़े लिफाफे में रखा और चुपचाप उन्हें लेकर घर आया । उस समय मैं किस स्थिति में था, मैंने स्वयं इस प्रश्न को अपने को संबोधित करते हुए बार-बार पूछा । मेरे जैसे प्राध्यापक को एक लाख रुपये कहां से मिलेंगे । मैं किधर जाऊं, कहां जाऊं । अंततः मैं अपने चिरपरिचित, उदार, मधुभाषी डॉ. गंगा सहाय पाण्डेय के पास गया। मेरे चेहरे को देखते ही बोले, "क्या बात है डाक्टर साहब, इतने परेशान क्यों हैं ?"

मैंने समूची कहानी कह दी । उन्होंने भी एक्सरे चित्रों को देखा, "मैं तो इसके

बारे में कुछ जानता नहीं, पर अगर बोझ लद गया है तो हम साथ साथ ढोयेंगे ।" डॉक्टर साहब अद्भुत सहनशील और व्यवहार-पटु थोड़े से उन लोगों में एक हैं जो आज भी बनारसी सभ्यता को बरकरार किये हुए हैं । वे अपने अनुज के साथ मंजु के लिए संघर्ष में कंधे से कंधा मिलाकर चलेंगे ।

"देखेंगे पंडित जी !" मैंने कहा और लौट आया ।

पेरिटोनियल डायलसिस और अनेकानेक दवायें उसी तरह चलती रहीं । यह सब अल्पकालिक रूप में हो रहा था । यह विकल्प कब तक चलेगा । मुझे क्या करना चाहिए, कुछ भी नहीं सूझ रहा था । मैं चौधीराम जी की उदारता को कभी भुला नहीं सकता । वे अपने स्कूटर पर बिठाये डॉ. अम्बष्ट के पास ले गये । उन्होंने थोड़ी आशाभरी बात कही । एक किडनी शायद बच गयी है । इसे अगर दवाओं से बचाने का प्रयत्न हो तो कुछ संभावना है कि ट्रांसप्लांट का विकल्प यहीं मिल जाय । तभी प्रो. त्रिपाठी आये । उन्होंने ट्यूब लाइट पटल पर लगी हुई एक्सरे फोटो को देखकर कहा यह रेनल फेल्योर का केस है । इसमें जरा भी संदेह नहीं है। ट्रांसप्लांट के अलावा केवल एक विकल्प है बीमार की मृत्यु ।

यह कड़वा सत्य था । मेरे मन को शोक और चिंता के दलदल ने इस तरह लील लिया था कि मैं कुछ भी सोचने लायक स्थिति में नहीं था । मैं जब घर आता तो पत्नी कहतीं, केहू ज्योतिषी के देखाईं । "मैं अपने बैग में उसकी कुंडली रखे सरस्वती फाटक से गंगा की ओर जाने वाली गली में पद्म और राधे के पास गया।

"राधे, जरा चलो, यहां भृगुसंहिता, हस्तरेखा, ज्योतिष और तमाम तरह की तांत्रिक पूजाओं के जानने वाले लोग हैं । मेरे सामने केवल धुंध में डूबा सूना आसमान है ।"

राधे मुझे लेकर कई ज्योतिषियों के पास गये । एक ही उत्तर — लड़की न तो मारकेश की दशा में है न तो मारकेश की यह अंतर दशा है । अत मृत्यु का तो प्रश्न ही नहीं उठता । इसे घोर कष्ट तो भोगना होगा, किंतु मृत्यु का कोई खतरा नहीं है । यह 'घोर कष्ट' शब्द भी उनमें से एकाध ने ही कहा । अधिकांश ने मंजु की कुंडली देखकर यही कहा, "यह युवती विवाहोपरांत लक्ष्मी की तरह पूजित होगी । और स्वयं एक महान विदुषी के रूप में प्रसिद्धि पायेगी ।"

मुझे याद है जब दूरदर्शन लखनऊ से विजय राय कैमरामैनों की टीम के साथ गुरुधाम में घुसे तो उनके स्टेशन वैगन पर रखी हुई कैमरा मशीनों और उनके पीछे बैठे संचालकों को देखकर लोगों ने उनकी कार का पीछा किया और जब गुरुधाम कालोनी के 'सुधर्मा' नामक मकान के सामने रुक गया तो मैंने

पेरीटोनियल डायलसिसें चलती रहीं । जिन व्यक्तियों का रक्त ओ-निगेटिव था, यानी वे चार-पांच जिन्हें मैं जानता था, एक बोतल रक्त देने को तैयार थे । चंचल को दिल्ली जाना था, वह मुझे बिना बताये मंजु के लिए एक बोतल रक्त देकर जा चुके थे । मुनमुन धोबी ने एक बोतल रक्त के लिए चार सौ रुपये लिए।

डॉक्टरी परीक्षा होती रही । जब वह थोड़ा स्वस्थ हुई तो उसे आयी. बी. पी. के लिए एक्सरे कक्ष में ले जाया गया । वहां अनेक दवाएं, इंजेक्शन आदि लगाकर यह जानने की कोशिश की गयी कि गुर्दों (किडनी) की स्थिति क्या है । शाम ढल रही थी । उसके आई. बी. पी. एक्स-रे चित्रों को देखकर आर. जी. सिंह ने घोषणा कर दी कि दोनों किड्नियां खराब हो चुकी हैं, वह भी इस स्थिति में कि उन्होंने एकदम कार्य करना बंद कर दिया है ।

उन्होंने मुझे अपने चेंबर में बुलाया । एक्स-रे तस्वीरों को ट्यूब लाइट के प्रकाश-पटल पर सुनियोजित कर उन्होंने स्केल से जांचते हुए मुझसे कहा, "मुझे बहुत दुःख है डॉक्टर साहब ! आपसे कहना पड़ रहा है कि गुर्दे बिल्कुल नष्ट हो चुके हैं। नयी किडनी प्रत्यारोपण के अलावा कोई विकल्प नहीं है । नयी किडनी अर्थात् रक्त से संबंधित व्यक्ति द्वारा अगर एक गुर्दा मिल जाय तो ट्रांसप्लांट कराना होगा। इस तरह की चिकित्सा या तो पोस्ट ग्रेजुएट मेडिकल कॉलेज अस्पताल चंडीगढ़ में हो सकती है अथवा क्रिश्चियन कॉलेज अस्पताल बेल्लोर में ।"

"इसमें कितना आर्थिक व्यय होगा ?" मैंने पूछा ।

"पहली समस्या गुर्दा दान करने वाले रक्त संबंधी व्यक्ति की तलाश है । आपके परिवार के लोगों को मैं जानता हूं । केवल माता जी की किडनी के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है । जहां तक व्यय का प्रश्न है । बेल्लौर से चंडीगढ़ सस्ता पड़ेगा । आपको कम से कम पचहत्तर हजार की व्यवस्था तो करनी ही होगी।"

मैं कुछ नहीं बोला । मैंने आयी. बी. पी. के एक्सरे फोटोग्राफों को लंबे-चौड़े लिफाफे में रखा और चुपचाप उन्हें लेकर घर आया । उस समय मैं किस स्थिति में था, मैंने स्वयं इस प्रश्न को अपने को संबोधित करते हुए बार-बार पूछा । मेरे जैसे प्राध्यापक को एक लाख रुपये कहां से मिलेंगे । मैं किधर जाऊं, कहां जाऊं । अंततः मैं अपने चिरपरिचित, उदार, मधुभाषी डॉ. गंगा सहाय पाण्डेय के पास गया। मेरे चेहरे को देखते ही बोले, "क्या बात है डाक्टर साहब, इतने परेशान क्यों हैं ?"

मैंने समूची कहानी कह दी । उन्होंने भी एक्सरे चित्रों को देखा, "मैं तो इसके

बारे में कुछ जानता नहीं, पर अगर बोझ लद गया है तो हम साथ साथ ढोयेंगे ।" डॉक्टर साहब अद्भुत सहनशील और व्यवहार-पटु थोड़े से उन लोगों में एक हैं जो आज भी बनारसी सभ्यता को बरकरार किये हुए हैं । वे अपने अनुज के साथ मंजु के लिए संघर्ष में कंधे से कंधा मिलाकर चलेंगे ।

"देखेंगे पंडित जी !" मैंने कहा और लौट आया ।

पेरिटोनियल डायलसिस और अनेकानेक दवायें उसी तरह चलती रहीं । यह सब अल्पकालिक रूप में हो रहा था । यह विकल्प कब तक चलेगा । मुझे क्या करना चाहिए, कुछ भी नहीं सूझ रहा था । मैं चौधीराम जी की उदारता को कभी भुला नहीं सकता । वे अपने स्कूटर पर बिठाये डॉ. अम्बष्ट के पास ले गये । उन्होंने थोड़ी आशाभरी बात कही । एक किडनी शायद बच गयी है । इसे अगर दवाओं से बचाने का प्रयत्न हो तो कुछ संभावना है कि ट्रांसप्लांट का विकल्प यहीं मिल जाय । तभी प्रो. त्रिपाठी आये । उन्होंने ट्यूब लाइट पटल पर लगी हुई एक्सरे फोटो को देखकर कहा यह रैनल फेल्योर का केस है । इसमें जरा भी संदेह नहीं है। ट्रांसप्लांट के अलावा केवल एक विकल्प है बीमार की मृत्यु ।

यह कड़वा सत्य था । मेरे मन को शोक और चिंता के दलदल ने इस तरह लील लिया था कि मैं कुछ भी सोचने लायक स्थिति में नहीं था । मैं जब घर आता तो पत्नी कहतीं, केहू ज्योतिषी के देखाईं । "मैं अपने बैग में उसकी कुंडली रखे सरस्वती फाटक से गंगा की ओर जाने वाली गली में पद्म और राधे के पास गया।

"राधे, जरा चलो, यहां भृगुसंहिता, हस्तरेखा, ज्योतिष और तमाम तरह की तांत्रिक पूजाओं के जानने वाले लोग हैं । मेरे सामने केवल धुंध में डूबा सूना आसमान है ।"

राधे मुझे लेकर कई ज्योतिषियों के पास गये । एक ही उत्तर -- लड़की न तो मारकेश की दशा में है न तो मारकेश की यह अंतर दशा है । अतः मृत्यु का तो प्रश्न ही नहीं उठता । इसे घोर कष्ट तो भोगना होगा, किंतु मृत्यु का कोई खतरा नहीं है । यह 'घोर कष्ट' शब्द भी उनमें से एकाध ने ही कहा । अधिकांश ने मंजु की कुंडली देखकर यही कहा, "यह युवती विवाहोपरांत लक्ष्मी की तरह पूजित होगी । और स्वयं एक महान विदुषी के रूप में प्रसिद्धि पायेगी ।"

मुझे याद है जब दूरदर्शन लखनऊ से विजय राय कैमरामैनों की टीम के साथ गुरुधाम में घुसे तो उनके स्टेशन वैगन पर रखी हुई कैमरा मशीनों और उनके पीछे बैठे संचालकों को देखकर लोगों ने उनकी कार का पीछा किया और जब वाहन गुरुधाम कालोनी के 'सुधर्मा' नामक मकान के सामने रुक गया तो मैंने उन लोगों

का स्वागत किया किंतु सबसे अधिक स्वागतयोग्य तो गुरुधाम के बच्चे और नौजवान थे । जिन्हें लगा कि बंबई से कोई फिल्म बनाने वाले लोग आये हैं । वे मुझे इस दृष्टि से देख रहे थे जैसे आज मेरे कारण गुरुधाम कालोनी धन्य हो गयी।

विजय राय योजनाबद्ध रूप से आये थे । वे मुझे अंधविश्वासी घोषित करने आये थे । उन्होंने षड्यंत्र का सहारा लिया । डाकुमेंटरी फिल्म के अंत में मुस्कराती हुई भंगिमा में निर्णय करके आये थे कि आज सारा नकाब उतारकर ही रहेंगे । "यथार्थवाद की भी अंतरतम गहराई में उतरकर प्रेमचंद की परंपरा को मीलों आगे ले जाने वाला कथाकार कितना अंध-विश्वासी है कि ज्योतिष में विश्वास करता है।" आज पंडित जी की बहुत याद आ रही है । उनके द्वारा कथित और लिखित एक वाक्य के कारण मैं बहुत परेशान हुआ । पंडित जी चंडीगढ़ से लौट आये थे । बात 1972 के आरंभ की है । उस समय उनका स्वास्थ्य बहुत गड़बड़ चल रहा था। मैं प्रतिदिन की तरह शाम को उनके आवास पर पहुंचा तो वो मकान के पश्चिमी बरामदे में लेटे हुए थे । उन्होंने कहा, "समझ में नहीं आता शिवप्रसाद कि यह अंत की सूचना है या कर्मभोग । मैं लगातार दो महीने से इस स्थिति में पूरी तरह निराश जैसा लगता हूं ।"

मैं एक क्षण चुप रहा और बोला, "आप 16 जनवरी से धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगेंगे और एक सप्ताह में अपनी ठहाकेदार हंसी से पुनः इस मकान को जीवंत और कंपित करने लगेंगे । "पंडित जी एक क्षण मेरी आंखों में देखते रहे ।" सोलह जनवरी उन्नीस सौ बहत्तर से ठीक होने लगूंगा, यह आश्वासन का बहाना है या कुछ और ? क्या तुम मकर सक्रांति के बारे में सोचकर यह सब कह रहे ।"

वे ज्योतिषाचार्य थे, केवल निराधार संतोष प्राप्त करना उन्होंने सीखा नहीं ।। मैं समझ गया कि आज पैरों को इस त्रिटंकविराजित महाश्मशान में त्रिशूल पर रखना ही है । मैंने कहा, "आपका सर्वोत्तम ग्रह कर्क का गुरु जो आपका भाग्येश भी है और षष्ठेश भी है यानी कष्ट प्रदाता, वह आपके चंद्र से बारहवें चल रहा है आजकल वह वृश्चिक में है । वह 10 जनवरी, 1972 को धनु पर आ जायेगा जो आपकी चंद्रराशि है । आप स्वास्थ्य-लाभ करेंगे ।" पंडित जी ने कुछ नहीं कहा, वह मेरी ओर त्राटकीय मुद्रा में देखते रहे । मैंने आठ बजे के लगभग उन्हें नमस्कार कहा और गुरुधाम लौट आया । पंडित जी अंधविश्वासी नहीं थे पर ज्योतिष को एक शास्त्र तो मानते ही थे । यद्यपि पंडित जी आज नहीं हैं कि वे मेरे कथन को स्वीकार्य या अस्वीकार्य कह देते पर मुझे उन लोगों पर तरस आता है कि जो उनकी मृत्यु के बाद उन्हें ज्योतिष में विश्वास न करने वाला प्रगतिशील कहने लगे हैं ।

मैं सोचने लगा कि कष्ट के समय ही इस तरह की दुर्बलता क्यों पैदा होती है। मैं एक दिन बहुत प्रातःकाल उनके निवास पर पहुंचा। बहुत खटर-पटर किया कि कोई ड्राइंग रूम खोले। मैंने जरा-सा धक्का मारा और उनके विशाल ड्राइंग रूम का प्रमुख द्वार खुल गया। उन दिनों पंडित जी मुझे प्रायः ऊपरी तल्ले के पूर्व वाले छोटे बरामदे में बुला लेते। अम्मा होतीं तो कहतीं, "तू पूछेले काहे ? जो ऊपर, ओइजे बइठल हउअ।" मैंने सोचा कि अम्मा शायद नहीं है अतः ऊपरी बरामदे में जाने के उद्देश्य से आंगन वाले दरवाजा को पीछे की तरफ खींचा। पंडित जी उसी तरह नहा रहे थे जैसे भोजपुरिया नहाते हैं। छोटे से गगरे को उठाकर सिर पर सारा पानी गिराकर नहाने की कला उन्होंने ओझौलिया या बड़े होने पर रुइया छात्रावास में सीखी, मुझे नहीं मालूम। उनके जनेऊ में लोहे की अंगूठी थी जिसे फाटक खुलते ही उन्होंने झटके से फेंटे में खोंस लिया। मैंने अपनी गलती स्वीकार करते हुए आंगन वाला द्वार बंद किया और ड्राइंग रूम मे बैठ गया। थोड़ी देर बाद वे आये—"चंडीगढ में एक साधु ने यह लोहे की अगूठी दी थी।"

मैं कहां कह रहा हूं कि आप ज्योतिष में विश्वास करते है।"

वे ठहाका लगाकर हंसे और चाय आ गयी।

मैं एक दूसरा उदाहरण दे रहा हूं प्रातःकाल पंडित जी के मकान पर पहुंचा। बाहरी कक्ष में बैठा ही था कि एक चीख भरी आवाज गूंजी। पंडित जी आंगन की ओर दौड़े। मुकुंद की पत्नी खौलते हुए पानी की बटुली लिये किचन से कहीं और जा रही थी, वह फिसलकर गिरी तभी उसके ऊपर पूरी बटुली उलट गयी। मुकुंद की पत्नी का नाम भी मजु है और मेरे या स्व. मंजु की तरह उसकी भी कन्याराशि है। कन्याराशि वालों के लिए वह बहुत अशुभ समय था। गोचर का मंगल बहुत समय तक के लिए कन्या पर ठहरने वाला था, मैं स्वयं अपने को नियंत्रित करके रिक्शे पर बैठता था। पंडित जी ने कहा, "देखो, ईश्वर की कृपा थी, अन्यथा वह बटुली मुंह पर भी उलट सकती थी।"

"यह तो आप की निश्चिंतता का परिणाम है—आप क्या उसे मूंगे की अंगूठी या माला नहीं पहना सकते थे।"

"मैंने लालजी से कह दिया था, मूंगा पहनना अनिवार्य है। कोई सुने तब तो।" पता नहीं अधिक प्रगतिशीलता के प्रदर्शन के लिए लालजी भी आज इस घटना को निराधार कह दें, पर मैं पंडित जी की परमपद में विलीन आत्मा के प्रति पूर्ण ईमानदारी के साथ कह रहा हूं।

उन्हें मार्क्सवादी बनाने के लिए बैसाखी थमाने की जरूरत नहीं है। घर से जितनी बार भी निकलना होता, वे दायीं ओर के शीशे वाली आलमारियों में रखे हुए श्रीकृष्ण के चित्र को माथा नवाते—फिर कहते—

जय सच्चिदानंद जग पावन ।
अस कहिं चले मनोज नसावन ।।

पश्चात अपने मकान से सटी एक ईंटगारे की बनी छोटी-सी कुठरिया की ओर जाने कब तक शीश झुकाकर खड़े रहते । वह एकदम ग्रामदेवता की तरह उपेक्षित जगह थी । कुछ थोड़े से रूढ़िवादी अपढ चटपटी माता की मनौती करते पर पता नहीं पंडित जी को चटपटी माता से इतना प्रेम क्यों था । मेरे जैसा व्यक्ति इस स्थान पर शीश झुकाने की अपेक्षा मृत्यु-वरण को श्रेंष्ठ समझता ।

अस्पताल से मंजु को बारह दिसंबर, 1982 को मुक्ति मिली, वह घर आ गयी। अपने कमरे में लौटने के सुख की या दुःख की जानकारी सीने से छिपाये रही, उसने बहुत सारे कैसेट जुटा रखे थे । एक कैसेट प्रायः बजता रहा—"चल उड़ जा रे पंछी कि अब ये देश हुआ बेगाना । "कैसेट पर उभरते उपर्युक्त वाक्य से मर्माहत होकर मैं गहरी वेदना में डूब जाता । मुझे लगता कि एक अगम काले कुएं में धंसता जा रहा हूं, पर मैंने उससे कभी भी यह नहीं कहा कि तुम ये निराशा-जनक गाने क्यों सुनती हो, क्योंकि मेरे अंदर इतनी हिम्मत ही नहीं थी कि उसे रोकूं ।

एक दिन मैं, पत्नी और मंजु एक साथ उसके कमरे में बैठे हुए थे । वह सिसक-सिसक कर रोने लगी । हम लोगों ने बहुत समझाया, आशा बंधायी, सब बेकार । वह इस तरह फूट-फूटकर रोने लगी कि मैं अपने को रोक नहीं सका । मेरे धैर्य का बांध टूट रहा था, पत्नी धारासार अश्रु वर्षा में नहा रही थीं ।

"बाबू जी, आप रोइए नहीं, मैं कुछ दिनों की मेहमान हूं ।"

"सुनो मंजु, मैंने पहली डायलसिस की रात को कहा था कि मैं इस विपत्ति के विरुद्ध सुसाइडस्क्वाड के कप्तान की तरह लड़ूंगा । पर अगर तुम्हारा विश्वास और आत्मबल टूट जायेगा तो मैं प्रकृति के विरुद्ध इस युद्ध में न केवल पराजित होऊंगा बल्कि तुम्हारे साथ मैं भी इस धरती को छोड़कर कहीं चला जाऊंगा।

"ऐसा मत कहिए बाबूजी," वह अवरुद्ध गले से बोली, "आप डेढ़ लाख रुपये कहां से लाइयेगा ?"

"तुम्हें इसकी चिंता नहीं करनी चाहिए, अंतिम क्षण में अगर निराशा ही मिलेगी तो भी मैं आश्वस्त हूं । मैं यह मकान बेच दूंगा ।" वह चुप हो गयी।

शाम को सरस्वती फाटक के निवासी राधेश्याम शर्मा आये, "गुरू !" उन्होंने पुकारा । मैंने द्वार खोला और हम दोनों ड्राइंग रूम में बैठ गये, "भइया ने भेजा है हमें ।" भइया यानी काशीनाथ शर्मा जो मुझे सरस्वती-पुत्र कहा करते थे । राधेपद्म के पिता जी । वे स्वयं अस्वस्थ चल रहे थे ।

"भइया ने कहा है— गुरुदेव की जो अपनी कुंडली देखकर लोगों के भूत, वर्तमान और भविष्य को रेशे-रेशे बिलगाकर रख देता है, वह अपनी पुत्री की कुंडली जेब में लिए क्यों घूमता है ? उन्होंने आपके प्रस्ताव पर कि महामृत्युंजय का जप होना चाहिए, एक मैथिल ब्राह्मण का नाम बताया जिसे वे सबसे ईमानदार और नैष्ठिक ब्राह्मण मानते हैं । आपकी आज्ञा मिलते ही हम उसे लेकर आ जायेंगे। प्रति एक सहस्र मंत्र-जाप के लिए वह सौ रुपये दक्षिणा लेता है । भइया ने कहा कि ग्यारह दिन तक यह जप चलता रहेगा । पर तुम सरस्वती-पुत्र से कहना, शायद वो जानते भी हों कि महामृत्युंजय या तो इस पार या तो उस पार पहुंचा देता है । जीवन रक्षा नहीं तो मृत्यु ।"

4

घर के सारे फूल हंगामों की रौनक हो गये
ख़ाली गुलदानों से बातें करके सो जायेंगे हम

—ज़ेहरा निगाह

अंबाला में हिमगिरि से उतरकर चंडीगढ़ जाना होता था । जब 20 दिसंबर को प्रातःकाल अंबाला पहुंचे तो तीखी ठंड के कारण हाथों को परस्पर मल-मलकर गरम करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था । मंजु ने एक स्वैटर नीचे और नीले रंग का पुल ओवर ऊपर से पहन लिया था । ऊनी चादर ओढ़ लेने के बाद भी वह थर-थर कांप रही थी ।

"क्यों मंजु, जाड़ा लग रहा है ?"

"थोड़ा-थोड़ा ।"

"चलो चाय पियें ।"

मैंने विजयी, नरेंद्र और श्रीकांत को चंडीगढ़ के लिए एक टैक्सी ठीक करने के लिए भेजा । चाय की दुकान पर हम तीन जन थे । मैं, मंजु और उसकी अम्मा । वह कहीं सुदूर में खोई हुई थी । जब मैं उसे इस तरह मौन साधे देखता तो जान लेता कि उसके दिमाग में कैसेट बज रहा है— चल उड़ जा रे पंछी । पहली बार मेरी पत्नी ने एक ऐसा कार्य किया जिसने मेरी तटस्थता तोड़ दी । उन्होंने मंजु का सिर अपनी गोद में लेते हुए कहा, "जड़वत हौ ?" और उसके मुंह को सहलाया, "अब त़ चंडीगढ़ पासे होई, रो मत, सब ठीक हो जाई ।"

"तू नहीं जानती" मंजु बोली, "मरे हुए लोगों को बहलाने के बहाने हैं यह सब। चंडीगढ़ में भी तो यही कहेगा न डॉक्टर कि किडनी देने वाले को सामने लाओ । कौन देगा अपनी किडनी मुझ अभागिन को ?"

"हमार त खून मिलत ह न तोसे, हम देब किडनी ।"

मैंने तालियां बजायी, इसलिए नहीं कि पत्नी एक असाध्य कार्य करने के लिए तैयार है बल्कि अपने को अभागिन कहने वाली मंजु को अबूझ अवचेतन में डूबने के पहले उन्होंने खींचकर अपनी गोद में ले लिया था । और उसके आत्मबल को

प्रदीप्त कर दिया था ।

"भाई जरा खौलते पानी से कप-प्लेट धोकर दीजियेगा चाय, हम एक बीमार के साथ चंडीगढ़ जा रहे हैं । कुछ लोगी बिस्किट आदि ।"

"हां, कोई नमकीन बिस्कुट लेंगे ।" मंजु ने आज पहली बार किसी खाने वाली चीज के लिए आग्रह किया था । उसे शायद लग रहा था कि उसका परिवार उसके साथ अपने तमाम सुख-सपनों को लात मारकर कहीं भी चिकित्सा के लिए साथ-साथ चलने का संकल्प ले चुका है ।

"बाबू जी !"

"हां, बोल !"

"रजाइयां और कंबल वगैरह तो कम पड़ेंगे, हम लोग छह-सात हैं और रजाइयां केवल तीन हैं ?"

"यानी छह को ढकने के लिए पर्याप्त । मेरा काम कंबल से चल जायेगा।"

"माना कि आपको मोटी रजाई भार जैसी लगती है, पर यह बनारस नहीं, चंडीगढ़ है ।" एक टैक्सी ठीक करके तीनों चाय स्टाल पर पहुंचे । "इन लोगों को भी चाय दो भाई ।"

टैक्सी जब चंडीगढ़ पहुंची तब पता चला कि डॉ. त्रिभुवन सिंह ने हमारे ठहरने आदि का प्रबंध करा दिया है ।

चंडीगढ़, फ्रेंच वास्तुशिल्पी कारबुजिये का स्वप्न नगर । हवा बड़ी तीखी थी, गनीमत यह थी कि हम जिस कमरे में थे उसके सामने की बालकनी पूर्व दिशा से उदित और पश्चिम दिशा में ढलते सूर्य की धूप से नहाती रहती थी पूरे बारह घंटे। यानी एक ऐसी धूप जिसे बाबा ने इस प्रकार कहा है—

जिमि गरीब के देह पर माघ-पूस कर घाम
वैसे ही प्रिय लागहीं तुलसी कह श्रीराम ।।

अस्पताल में जांच कराने का समय बीत गया था । अत. हमारे लिए धूप में नहाने के अलावा कोई काम न था ।

चंडीगढ़ में हमारे दो सुहृद थे । मेरे सहपाठी प्रो. धर्मपाल मैनी और प्रो. सुधाकर पांडेय । पांडेय जी से मेरा परिचय तो नहीं था, किंतु वे इस ढंग से मिले कि लगा मानव-मानव के भीतर एक बेतार का तार होता है । आप चेहरा देखते ही जान जायेंगे कि किसके मन के भीतर की वीणा हल्के स्पर्श से झनझना उठी है।

डॉ. सुधाकर पांडेय ने अपने घर से भोजन तैयार कराकर भेजा । जीवन के लिए पाथेय चाहिए । वनस्पति के लिए खाद चाहिए । पशुओं के लिए घास चाहिए, और मानव के लिए अन्न । इस अन्न के लिए ही शोषक और शोषित में संघर्ष चलता है । यही अन्न खूनी क्रांतियों को जन्म देता है । इसी के चौगिर्द सारी सूक्ष्मातिसूक्ष्म कलाएं मंडराती हैं । विज्ञान इसकी प्रदक्षिणा करता है । लालित्य इसके अभाव में शिशिर के कमलों की तरह सूख जाता है । मृत्यु के आमने-सामने खड़ा व्यक्ति भी इस अन्न की उपेक्षा नहीं कर सकता । इसीलिए मुण्डकोपनिष्द् घोषणा करता है—

तपसा चीयते ब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते
अन्नात् प्राणो मनः सत्यं लोका कर्मसुचामृतम् (1/1/8)

अपनी वैज्ञानिक तपस्या से ब्रह्म अन्न को अवतरित करता है । अन्न से प्राण , प्राण से मन, तथा स्थूल सृष्टि विकसित होती है । इसी के अंदर संपूर्ण लोक निवास करता है । अन्न ही अमृत है ।

मुझे नहीं मालूम कि आज से पांच हजार वर्ष पूर्व अन्न की ऐसी अभ्यर्थना किसी अन्य देश में हुई हैं । हो भी नहीं सकती थी । इसके लिए निसर्ग और मनुष्य में बराबरी का रिश्ता होना जरूरी है ।

मंजु बहुत थकी थी । बहुत आग्रह करने पर उसने एक-दो कौर ग्रहण किया और पुनः धूप में बिछी चारपाई पर लेट गयी । संध्याकाल में, त्रिभुवन जी, प्रो. मैनी नेफ्रोलाजी विभाग के एक वरिष्ठ प्राध्यापक के पास गये । उन्होंने सभी आयी. वी. पी. के एक्सरे चित्रों को देखा ।

"क्षमा करियेगा डॉ. सिंह, दोनों गुर्दे बिल्कुल नष्ट हो चुके हैं । बिना ट्रांसप्लांट के कोई चारा नहीं । डायलसिस पर आप इसे कब तक जिलाये रह सकते हैं । आप जैसे व्यक्ति क्या प्रतिमास दस हजार रुपये की व्यवस्था कर सकते हैं ? यह सब तो अमेरिका के उद्योगपतियों के लिए है । ट्रांसप्लांट के लिए किडनी चाहिए, वह भी रक्त के रिश्ते से जुड़े व्यक्ति से मिलनी चाहिए । मंजुश्री का रक्त ग्रुप ओ-निगेटिव है । क्या आपके परिवार के किसी दूसरे सदस्य का भी ओ-निगेटिव है ?"

"ओ-निगेटिव तो नहीं, "ओ" पोजेटिव है मेरी पत्नी का ।"

"क्या आयु होगी उनकी ?"

"आयु तो बावन के लगभग होगी ।"

"हम लोग अमूमन पचास वर्ष से ऊपर की आयु वाले की किडनी नहीं लेते।आपकी पत्नी भी पचास के ऊपर हैं, ग्रुप भी निगेटिव नहीं पाजेटिव है । ओ-वी आपके परिवार में नहीं है अतः मिसेज सिंह की जांच-पड़ताल शुरू करेंगे,

अगर कोई दूसरी बाधा आड़े न आये तो उन्हीं को "डोनर" (किडनी प्रदाता) मानकर जांच-पड़ताल शुरू करेंगे ."

"इस ट्रांसप्लांट में कितना व्यय होगा डॉक्टर, एक छोटा-मोटा अनुमान बताइए।"

मैंने आज सुबह ही बता दिया था डीन ऑफ स्टूडेंट्स को कि चूंकि बेसिक वेतन 1740 रु. है तो कम से कम सत्तर हजार की व्यवस्था तो करनी पड़ेगी ही । एक बात और बता दूं कि ट्रांसप्लांट सर्जन डॉ. यादव विदेश गये हैं, अगर उनके आने में विलम्ब होगा तो आपके व्यय में भी वृद्धि हो जायेगी ।"

"ठीक है ।" हम लोगों ने डॉक्टर को नमस्कार किया और चले आये ।

मैं जमीन पर दरी बिछाकर लेटा था । साथ के लोग बगल वाले कमरे में आराम कर रहे थे । मेरे मस्तिष्क का जुलाहा अपने धनुका की तांत पर लगातार धुने जा रहा था । जीर्ण-शीर्ण विचारों को इस तरह पीसे जा रहा था जुलाहा कि बारीक और हल्के सफेद रूई का ढेर लग गया । इतना सारा गाज और फेन । मैं किसे चुटकी में पकड़ूं, किसे छोड़ूं । मैं जितना ही प्रयत्न कर रहा था उतना ही उलझता जा रहा था । पता नहीं मेरी पत्नी ने मंजु को खुश करने के लिए कहा था सचमुच उनके भीतर की वीणा का तार वात्सल्य से झनझना उठा था । वे पचास पार कर चुकी हैं, यानी मैं साठ-सत्तर हजार का बंदोबस्त भी कर लूं तो भी हम संदेह में झूलते रहे थे कि बावन वर्ष की मां की किडनी को मंजु के शरीर ने स्वीकार किया या अस्वीकार । मेरा रक्त ग्रुप 'ए' है, मैं मंजु के किसी काम लायक नहीं हूं । न तो प्रकृति ही रास्ता छोड़ रही है, न तो मायाविनी नियति । यह सत्य है कि उस दिन अर्धरात्रि के बाद धीरे-धीरे जब मस्तिष्क शांत हुआ तो एक संकल्प कौंधा—चाहे प्रकृति हो या नियति, एक बार दोनों से जोर आजमाइश तो करूंगा ही । इस संकल्प के साथ ही राही मासूम रजा की कुछ पंक्तियां छा गयी थीं मन पर जिनमें सिर्फ सकून ही नहीं, कालकूट पीने वाले के लाल-लाल नयनों की उग्रता भी थी—

> जहर मिलता रहा, जहर पीते रहे
> रोज मरते रहे, रोज जीते रहे
> जिंदगी भी हमें आजमाती रही
> और हम भी उसे आजमाते रहे ।

जब तक शरीर में प्राण है, जब तक मन में विश्वास है, मैं सब कुछ अर्पित कर दूंगा, किंतु विषम आर्थिक स्थिति मुझे हिला रही है । नष्ट गुर्दे, विपण्ण मुख मंजु—क्या इसे घुल-घुलकर मरते देख सकूंगा । मैं मामूली मुदर्रिस हूं । इतना धन कहां से

लाऊँ । ट्रांसप्लांट करने वाला सर्जन पता नहीं कब लौटेगा ? मैं पुनः धनुका से उन्मथित प्रताड़ित राशिभूत श्वेत बादलों की तरह फैली रूई के गाले में धंसने लगा। क्या हिमराशि में महासमाधि लेने का संकल्प कर लिया है तुमने । शारीरिक शक्ति, मानसिक संकल्प, आर्थिक व्यूह—कैसे पार करूंगा मैं ?

"विचलित होने का नहीं देखता मैं कारण
हे पुरुषसिंह, तुम भी यह शक्ति करो धारण
आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर
तुम वरो विजय संयत प्राणों से प्राणों पर"

हे संयत प्राण, तुम्हें कहां खोजूं, । तुझे अपने और अपने साथ के लोगों को एक नयी शक्ति से जाग्रत करना होगा । तुम सर्वत्र व्याप्त अंधकार में डूब जाओगे यदि तुम तनिक भी निराश हुए । मंजु के भीतर जीवन के प्रति दृढ़ इच्छाशक्ति जगाओ, उसे पूर्ण विश्वास से भर दो । इस कठिन स्थिति में अगर तुम तनिक भी विचलित हुए तो तुम्हारा चैतन्य तुम्हारे दैन्य और पलायन पर अट्टहास करेगा । मेरी आंखों में सन् 1953 का श्रावण कौंध उठा । मैंने कौन से पाप किये थे । अरुणाभ कपोलों वाले चिरंजीव का मासूम चेहरा धुंध में डूबा था, मैंने उसके गाल पर थपकी दी थी वह मेरे चतुर्दिक उन्मत्त मयूर की तरह नाचता रहा । क्या मैं बचा पाया उसे ? जिन देवी-देवताओं से मैं आंतरिकता से जुड़ा था, हतोत्साहित करने लगीं । एक विचित्र स्थिति थी । मैं जिन्हें अपना अभेद्य कवच मानता था । विंध्याटवी की योगमाया ने मुंह क्यों फेर लिया । अन्यायी, वंचक, शोषक सब हंस रहे हैं । जीवन भर घूस ले-लेकर दर्जनों बैंकों में जमा अमित धन से इठला रहे हैं। उनके ऊपर कृपा की वर्षा हो रही थी और मेरे ऊपर निरभ्र वज्रपात।

आया न समझ में यह दैवी विधान
रावण अधर्मरत भी अपना, मैं हुआ अपर
यह रहा, शक्ति का खेल समर, शंकर-शंकर ।।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब हम लोग अस्पताल पहुंचे तो पता चला कि प्रो. चुग अपने चैंबर में बैठे हुए हैं । हम लोगों ने बिना सूचित किये, बिना अनुमति लिए उनकी राज्य सीमा का अतिक्रमण किया था फिर भी बड़े प्रेम से उन्होंने बैठाया।

मैं आयी. वी. पी. के एक्सरे चित्रों को लिफाफे से निकाल ही रहा था कि वे बोले, "इसे रखिए, पहले आप बताइए कि किडनी डोनर कहां है ?"

एक परम उत्साही सज्जन ने कहा, "मैं दूंगा अपनी किडनी ।"

"आप कौन है, क्या आप डॉक्टर सिंह के पुत्र है ?"

"नहीं, पर मेरा ब्लडग्रुप भी ओ-पाजिटिव है ।"

"आप व्यर्थ टांग मत अड़ाइए, मैंने आप जैसे डोनरों को सैकड़ो बार देखा है । आपको पता है कि आपकी किडनी का इस्तेमाल नहीं होगा क्योंकि आप रक्त संबंधी नहीं है । इसीलिए ऐसे व्यक्ति मेंढकों की तरह उछलते हैं ।"

"मेरी पत्नी देने को तैयार है किडनी", मैंने कहा ।

"वह कहां हैं ? उन्हें बुलवाइए । आप लोग बैठिए । मैं वार्ड का चक्कर लगाकर तुरंत लौट आऊंगा ।"

प्रो. चुग चले गये । नरेंद्र अपनी मां को लाने अतिथिशाला गये ।

"डॉक्टर साहब" मेरे अनुज डॉ. त्रिभुवन सिंह ने कहा, "बातें तो वही है जो कल नेफ्रोलॉजी वाले डॉक्टर ने कहीं, बिना किडनी के यहां रुकना बेकार है, भाभी जी को भी आयु पूछने के बाद खारिज कर देंगे प्रो. चुग ।"

"देखिए, अब तो घंटे भर की बात है । क्या निर्णय लेते है प्रो. चुग।"

मेरी पत्नी ऑफिस के बाहर रखे बेंच पर बैठी थीं । वे इतनी डरी हुई लगती थीं कि, मुझे दया आ गयी, "का सोचत हऊ ?"

"किडनियाँ निकली तब्बो, जब ई संदेह रही कि बइठल की नाहीं, तो इहां टिकले रहले से का फायदा ?"

मैं चुप हो गया, "बात एकदम सही थी । कल शाम डॉक्टर कह चुके थे कि पचास से ऊपर उम्र वाले डोनर की किडनी के बारे में कोई गारंटी नहीं ले सकता।"

प्रो. चुग लौटे तो उन्होंने मुझे और त्रिभुवन सिंह को छोड़कर बाकी लोगों को चैंबर के बाहर कर दिया । नरेंद्र अपनी माता जी को लेकर भीतर आये । वे कुर्सी पर बैठ गयीं ।

"क्या उम्र है आपकी, बहन जी ?" चुग ने पूछा ।

"बावन साल ।"

उन्होंने नरेंद्र से कहा, "इन्हें बाहर ले जाकर बैठाइए । हम लोग किसी न किसी निर्णय पर पहुंचना चाहते है । आप पेशेंट को भी ले आइए ।"

मंजु जब उनके चैंबर में गयी तो प्रो. चुग ने कहा, "डोंट वरी !"

उनके कक्ष में एक तरफ दो सफेद पर्दे लटक रहे थे । वहां से साफ दिख रहा था कि बीमार की जांच के लिए लंबी मेज थी और उसपर सफेद गद्दा बिछा था ।

"चलो बेटी ।" चुग के साथ मंजु पर्दे के भीतर गयी । आधे घंटे तक जांच होती रही।

"बेटी तुम अपनी अम्मा के साथ बाहर बैठो, देखिए उन्होंने मुझसे कहा । "मैं तुरंत चेस्ट का एक्सरे करवाऊंगा । हो सकता है कि ई. सी. जी. भी करानी पड़े। पेशेंट का ब्लड-प्रेशर बहुत हाई है, लगता है दिल पर भी असर पड़ा है । इसकी मां का स्वास्थ्य और उम्र देखते हुए यह स्पष्ट है कि आप सत्तर हजार लगायें तो भी किडनी वर्क करेगी, इसमें संदेह बना रहेगा । दूसरी बात यह कि इसे बिना डायलसिस कराये बनारस ले जाना चाहें तो सारा उत्तरदायित्व आप पर होगा क्योंकि उसके हार्ट की कंडीशन अच्छी नहीं है ।" उन्होंने एडमिट कार्ड बनवाया और मुझे देते हुए बोले, शांत रहें, रब की मर्जी । होगा तो वही जो वह चाहता है। सामने वाले इंटैंसिव केयर रूम में जाएयेगा" । मैं मंजु के पास आकर बैठ गया । वह बोली, "क्या कहा चुग ने ?"

"तुम्हारी मां की किडनी रिजेक्ट कर दी ।"

"मैं चाहती थी कि उनकी किडनीं रिजेक्ट कर दें सब । वह इतनी डरी हुई थीं कि मुझे लगता था कि आपरेशन रूम में पहुंचने के पहले वे बेहोश न हो जायं ।"

ऐसी तटस्थता मैंने नहीं देखी, यद्यपि मेरा आज तक कोई ऑपरेशन नहीं हुआ तो भी मैं जानता हूं कि निर्भय ऑपरेशन कक्ष में जाना बहुत मुश्किल होता है । उसकी बात में सिर्फ ऑपरेशन से भयभीत होने की ही झलक नहीं थी । अंबाला में उसने कहा था, कौन किडनी देगा मुझ अभागिन को । उसने केवल दो महीनों में ही उस स्थिति को पार कर लिया था जो वर्षों के अनुभवों के बाद भी एकाध लोगों को मिलती है । अब उसके सामने भयानक धारा के अलावा कुछ भी नहीं था । वह दोनों किनारों से जुदा होकर तेज लहरों में कूद पड़ी थी । मैंने कुछ नहीं कहा क्योंकि बहलाने के लिए भी तर्क-सम्मत कोई आधार तो चाहिए ही, चाहे वह कितना भी कमजोर क्यों न हो ।'

मैं धारा के भयानक भंवरजाल में उलझ गया । मैंने गर्दन झुका ली और उसकी ओर देखने का साहस बटोरता रहा ।

"क्या सोच रहे हैं बाबूजी ?" वह बोली, "मैं तो उसी दिन जिंदगी से मुक्त हो गयी जब मुझे भुजाओं में बांधे आपने भइया को संभलने के लिए कहा और खुद रो पड़े ।

"कैसी बात कर रही है तू !" मैंने कहा, "क्या संघर्ष में अपने सर्वाधिक प्रिय पदार्थ को हाथ से निकलते हुए देखकर यदि किसी की आंखें भर आती हैं तो उसे पराजय मान लेना चाहिए, क्या ऐसा निराधार निश्चय कर लेना न्याय-संगत है ?"

"आप कर भी क्या सकते हैं ।"

"देखती रहो कि मैं क्या कर सकता हूं । बस, तुम आदेश कहो, सलाह कहो,

बहलाना कहो, जो भी चाहे कह लो पर अपने बाबूजी के सामने शपथ लो कि इस अभागे प्राणी के विरुद्ध खड़ी नियति के जबड़ों को तोड़ने में तुम पीछे नहीं हटोगी, तुम तब तक साथ दोगी जब तक हम इस दैवी कूटनीति को बेनकाब नहीं कर लेते।"

वह मुस्करायी, "चलिए शपथ ली मैंने ।"

"श्रीकांत एक हीटर ले आये और उन्होंने पूरा भरोसा दिलाते हुए कहा कि मैं ऐसा भोजन बनाऊंगा जैसा कोई नहीं बना सकता ।"

"और जैसा कोई खा नहीं सकता ।" मैंने कहा, चलो आज चाय का इंतजाम हुआ, अब कई बार हर ग़म के साथ-साथ चाय की चुस्कियां चलती रहेंगी । भोजन तो आपकी मेहरबानी से खाने लायक अन्यत्र मिल जायेगा ।"

प्रातःकाल मंजु हीमो डायलसिस पर जाने वाली थी । मैं चाहता था कि नहा-धोकर आठ बजे तक उसके पास पहुंच जाना चाहिए ।

"मैं जा रहा हूं ।" पत्नी से कहा और अतिथिशाला से पी. जी. आयी. की ओर चल पड़ा । मैं जब एकांत में रहता था तो कुहरा और धुंध रास्ता ढक लेते थे । जब लोगों के साथ रहता था तो मंजु से दूरी चिंता की पहली रेखा की तरह चिलक उठती थी । वह विश्व वन की प्याली लगी होगी प्रसाद को पर, शिव प्रसाद को तो पिछले दो महीनों में ही आत्माराम बना दिया उसने । अंतरात्मा की ऊबड़-खाबड़ जमीन को पीट-पाटकर विपत्तियों ने एक कुटिया बना दी । वही आश्रम थी और वही आधार ।

चंडीगढ़ मेरे लिए तो घर जैसा ही था । क्योंकि प्रो. धर्मपाल मैनी का शहर था। और डॉ. मैनी जैसे अतिथि-सत्कार करने वाले व्यक्ति मैंने कम ही देखे हैं । मेरे कानों तक मैनी के विरुद्ध कुछ बातें पहुंची थीं । पंडित जी के खिलाफ आचरण की शिकायतें, पर मैं कभी भी उनमें उलझा नहीं । फायदा क्या है ? तनाव के बिन्दु अलग-अलग होते हैं, व्यक्तिगत · पर जब लोग उसे सामूहिक बनाते हैं तो उनके भीतर के छद्म से खतरा भी हो सकता है । मैनी ने दो-तीन बरसों तक मेरे साथ गुर्दू हास्टल में निवास किया है, मैं उनकी महत्वाकांक्षाओं से भी परिचित हूं और सीमाओं से भी । हम जब तक चंडीगढ़ में रहे, वे प्रतिदिन बारह से एक बजे दोपहर तक मेरे साथ रहते और छोले-भटूरे का भोजन करते हुए हम कई तरह की बातें करते रहते ।

लोगों ने नयी-नयी जातियों के फूले हुए पेड़ देखे । पंडित जी ने पूछा था कभी— "तुमने पीले फूल वाले बौने वृक्ष देखे ?"

"हां, देखा ।"

"जानते हो, यह क्या है ? यह अपने देहाती भकवड के संकर से बना बौना

वृक्ष है। किसी ने रोज गार्डेन देखा, किसी ने 'रॉम्यूज़ियम' देखा । मैं बहुत पहले यह सब देख चुका था जब पंडित जी ने बहाना बनाकर मुझे चंडीगढ़ बुलाया।

हमारे विभाग में यू. जी.सी. की ओर से ऐतिहासिक व्याकरण और ऐतिहासिक सामग्री की खोज के प्रोजेक्ट्स चल रहे थे । यू. जी. सी. ने पंडित जी को कार्य परीक्षा के लिए नियुक्त किया और वे बनारस आये । उसके पहले कादंबिनी के प्रवेशांक में उनका निबंध 'कुटज' और मेरी कहानी 'अंधकूप' साथ-साथ प्रकाशित हुई थी । मैं प्रयाग होटल के कमरे में राव साहब द्वारा उद्घाटन-पूर्व प्रदत्त कादंबिनी का अंक पढ़ गया । मैंने लिखा कि आपके कुटज ने झकझोर दिया । अपनी पराजय को विजय में बदल देने वाली इस जिजीविषा को नमस्कार । शापित कालिदास हुए या नहीं, मैं नहीं जानता, पर आप ऐसे कालिदास हैं, जो रामगिरि पर नहीं, शिवालिक पर आरूढ़ हैं, आपको नमस्कार !"
उन्होंने लिखा एक कार्ड—

धन्य हैं वे देखते जो अकवि जन में सुकवि छाया छीन
हाथ में है कुटज पर कादम्बिनी देखी न ।।

बिहारी को वे बहुत सराहते थे । दोहे लिखने की उनकी शैली हमेशा मन को मोहती रही । उन्होंने यू. जी. सी. को लिखा कि सामग्री संकलन के लिए उपनिदेशक डॉ. शिवप्रसाद सिंह को चंडीगढ़ भेजा जाय । तब उनकी चिट्ठी आयी—
'प्रियवर,
चंडीगढ़ आ रहे हो, खुश होगे । यहां निंदा के बदबूदार गटर नहीं हैं । प्रतिभा से चिढ़कर कोई गुंडई नहीं करता । आओ । स्वागतम् ।'

मैंने आपसे बताया नहीं । चंडीगढ़ के प्रो. सुधाकर पांडेय की सहानुभूति और संवेदना ने हम लोगों को इतना प्रभावित किया कि हमारे साथ के शोध छात्रों के लिए वे खानाबदोशों के परिवार के मुखिया हो गये ।

एक दिन विजयी (डॉ. विजय नारायण सिंह) ने कहा कि पांडेय जी कह रहे थे, "मैंने ऐसा तो आदमी नहीं देखा जो पुत्री की चिकित्सा के लिए डेढ़ लाख फूंकने का निश्चय कर ले । यह सब पुत्र या पत्नी के लिए तो हो सकता है, पर पुत्री के लिए इस तरह से परेशान रहने वाला मैंने कोई व्यक्ति नहीं देखा ।"

विजयी ने कहा, "वे पुत्र-पुत्री में भेद नहीं करते । वे इन सब चीजों से ऊपर

उठ चुके है ।"

पर क्या इतना कह देने मात्र से वह गलीज परंपरा हमारा पिंड छोड़ देगी जिसे भोजपुरी मर्द, औरतें और पुत्र और पुत्रियां युगों से ढोती आयी हैं । अत्यंत गहराई से चीजों को सोचने-समझने वाला मेरा देहाती मन तिलमिला उठता है, जब मैं निम्नलिखित पंक्तियां सुनता हूं—

बिनु ब्याही कन्या मरे ठाढ़ी ऊख बिकाय
बिनु मारे मुदई मरे तीनों टलीं बलाय

पुत्री शायद इसमें सबसे बड़ी बला है । अगर वह शादी होने के पहले मर जाय तो कितना बड़ा सुख मिलता है ? किसान ईख उगाता है, महीनों इसे तैयार करने में खून-पसीना एक करता है किंतु वही ईख एकदम विकास के अंतिम बिंदु पर पहुंच जाय और कोई मिल-मालिक खरीदने के लिए तैयार न हो तो वह ईख ही बला बन जाती है, ऐसी बिक्री योग्य ईख अगर बिना पद्राग के खेत में खड़ी-खड़ी बिक जाय, दुश्मन बिना मारे मर जाये तो तीनों बलाओं से मुक्ति मिल जाती है ।

उस दिन हीमो डायलसिस हुई । मंजु काशी से चंडीगढ़ की यात्रा में लथ-पथ हो गयी थी । हम उसे अस्पताल से छुट्टी दिलाकर अतिथिशाला ले आये । जाड़ा बहुत तेज था । वह चारपाई पर बिस्तर डाले दिन भर धूप में सोती रही । मैं बगल वाली चारपाई पर लेट गया, धूप की गरमाहट से आंखें झपने लगीं । तभी वह सिक्ख युवक आया ।

"सर, मेरे प्रोफेसर ने पूछा है कि अब आगे का प्रोग्राम क्या है ?

"प्रो. मैनी ने ?"

"हां सर "

तभी नीचे से कोई मलंग गाता हुआ जा रहा था । उसकी आवाज में बांसुरी नहीं, वायलिन का दर्द और दिल के तारों में एक अद्भुत गमक थी । थोड़ी उभरी मोटी आवाज जैसे सारंगी से निकलती है, जिसके साथ होड़ लगाता वह गा रहा था—

मैनू आ-आ पूछन लोग
मैं की दसां खुद न जाणां
मैनू की आक्खा रोग
उखड़े-उखड़े सास समय दे

मोईयां-मोईयां राह बा
मैनूं दस्सो या बड़ोलियो
मैंने किधर नू जाणां ।

"क्यों गुरमित, तुम इसे जानते हो ? पता नहीं यह गीत है या मुक्त वृत्त ।

सर, मैंने पूरा तो याद नहीं क्योंकि गीत लंबा है फिर भी इस टुकड़े का मानी जानता हूं ।"

"क्या मानी है ?"

"मुझसे आ-आकर लोग पूछते हैं । जिसे मैंने खुद नहीं जाना उसे कैसे बताऊं। अपना तो और किसिम का रोग है । समय की सांसें टूट रही हैं, भरी-भरी राहें हैं, बवंडरो मुझे बताओ, हम पनाह लेने कहां जायं ?"

"अच्छा गुरमित, तुम जाओ । मैनी साहब से कहना कि हम कल दिल्ली के लिए प्रस्थान करेंगे ।"

"नमस्कार सर !"

"नमस्कार, गुरमित, मैं तुम्हें कभी भूल नहीं पाऊंगा । खून देना आसान नहीं होता, और जिसने खून दिया वह तो खून का हिस्सा ही बन गया ।"

गुरमित चला गया पर मेरे मन में ऐसी हलचल जगा दी कि दम घुटने लगा— बता दो, बता दो, बवंडरो, 'बड़ोलियो', हमें कहां शरण मिलेगी ?"

दिन ढलता गया ।

"बाबूजी !"

"बोलो ।"

"मुझे कुछ शापिंग करनी है ।"

"चलो, मैं कपड़े बदलकर अभी आ रहा हूं ।"

उसने सतारा (सत्रह) नंबर सेक्टर से कुछ चीजें खरीदीं । इस लड़की की एक आदत मुझे बहुत अच्छी लगती थी कि वह कम कीमत वाले कपड़े आदि खरीदती थी । हां, यह जरूर होता कि कलर, बेलबूटे तथा कुर्ते-सलवार और दुपट्टे के सेट को चुनने में देर होती थी ।

वह कम दाम के तीन-चार सेट लेकर चल पड़ी । "बाबूजी, क्या अपने लिए कुछ नहीं खरीदेंगे । देख रही हूं कि धीरे-धीरे आप इतने विरक्त होते जा रहे हैं कि माताजी जो खरीदकर ला देती है, वही पहनते हैं । आपको किसी जमाने में लोग राजकुमार कहते थे, प्रिंस । और आज वह समय आ गया है, आप सन्यासी हो गये हैं ।"

"यह तो स्वाभाविक है बेटे, पिछले वर्षों को लौटा तो सकता नहीं । यह ठीक है कि मैं उन्नीस सौ तिरपन से तिहत्तर तक कीमती खादी सिल्क और सौ

रुपये जोड़ी वाली धोतियां पहनता था, पर जब मेरे ऊपर ईश्वर की पुनः कृपा हुई, घर में घुटने चलने वाला प्राणी आया, नरेंद्र 1957 में और 1960 में तुम आयी तो मुझे अपने कपड़ो से ज्यादा जरूरी दूध हो गया तुम लोगों के लिए । मुझे तो विश्वास ही नहीं था कि कभी फिर किलकारियां गूंजेंगी इस घर में ।

तुम्हारे मनोबल से ही पता चलता है कि तुम किस श्रेणी के प्राणी हो।

"क्या सोच रही हो मंजु ।"

"वही पंक्तियां जो आप रोज सिखाते थे कि "महान व्यक्ति का अनादर होने पर भी उसके स्वाभाविक गुणों को नहीं मिटाया जा सकता । लकड़ी आदि की प्रज्वलित अग्नि को नीचे की ओर झुका देने पर भी उसकी लपट नीचे की ओर कभी भी नहीं जाती, सदा ऊपर की ओर ही उठती है ।"

"तेरा पिता फटीचर हो सकता है, पर उसने कभी याचना नहीं की है । उसके भीतर जल और जंवाल नहीं, सिर्फ अंगार और लपट है ।"

कदर्थितस्य महाशयस्य न शक्यते सर्गगुणः प्रमार्ष्टुम्
अधोमुखस्यापि कृतस्य वह्नेः न अधः शिखा याति कदाचिदेव।

5

अधखुली तकिये पे होगी इल्मो-हिकमत की किताब
वसवसों, वहमों के तूफानों में घिर जायेंगे हम

—ज़ेहरा

यही तो पीड़ा है । आज का आदमी विज्ञान की रोशनी में वहुत कुछ देख सकता है। पर बुरी शंकाओं, वहमों के तूफानों में घिर गया है ।

मैंने कभी भी अवचेतन में अपने को डूवने नहीं दिया । मुझे लोकातीत ग्रहों या भूत-प्रेतों में विश्वास नहीं है । मैं तो प्रायः ओझैतों का उपहास करता रहा हूं । मैं दुर्गापूजा में ज्यों ही गांव पहुंचता, मलेरिया में डूव जाता । मेरे वावा गणेश सिंह यह जानकर वहुत खुश हुए कि अव वाहर से ओझैतों को बुलाने की कवाहट छूटी। क्योंकि अव तो दुर्गा वच्चा सिंह के ऊपर भी चढ़ जाती थी । वहरहाल वच्चा सिंह आये । वावा बोले, "जरा डपट के वोलऽऽ ! कौन है ई ? साली । एही महीने में मेरे नाती पर क्यों चढ़ती है ?"

वच्चा सिंह पर अचानक दुर्गा चढ़ी और चिल्लाये. "मैं मरी हूं, मरी ।" सारा गांव जानता था कि कभी शिवटहल सिंह के खानदान के किसी व्यक्ति ने चमाइन को मार डाला फिर सव कुछ को 'मरी' कहकर गणेश सिंह को भरमाया जाता था ।

"ऐ साली मरी, वोल हरामजादी, हमरे सेवक को काहे परेशान कर रही है ? वच्चा सिंह ने चुचुकार की मरी से, प्रार्थना की कि छोड़कर भाग जा । अव वच्चा सिंह से पाला पड़ा है । छछात दुर्गा उनके माथे पर वैठ जाती है । हो जा होशियार । कसम खा साली वरना..... । वस वस च् च् च्, खवरदार, नाहीं रे तोरे भगत क इज्जत चल जाई । दुर्गा जलाकै खाक कै दे एके ।" अभुवाते-अभुवाते वच्चा सिंह ने वड़े जोर से दोनों केहुनियां पटकीं और चिल्लाये, "का हो तोहरे फरस में इटा क टुकड़ा हौ । ईस्साला कहां से आयल । देखऽऽ एक ठे केहुनी लहूलूहान हो गइल ।"

"का हो ओझा, साली केहुनी पर चोट लगते ही भाग गइल दुर्गा ।"

"चुप रह, जा आज के बाद तोहरे दुआरे मूते भी ना आइब । तोहार नाती चिरौरी करत हौ ।"

"अरे हम काहे ई सब करब ओझा बाबा, हम त दुर्गा माता क ध्यान करत रहीं।"

"तब ?"

"तब का ।"

ऐसे ही एक प्रसंग में हमारे गांव के पुरोहित और दुर्गा उपासक श्री उदयनारायण उपध्याय ने कहा, "बचवा, हम तो आज से काली मंदिर में जाइब बंद कइ देब ।"

"क्यों बाबाजी," मैंने हैरानी का भाव जताते हुए कहा, "का केहू आप क अपमान कइलस हौ ।"

"अब एके तू जौन चाहा तौन कहा ।" उदयनारायण जी बोले, "हम बहुत दुखी हैं बचवा । चैत नेवरातर त चौपट होई गयल आ एक ठे संदेहो भी चुभा गइल । आज उत्तर टोला एक एक ठो भगत कुदारी-उदारी चला के मंदिर के नीम तले छहात रहे ।" फिर डपट के बोले—"हट साली, हम कह चुकल हई हजार बार कि हम अभी नहाये नहीं हैं । चली जा इहां से ।" वे इतना जोर-जोर से डांटते रहे कि हमने पाठ करना बंद कर दिया । बाहर आकर हाथ जोड़ कर पूछा, "बाबू साहब, ई कौन था जिसे डांट कर भगा रहे थे आप ?"

"ई दुर्गा थी महाराज !"

"दुर्गा ?" मैंने अचरज से पूछ "आप दुर्गा को साली कह रहे थे ?" वे बोले, "अउर का ।"

"बचवा हम तो धसक गये जमीन पर । आज पाठ बांचते, पूजा करते बारह साल भइल, पर दुर्गा माता के नाखून कै भी दरशन ना भइल ।" आऊ बाबू साहब पर चढल चाहती है, आ बाबू साहब हैं कि ओ के दुरदुरा रहे हैं कुतिया की तरह।"

प्रश्न था तत किम् । क्या करना है । क्या कर सकता हूं ।

बनारस लौटने के बाद दो-तीन सप्ताह बीते होंगे कि उसकी स्थिति एकदम चिंतनीय बन गयी ।

"कुंडलिया" देखाई ओकर ? पत्नी ने कहा ।

मैं क्या दिखाऊं । मन में अभिमान के स्फुलिंग उठने लगते । कौन है काशी में कुंडली देखकर बताने वाला । अगर मैं नहीं सोच पा रहा हूं कि यह बाढ़ मेरे घर में घुसकर क्या कर पायेगी क्या बहेगा, क्या बचेगा-तो दूसरा कोई क्या बता पायेगा ।

एक दिन पता चला कि कोई तांत्रिक रहते हैं, चेतगंज से गोदौलिया जाने वाली सड़क पर । मैं उनके पास गया । उन्होंने काफी सोच-समझकर कहा, एक काला तागा ले आइएगा । उसकी लंबाई बेटी के बराबर होनी चाहिए । ऐसे भी काफी देर हो चुकी है । कल शाम को यहीं आकर इन दुकानदार साहब से कहियेगा तो ये मुझे घर से बुला देंगे ।

शाम को हम दुकान पर पहुंचे । वह अति साधारण दुकान थी । वहां मकान निर्माण में सहायक सीमेंट, लोहे के छड़, सीवर के मोटे पाइप आदि रखे हुए थे, पर वह इन वस्तुओं से अपनी निर्धनता छिपाने में असमर्थ थी ।

"बुलाइए उनको ।" मैंने कहा ।

"आप सामने वाली बेंच पर बैठ जाइए, मैं खुद जाकर बुला लाता हूं ।" दुकानदार ने कहा और दुकान की रक्षा का भार मुझपर थोप कर चला गया । आधा घंटा बैठने के बाद वे तथाकथित तांत्रिक आये ।

"कैसी तबीयत है ?" उन्होंने पूछा ।

"खराब ही है ।"

"तागा लाये हैं ?"

मैंने वह काला तागा उन्हें दे दिया । वे तागे को मुट्ठी में बंद करके फुसफुसाये, कोई मंत्र या उसी से मिलती-जुलती चीज थी वह । फूंक मारकर वह तागा उन्होंने मुट्ठी से निकाला और दुकानदार के फीते से उसकी लंबाई नापी । उन्होंने धागे को इस बार बायीं हथेली में दबाया वही फुसफुसाहट, वही फूंक । उन्होंने इस बार जब तागे को नापा तो वह दो इंच छोटा था ।"

"देखा आपने ?

"मैं कुछ समझ नहीं पाया जनाब !" मैंने कहा, "जरा समझाकर बताइए।"

"जब मैंने पहली बार मुट्ठी में बंद धागे पर कुतुबशाह को बुलाकर फूंक मारी तो उन्होंने सारा भेद बताने का वादा किया । दूसरी बार साईं बाबा को जब फूंक मारी तो यह धागा दो इंच छोटा हो गया । मतलब यह कि यह प्रेत-बाधा है । यह अब तक बहुत कुछ छीन लेती, पर आपकी बेटी पर दुर्गा की कृपा है, वही रक्षा कर रही है ।"

"करना क्या है, यह बतलाइए" मेरे कथन के व्यंग्य को वह भांप चुका था ।

उस आदमी ने मुट्ठी में धागे को बंद किया और बोला, "साफ-साफ बता दो कुतुब बाबा ।" इस बार धागा पहले जैसा हो गया, यानी उतना ही लंबा, जितना मैं मंजु को नापकर लाया था । यह है जवाब कुतुब शाह का कि जैसे तागा घटा वैसे ही मरीज तकलीफ तो पायेगा । पर अगर ठीक तौर से इंतजाम किया जाये तो जैसे तागा बढ़कर फिर मरीज बराबर हो गया, वैसे ही यह मरीज रोग से छूट

जायेगा । लीजिये यह है कपड़े की बत्ती । घर पर जाकर एक दीये में सरसों का तेल भर दीजिएगा । उसमें पहले बत्ती डालिएगा । उसे सलाई से जलाकर बिजली आफ कर दीजिएगा । बीमार से कहिएगा कि जलती हुई बत्ती की तरफ देखे । सबसे जरूरी है कमरे के भीतर की गंध को पहचानना । अगर श्मशान जैसी गंध हो तो आकर बताइएगा । मैं इक्कीस दिनों के भीतर इस उपद्रव को शांत करने का व्रत लेता हूं ।"

"महाराज, आप श्मशान की गंध की बात कर रहे हैं और कुतुबशाह को सहायता के लिए बुला रहे हैं । क्या आपके साईं बाबा या कुतुबशाह को श्मशान की गंध को पहचानना आता था ? वे लोग तो दफनाये गये होंगे ।"

"आपको विश्वास न हो रहा हो तो इसे छोड़िए । इस लड़की पर ब्रह्मराक्षस की कुदृष्टि है और कुतुबशाह जैसा फरिश्ता या जिन्न ही रोक सकता है । ब्रह्मराक्षस को रोकने में हिंदुओं की कोई भी प्रेतात्मा सफल नहीं होती । चाहे वह दैतरा हो, वीर हो, या कोई भी हो, वह असफल हो जाता है क्योंकि ब्रह्म-हत्या के कुफल को कोई टाल नहीं सकता ।" "यानी जितना मजबूत ब्रह्मराक्षस है उतना ही मजबूत जिन्न भी । वह भी उसे रोक नहीं सकेगा, यह तो कुतुबशाह की मेहरबानी है कि वे आपकी परेशानी दूर करने के लिए तैयार हो गये ।" मैं जब चलने लगा तो दुकानदार बोला, "हुजूर जिस आदमी ने आपका घबराया चेहरा देखर कुतुबशाह जैसे फरिश्ते को बुलाया, उन की पूजा भी जरूरी है ।"

"क्या-क्या चढ़ता है कुतुबशाह की पूजा में ?"

"वही बेले की माला, घी के दीपक और बेशकीमती सिल्क की एक चादर।"

"कितना दे दूं ?" मैंने मुस्कराते हुए पूछा !

"एक हरा पत्ता तो दे ही दीजिए ।" दुकानदार ने कहा ।

"क्यों हुजूर, इस पूजा में दुकानदार का कमीशन भी तो होता ही होगा ? न हो तो बताइए, वह भी हाजिर करूं ।"

"नहीं हम लोभी नहीं हैं ?" तान्त्रिक जी बोले, "हम तो इस नोट से एक नया पैसा भी खर्च नहीं करेंगे । कुतुबशाह बाबा ने कसम दिलायी थी कि अगर तूने इसे धंधा बनाया तो तू निरबंस हो जायेगा ।"

कुछ समझ में नहीं आ रहा था । मैं जब सायटिका से पीड़ित हुआ और तमाम विशेषज्ञों से मिलकर उसका निदान जानना चाहा, तो शून्य बस शून्य।

"जरा पता लगाओ" गुरुवर द्विवेदी जी ने कहा, "कभी-कभी डांड़-मेड़ पर बने हुए चौंरे खेत का हिस्सा मानकर जोत लिए जाते हैं । ऐसे ब्रह्मराक्षसों से बचना बहुत मुश्किल होता है । क्या कभी ऐसा हुआ ?" मैं जानता था कि डॉक्टर

सायटिका 'नर्व' को जाम करने के लिए इंजेक्शन लगाते हैं । मेरे साथ परेशानी यह थी कि लंबी से लंबी सूई, सायटिका 'नर्व' को लोकेट नहीं कर पाती थी । सायटिका वेध करने वाले संस्कृत विश्वविद्यालय के आयुर्वेद सेक्शन में एक ऐसे व्यक्ति थे जो एक खास ढंग से सायटिका नर्व को घुटने के ऊपर छेदकर रक्त निकालते थे ढेरों, अगर यह सब आपने न कराया होता तो आप न केवल लंगड़े हो जाते बल्कि पैरेलसिस का भी डर था ।" तबभी उनकी सारी शिरावेध की पटुता धोखा दे गयी । मेरे रोग पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा ।"

दूसरी ओर मेरे साले दरोगा सिंह ने बहुत लंबी-चौड़ी डींग हांकने वाले एक प्रेतबाधा-विनाशक की चर्चा की । मेरी पत्नी और उनके भ्राता के अवचेतन में ये सब क्रियाएं इतनी भीतर पैठ चुकी थीं कि मैंने चाहकर भी उसका विरोध नहीं किया । चलो यह भी देख लो, पांच सौ-या हजार, इस पर भी खर्च कर दो ।"

दरोगा सिंह तीसरे ही दिन आये । उनके पास एक कागज था, जिस पर वहां बैठे किसी साक्षर व्यक्ति ने लिखा था कि शिवप्रसाद सिंह को लाट बरम परेशान कर रहा है । यह बरम उनके परिवार का नही है, वह पूरब से आया है । जब इनके पिताजी ने बखरी को पक्की बनवाने का निश्चय किया तो लोगों ने ओझा सोखा बुलाकर नींव में ही खड़ाऊं, जनेऊ, चंदन, कपूर आदि रखकर उसे वहीं स्थापित कर दिया । दवा बतायी थी तांत्रिक या ओझा ने— भींगे हुए चने के साथ केशोर गुग्गुल की दो गोली सुबह-शाम । लाट बरम यानी सबसे अधिक क्रूर और भयानक ब्राह्मण प्रेत । किंतु इस ब्राह्मण को मैंने कभी इस योग्य नहीं माना कि एक अगरबत्ती जलाकर इसे रिझाऊं, इसे देखने की तमन्ना थी किंतु इस लाट बरम की हिम्मत न थी कि मेरे सामने खड़ा हो और मेरे सपनों में आये, जबकि मेरे लघु भ्राता शंभू सिंह को उसने सपनों में सैकड़ों बार दर्शन दिये । अपनी काहिली, हतोत्साहिता और असफलता के लिए इस लाट बरम के मत्थे सब कुछ मढ़कर वे मेरी सगड़ी पर चढ़ गये । यानी पचीस एकड़ की फसल से भी उनका खर्च नहीं चलता । सब तो लाट बरम ने चौपट कर दिया, "मैं क्या करूं" वे बोलते बस एक उत्तर । हर रोग को बरम की खूंटी पर लटका देते । जिसने त्रिभुवन मोहिनी राजराजेश्वरी के चरणों में अपने को सौंप दिया, वह इन ताल-तलैयों पर क्या बैठेगा ।

मुझे न तो इस प्रेत से भय था, न तो इसकी कृपा की आकांक्षा, न तो इसे रखने या भगाने में रुचि । यह सब करता तो इस लाट बरम को हजारों रुपये देकर पिंड छुड़ाता । मैं भी उसकी निरंकुश ताकत को ललकारता । "गहरी बावड़ी की भीतरी दीवार पर / तिरछी गिरी रविरश्मि / के उड़ते हुए परमाणु / जब तक पहुंचते हैं कभी । तब ब्रह्म राक्षस समझता है / सूर्य ने झुककर नमस्ते कर दिया / पथ भूलकर जब चांदनी की किरण टकराये / कहीं दीवार पर । तब ब्रह्म राक्षस

समझता है / वंदना की चांदनी ने / ज्ञान गुरु माना उसे / अति प्रफुल्लित कंटकित तन मन वही / करता रहा अनुभव / नभ ने भी / विनत हो मान ली है श्रेष्ठता उसकी ।"

सूर्य-चंद्र इसे माथा झुकाते होंगे, अपने अहं की तुष्टि के लिए उसे लगता होगा । विश्व में इस तरह के काले जादू का अपना एक साम्राज्य रहा है । आदमखोर पशुओं की तरह आदमखोर बरम, प्रेत, पिशाच के विकास की भी एक परंपरा रही है । किंतु एक ओर ध्वनि से भी दूनी-तिगुनी गति से चलने वाले विमान हैं । गांव-गांव दूरदर्शन केंद्रों की स्थापना करने वाले भारत में मारुति के साथ बैलगाड़ी अब भी चलती है । एक साथ भौतिक विज्ञान है तो इसी से सटता वह अथाह अवचेतन भी है जिसमें वहशीपन और अंधविश्वास गड्डमगड्ड होकर चल रहे हैं । यह सब मैंने पंडित जी को नहीं बताया । वे मेरी सायटिका से इतने उद्विग्न थे कि प्रतिदिन शाम को वे 'सुधर्मा' आने लगे । मुझे 'गली आगे मुड़ती है' पर प्रेमचंद पुरस्कार मिला । पुरस्कार स्वीकार करके सब लोगों के साथ जलपान हेतु एक लंबे हाल की ओर चले तो मैं बेहोश होकर गिर पड़ा । गिरते वक्त मुझे लगा कि किसी ने सर अपनी जांघों पर रख लिया है । बाद में पता चला कि वह व्यक्ति प्रो. शीतांशु थे ।

राज्यपाल के निजी डॉक्टर को बुलाया गया

सब कुछ देख-दाखकर वे बोले, "कहिए, कैसी तबीयत है ?"

"ठीक है ।" मैंने कहा ।

उन्होंने कहा, "यह हीट स्ट्रोक के कारण हुआ ।"

कोई खास बात नहीं है ।"

पंडित जी रात नौ बजे लौटे । उन्हें राज्यपाल से एक जरूरी बात करनी थी । रास्ते में उन्हें किसी ने सूचना दी होगी । वे लगभग दौड़ते-हांफते सीढ़ियां चढ़कर मेरे कमरे में आये और भर्राये कंठ से बोले, "का हो, तबीयत कइसन बा।"

वे सर से लेकर पैरों के तलवों तक सहलाते रहे मौन । मेरे साथ पद्मपति शर्मा और चीगरन भी गये थे ।

उन लोगों ने बहुत आग्रह किया कि आज बहुत ही जोरदार सब्जी बनी है । उन्होंने कहा, "खा ल तू लोग ।"

मैं जब भी उन स्पर्शों के बारे में सोचता हूं, जब भी साधनापूत हथेलियों की छुवन का अनुभव करता हूं तो मन श्रद्धा से भर जाता है । कोई कुछ भी कहे, मैं जानता हूं कि वे एक साम्यवादी शिष्य के भड़काने से साहित्य अकादमी में पुरस्कार देने नहीं गये । उस बाबत एक लंबा पत्र है मेरे पास, मनोहर श्याम जोशी का । जिसमें सारी स्थितियों का जिक्र है क्योंकि उस वर्ष के वे भी निर्णायक थे ।

मैंने उन्हें सिर्फ गुरु ही नहीं माना, बल्कि पिता से भी अधिक ममतालु अभिभावक मानता रहा और रहूंगा ।

पंडित जी ने ब्रह्म-तोष पर एक अद्‌भुत घटना बतायी ।

चंडीगढ़ में उनके एक भोजपुरिया भक्त थे जिनकी दोनों पुत्रियों को अचानक कोढ़ हो गया । वे लोग एक तांत्रिक के पास गये ।

उन्होंने कन्याओं को देखा और बोले, "इन दोनों को पाठ करना पड़ेगा, पंडित जी ।"

"किस चीज का पाठ करना होगा ?"

"रघुवंश का ।"

पंडित जी ठठाकर हंसे, अब इतनी ऊंची साहित्यिक रचना भी आधि-व्याधि दूर करने वाली वस्तु बन गयी ।" पंडित जी गंभीर होकर बोले, "मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि मनोयोगपूर्वक कन्याओं ने रघुवंश का पाठ किया और वे कुष्ठ से मुक्त हो गयीं ।"

"इसमें एक 'क्लू' तो साफ-साफ झलकता है ।" मैंने कहा ।

"वह क्या ।"

"कुमार संभव में शिव-पार्वती के भोग-विलास का जो अश्लील वर्णन है, कहते हैं कि उसी कारण कालिदास को कुष्ठ हुआ और उसको दूर करने के लिए उन्होंने रघुवंश लिखा ।"

"हां, इस संकेत पर मेरा ध्यान नहीं गया था ।"

"चलिए अच्छा हुआ कुछ तो साहित्य-परायण किया ही विचारियों ने । आपने जिनका परिचय दिया उनका नाम, ग्राम, पता कुछ मालूम है आपको ?"

"वही तो मालूम नहीं है ।" पंडित जी ने कहा, "क्या तुम इन बातों पर विश्वास करते हो ?"

"मैं तो नहीं करता मगर जब आप कह रहे हैं तो मैंने सोचा कि इनके भी गिरगिटिया रंग-परिवर्तन का स्वांग मिटा दूं ।"

"लोगों ने तब गलत कहा है तुम्हारे बारे में ।"

"क्या गलत कहा है ?"

"तुम रहस्यात्मक वस्तुओं में रुचि लेते हो ।"

"असल में जो व्यक्ति आज की दुनिया में फिट नहीं बैठता है उस पर यह वाक्य मढ़ दिया जाता है। रहस्यात्मक वही होता है जो दुनियादारी नहीं जानता। उन लोगों ने ही कहा होगा जिन्होंने अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर ली होगी । मैं पहले चिंतित हुआ कि नरेंद्र के लिए कोई मार्ग ढूंढूं । क्योंकि तब वह जनवादी कवि नहीं बना था, अब तो मैं उसके बारे में सोचता भी नहीं । अगर साल में वह

तीन-चार बार गांव चला जाय तो खाने-पीने की तमाम चीजें अन्न और सब्जी, आलू, प्याज वगैरा ले आ सकता है ।.मुझ से कौन सा स्वार्थ सिद्ध हो सकता है, फिर यदि मुझे सताना जरूरी हो तो टकराओ । लड़के से मत लड़ो । लड़ोगे तो मैं छोड़ूंगा नहीं । रहस्य तो मैं हूं । गुरुदेव न होता तो जाने कब का पिस गया होता।

जीवन में पता नहीं कितने दुःखद क्षण आये, पर उनमें सबसे अधिक पीड़ा अपने छोटे-छोटे दो बच्चों की मृत्यु से हुई । सत्य तो यह है गुरुदेव कि जिस आदमी को स्वर्ग-अपवर्ग-मोक्ष कुछ भी नहीं चाहिए, वह शायद विशिष्ट हो जाता है । उसे ही नकाब उढ़ाकर लोग पीटते है कि यह है अंधविश्वासी, यह है वो । मगर नास्तिक क्या सचमुच के अंधविश्वास में अपने को छुपाने का प्रयत्न नहीं कर रहे । अगर कोई छिपी शक्ति है तो स्वीकार रहस्यवादी है क्योंकि वह तुम्हारे अहंकार से उपजी है तुम समझने का दंभ ढो रहे हो यह तुम्हारी सीमा है कि तुमने इतना विलंब से जाना । और अगर नहीं है तो नकार रहस्यवादी है । गुरुदेव, मेरे लिए रहस्यवाद और चमत्कार उसी दिन मर गये जब मैंने मानव के अलावा किसी दूसरी चीज को केंद्र में रखना अस्वीकार कर दिया । मैं सिर्फ एक लेखक हूं । छोटा हूं, जानता हूं । विस्फार आदत नहीं, संकोच से डर नहीं । हां, यह जरूर है कि मैं किसी चबूतरे पर सांड के ककुद् की तरह खड़े तिकोने पत्थर के सामने शीश झुकाना अपनी हेठी मानता हूं । 'मैं पतित हूं, मुझे बचाओ' जैसी प्रार्थनाओं में तन्मय लोगों को मैं निकृष्ट लुजलुजा, रीढविहीन कहता हूं । डंके की चोट पर ।"

पंडित जी को शायद अपने शिष्य की वाचालता पसंद नहीं आयी । बोले, "मैं तो भाई, विनय पत्रिका जरूर पढ़ता हूं । खैर अगर तुम नास्तिक ही हो तो ज्योतिष में रुचि क्यों, ग्रहों से दया की याचना क्यों ?"

मैं हल्के हंसा, "आपको खरोंच लग गयी शायद । यह मेरा उद्देश्य नहीं था । रही बात ज्योतिष की तो मैं बता ही दूं आपको— यह कोरा स्टंट है यह सही है कि भारतीय निरयण तथा पाश्चात्य सायण पद्धति की हजारों कुंडलियों के विश्लेषण से भरी अस्ट्रोलोजिकल मैगजीन के पूरे खंडों को ही नहीं चीनी, जापानी ऐस्ट्रालॉजी भी मैंने पढ़ी है ।"

"क्यों पढ़ा यह सब ।" पंडित जी मुस्कराये ।

"इसलिए गुरुदेव कि मैं इसे होक्स मानता हूं । पर बिना जाने-परखे बिना पढ़े-लिखे मैंने कभी भी किसी भी चीज पर फतवा नहीं दिया । युंग ने तीन सौ कुंडलियों का अध्ययन करके उसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि कहा था । प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक युंग ने ज्योतिष के रहस्य को जानने की इच्छा से यूरोप और अमेरिका से करीब चार सौ कुंडलियां मंगायीं और वे केवल सप्तम भाव पर विचार करते रहे, उन्होंने वैवाहिक जीवन के बारे में उन व्यक्तियों से पूछा तो उन्हें

आश्चर्य हुआ कि पचहत्तर प्रतिशत कुंडलियां एकदम मिलती दिखाई दीं उन्होंने ज्योतिष को एक विकसित मनोवैज्ञानिक परंपरा का सायंस कहा । मैं मात्र स्पेकुलेटिव सायंस कहता हूं इसे ।"

"फिर तुमने मेरी बीमारी ठीक होने की जो असाधारण भविष्यवाणी की वह क्या थी ।"

"जाने दीजिए पंडित जी !"

"बोलो..." इस बार हुंकार में हुकुम भी था ।

"वह सब स्टंट था गुरुदेव ! आप पुनः स्वस्थ इसलिए नहीं हुए कि ऐसा होने ही वाला था । उसमें 15 प्रतिशत ज्योतिष 25 प्रतिशत मेरे इंट्यूशन का प्रयोग और शेष था आपके भीतर का विल पावर— अदम्य इच्छा-शक्ति की दृढ़ता, ये सब एक में एक ऐसे गुंथ गये थे कि बीमारी को भागना ही पड़ा ।"

"ठीक है ठीक है ।" वे एक क्षण चुप रहे, बोले, "लोग शायद ठीक नहीं कह सके ।"

"क्या ?"

"यही कि तुम अंधविश्वासी हो ।"

"गुरुदेव, आप बालक की ढिठाई को क्षमा करिएगा, आप की साधना-पद्धति और मेरी साधना-पद्धति में बहुत अंतर है । आप मानते हैं कि छोरा कृष्ण और छोरी राधिका का चित्र कैलेंडर से काटकर शीशे में मढ़वाकर रखने से ध्यान में बहुत आसानी होती है । मैं अंधविश्वासी हूं गुरुदेव, क्योंकि मैं छोरा-छोरी के चित्र को लक्ष्य नहीं बनाता जिसे मैंने देखा नहीं, महसूसा नहीं, किसी तरह से भी मेरी पांचों ज्ञानेंद्रियां उसे पकड़ नहीं पायीं उसे मैं कैसे मान लूं ?"

"यानी तुम नास्तिक हो ।"

"नहीं गुरुदेव, मैं पूर्ण आस्तिक हूं ।"

"कैसे ?"

"वह इस तरह कि मैं सभी अनपहचानी चीजों में संदेह करता हूं अतः मैं संदेहवादी हूं और एक प्रबल सत्य अपने आप कौंध उठता है कि मैं संदेह करता हूं अतः मैं हूं । यह देकार्त का कथन है । मैंने इसी 'मैं' के सहारे संसार के तमाम योगी, अवधान-सिद्ध बौद्धिक, दर्शन-वेत्ता, वैज्ञानिक, कवि, कथाकार यानी सबसे जो कुछ मिला है उसे आत्मसात् किया है । ये सब अलग-अलग नहीं रहते बल्कि एक बहुत बड़े वैश्विक चेतना से, विराट मस्तिष्क से जुड़ जाता है । इसे मैं हीगेल के शब्द का सहारा लूं तो कहूंगा 'वर्ल्ड माइंड' । मैं विश्व-चेतना से जितना ही निकट से निकटतर होता जाऊंगा वह चेतना मुझे विश्व मस्तिष्क के अथाह रहस्य को बताती चलेगी । 'मैं हूं और न हूं' के बीच जो चकराते हैं वे ही दूसरों को अंधविश्वासी कहते हैं । बुद्ध, महावीर, लावोत्से, जेन आदि सभी ईश्वर को नहीं

मानते । वे साधक नहीं थे ? लंकावतार सूत्र का रचयिता तो यहां तक कह देता है कि पंचभूतों से अनुभूत जो है वही है, शेष भ्रम है ।"

"अरे भाई यह दर्शन कहां से आया । तुम लोग पता नहीं किस किस पोथी का नाम ले लेते हो और मैं आश्चर्य में चकित रह जाता हूं— लंकावतार सूत्र का लेखक कौन है ?"

"बोधिधर्म ।"

"वह कौन था ?"

"गुरुदेव, यह आंध्र के क्षत्रिय नरेश का पुत्र था, यानी राजसिंहासन का उत्तराधिकारी । उसने ध्यान की एक नयी प्रणाली को जन्म दिया । जिसका उसने चीन और जापान में प्रसार किया । ध्यान से बना शब्द 'जेन' यह विश्व के तमाम बौद्धिकों की ललचा रहा है और सैकड़ो बौद्धिक इस जेन बुद्धिज्म पर फिदा है ।

6

विहोल्ड आइ स्टैंड ऐट द डोर ऑफ योर हार्ट
ऐंड नॉक । इफ एनी मैन हीयर माई वॉयस
एंड ओपेन द डोर, आइ विल कम इनटू हिम

(आ.ई.बी.3:20)

मैं तुम्हारे हृदय के द्वार पर खड़ा हूं, दरवाजा खटखटा रहा हूं, अगर कोई मेरी आवाज सुनता है और द्वार खोल देता है, मैं उसके पास पहुंच जाऊंगा ।" प्रभु यीशु की प्रतिज्ञा थोड़ा विश्वास जगाती है पर हुसेन के साथ यजीद भी तो होते ही रहते हैं । और होते ही रहेंगे । उस दिन 19 जनवरी, 1982 थी, यानी भारत बंद ।

हम लोग चिकित्सा संस्थान की एंबुलेंस पर बैठे बाबतपुर के हवाई अड्डे की ओर चल पड़े । हमारे साथ नेफ्रोलॉजी के एक जूनियर डॉक्टर भी थे । यानी हम किसी भी ओर से 'रिस्क' नहीं लेना चाहते थे । पर हम ज्यों-ज्यों शहर की सड़कों से होते हुए चलते गये, पुलिस और छात्रों के बीच जारी संघर्ष के नमूने दिखाई पड़ने लगे । ईंटों के अद्धों, पत्थरों के टुकड़ों और मोटर गाड़ियों के शीशों के चूर्ण से सड़कें भरी थीं । "यह तो ठीक रास्ता नहीं लग रहा है ।" मेरे किसी साथी ने कहा— "अगर आगे बढ़े तो सैकड़ों मिन्नतों को सुनने वाला कोई ऐसा छात्र-नेता भी नहीं मिलेगा, जो बीमार को समय से बाबतपुर ले जाने का हुकुम दे।"

बहरहाल हवाई जहाज लेट था तीन घंटे तक तेज सर्दी में बाबतपुर के हवाई अड्डे से सामने बनी बेंचों पर बैठे-बैठे धूप सेंकते रहे । दिल्ली जानेवाली फ्लाइट से चले। मुझे जब संदेह होता है किसी बात पर कि ऊंट किस करवट बैठेगा, यह मैं जान जाता हूं । इसी से शक्ति भी मिलती है और इसे ही लोग अंधविश्वास भी कहते हैं । मैं जानता था कि मद्रास फ्लाइट जरूर मिलेगी । हम तीन घंटे लेट पहुंचे । वायुयान खड़ा था । सहारा देकर मंजु को मैं बाहर लाया । तभी एक नवयुवक आया और उसने अंग्रेजी में पूछा, "क्या आप डॉ. शिवप्रसाद सिंह हैं ?"

"जी हां !" मैंने कहा ।

"और आपके साथ बीमार मंजुश्री यही है ?"

"जी हां !" उसने हाथ का इशारा किया और एक एंबुलेंस हमारी ओर चली, "बैठिये, डॉक्टर सिंह, हमने प्लेन को आपकी सूचना के अनुसार तीन घंटे लेट कर दिया है। अगर बीमार के प्रति हमें मानवीय बनना सिखाया जाता है तो बीमार के संरक्षक को भी कुछ सहयोग करना चाहिए।"

"क्या कर सकते थे हम ?"

"आप अपने प्लेन से उतर कर तुरत मद्रास प्लेन की तरफ बढ़ते, तो हमें कम-से-कम प्लेन के लेट होने के लिए लोगों की गालियां नहीं सुननी पड़ती।"

"आय एम रियली सॉरी, सर !"

हम दोनों को उस नवयुवक ने सहारा दिया और प्लेन की दोनों अंतिम सीटों पर बैठाते हुए कहा, "इनसे अच्छी सीटें हम निकाल नहीं पाये— यह है आक्सीजन मास्क। जब भी जरूरत महसूस हो तो मंजु की नाक पर चढ़ा दीजिएगा, विश यू गुड लक।"

"शुक्रिया !"

वायुयान से कभी रात की यात्रा मैंने नहीं की थी। मंजु तो दिन में भी वायुयान से शायद ही कहीं गयी हो। वायुयान परिचारिका एक तश्तरी में लेमन ड्राप्स लेकर आयी, "वेल, मंजु, हाउ डू यू फील ?" उसने मुस्कराते हुए कहा, "टेक समथिंग, यू मे फील बेटर।"

"थैंक यू" मंजु हिंदी में बोली, "आप जैसी ममतालु महिला मैंने नहीं देखी। यह मत समझिएगा कि आपको खुश करने के लिए बोल रही हूं, मैंने ऐसा महसूस किया।" एयर होस्टेस ने उसके कपोल पर हल्की थपकी दी और बोली, "अगर कुछ परेशानी आये डॉ. सिंह, तो आप निःसंकोच यह बटन दबा दीजिएगा।" मैंने उतनी ऊंचाई से अनजाने औद्योगिक कारखानों, शहरों और दुकानों पर दीवाली की तरह सजे प्रकाश-पुंज नहीं देखे थे। तभी कान में बहुत तेज दर्द होने लगा। मैंने तुरत बटन दबाया और वही परिचारिका आयी, "मैडम, वी आर फीलिंग पेन इन द इयर्स।" मंजु बोली, "कान में बहुत दर्द हो रहा है प्लीज।"

वह रूई के टुकड़े दे गयी। "इन्हें कानों में लगा दीजिए, वायुयान काफी ऊंचाई से चल रहा है।" उसने बगल की परिचारिका के लंबे-चौड़े ट्रे से निकालकर पीले कागज में लिपटे दो डिनर पैकेट्स उठाये। उसने आगे वाली कुर्सी में सटे काष्ठ पटल को खींचा। दोनों पैकेट सामने रख दिया। "इट इज प्योरली नार्थ इंडियन फूड।" यह खाटी उत्तर भारतीय भोजन है। वह इसे—

अब तो तुम्हें डोसा, इडली खानी पड़ेगी मंजु !"

मंजु ने कहा, "आंटी जी, पता नहीं क्या-क्या खाना पड़ेगा, जाने कब तक खाना पड़ेगा, यह क्या-क्या की माया है ?"

"डोंट फील डिजेक्टेड (निराश मत हो), जिंदगी में जाने कितने मोर्चे हैं । और हर व्यक्ति को ये मोर्चे संभालने पड़ते हैं । यू आर लकी । तुम भाग्यशाली हो कि तुम्हारा साथ देने वाले डॉ. सिंह जैसे पिता मिले तुमको । मैं तो बचपन में ही बाप को खो बैठी । एक छोटा भाई है, मैं हूं और मदर हैं— अब तो कानों में दर्द नहीं है न ?" मंजु के गाल पर वही थपकी...

ठीक साढ़े आठ बजे हम मद्रास के हवाई अड्डे पर पहुंच गये । रात की यात्रा उचित नहीं है, मैंने सोचा, क्योंकि मन में तो उत्तर भारत की चंबल घाटी बसी थी। यह भरम मद्रास तक पीछा करता रहा । मैंने 'एयरपोर्ट-इन' में रात भर के लिए डबल बेड कमरा मांगा तो एक रात के लिए एक सौ अड़सठ रुपये देने पड़े । इससे अच्छा तो शायद यह होता कि हम शहर के किसी होटल में जाते । क्या पता वहां शायद दो सौ देने पड़ते । मन माफिक होटल खोजने में जाने कितना विलंब होता । यह सब तर्क शायद मन बहलाने के बहाने हैं, पर वहां वातावरण पूर्णतः हिंदी विरोधी हो, धोती-कुर्ता वाला हर आदमी सेठ लगता हो, वहां चुपचाप रात काट लेनी ही बुद्धिमानी थी । हमें एयरपोर्ट से हवाई अड्डे की सराय में पहुंचाने वाला व्यक्ति बोला, "साहब, सोच लो । तीन सौ बीस से कम रुपये में आपको टैक्सी नहीं मिलेगी।" "माई डियर फ्रेंड ! मैं जानता हूं कि इस शहर में कितने चीटर्स हैं । वी हैव टु गो बेल्लौर, सुबह बातें करेंगे ।"

कौन आया कौन गया, जब हमें जिंदगी भर यही पूछते रहना है तो ईश्वर अपना मनोविनोद क्यों न करे । कहावत है कि काक से कबेला ज्यादा बुद्धिमान होता है । इस हालत में ईश्वर से ईश्वरपुत्र निःसंदेह ज्यादा चतुर होता होगा । मेरे जैसा व्यक्ति जो आज से दो दशक पूर्व ईश्वरीय उल्लास अनुभव कर रहा था, उस वक्त उसे ईश्वरपुत्र पर सिर्फ विश्वास ही नहीं, आसक्ति थी । मेरे कमरे में प्रभु यीशु का एक चित्र था जिसे मैंने 'धर्मयुग' के किसी क्रिसमस अंक से निकालकर फ्रेम करा लिया । वह इसलिए कि यह किसी भारतीय कलाकार सोभासिंह का बनाया पहला चित्र कहा जाता था । यीशु के सुनहले ललाट पर एक श्याम रंग के कांटों से भरा ताज था जिनसे खून टपक रहा था । मैं उस चित्र को इस कारण भी प्यार करने लगा कि वह महाभारत युद्ध के अंतिम सायंकाल की रोशनी जैसा लग रहा था जब कृष्ण ऐसे ही रंग में डूबी धरती पर थक कर बैठ गये थे ।

मैंने बहुत पहले ईसाई मिशनरियों के दो-तीन पैंफलेट पढ़े थे । एक में आने

वाली दुनिया का ऐसा भयानक दृश्य था जो किसी भी व्यक्ति को सूने भविष्य के खतरों को महसूस करने के लिए विवश कर देता था, खासतौर से वृद्ध लोगों को जो अपनी मामूली तनख्वाह में से जोड़-बटोर कर बैंक में अपनी वृद्धावस्था के लिए कुछ रुपये जमा करते हैं ।

"जब दुनिया का अर्थशास्त्र चकनाचूर हो गया और बीसवीं सदी के आठवें दशक में एक वृद्ध दंपति ने जो कुछ जोड़ा था वह व्यर्थ का कागज बन गया । तमाम बैंक फेल कर गये, अपने सुनहले भविष्य का जो स्वप्न देखा था उन्होंने, वह चकनाचूर हो गया । ज्यों ही बैंक बंद हुए, सर्वत्र एक विचित्र तरह की घबराहट और संकट उपस्थित हो गया । क्योंकि चेक बेकार हो गये, लोग नौकरियों से अलग कर दिये गये क्योंकि सेवा के बदले राशन मिलना असंभव हो गया था । चारों ओर भूखे, बुभुक्षित लोगों ने दंगे शुरू कर दिये, लूट-पाट होती रही, उसे रोकता कौन । पुलिस तो नौकरियों से निकाली जा चुकी थी ।"

यह है उस पैंफलेट की शुरुआत का एक हिस्सा जिसका नाम है— 'सावधान रहो नंबर छ सौ छासठ (666) से ।' जेम्स बांड की 007 वाली संख्या से अलग होते हुए भी क्या यह एक सनसनीदार फिल्मी स्टंट से भरी हुई अपराध-कथा नहीं लगती ? राष्ट्र के बाद राष्ट्र अराजकता के समुंदर में डूबते गये । कुछ राहत हुई जबकि एक व्यक्ति ने मनुष्यता को बचाने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ में सप्तवर्षीय शांति-योजना बनायी । उसने सब कुछ नये सिरे से निर्मित कराया । साढ़े तीन वर्षों में सारे विश्व में अधिकांश राष्ट्रों में शांति और स्थिरता लौट आयी । एक विश्व सरकार बनी, जिसके नेता के रूप में उस व्यक्ति ने शासन को कड़ा किया, उसने शांति संधि तोड़ दी । उसने इजराइल पर हमला किया । एक कम्प्यूटर चालित अपनी आदमकद मूर्ति बनवायी और जेरूसलम में यहूदियों के नव-निर्मित मंदिर में इस प्रतिमा को स्थापित किया गया । चारों ओर विरोधी स्वर उठने लगे । लोगों ने नये भगवान को स्वीकारा फिर अस्वीकार दिया । हर व्यक्ति के ललाट पर राजा का अंक चिह्न लगाया जाता । वह चिह्न था 666 । इसी को देखकर खाद्य पदार्थ मिलता था, इसी को दिखाकर साग-सब्जी मिलती थी । सहसा प्लेग, हैजा, ध्वंस, अकाल, बाढ़ आदि का जन्म हुआ । मृत्यु की सूचना देने वाले टिड्डी दलों ने, जो बिच्छू के डंक की तरह चुभते थे, सारा जगत घेर लिया । उसके बाद जगत पुन. अंधकार में डूब गया । बम से रक्षा के लिए बने हुए शरणस्थलों में झांककर लोगों ने देखा कि दोपहर में एक अफाट अंधकार ठोस रूप में सब कुछ को घेर रहा है । तभी आकाश में एक अत्यंत डरावनी कौंध की तड़तड़ाहट से कब्रों से उठने वाले लोग, आसमान की चमक से उत्पन्न चिल्लाहटें शांत हो गयीं । यह सब बाइबिल में लिखा है कि उस आदमकद मूर्ति की स्थापना के 1260 दिन बाद गहन अंधकार की चौवदी को तोड़कर आकाश में यीशु का प्रकाश पुन. अपने को

पुकारने वाले को राह दिखाने के लिए उदित होगा और भयानक युद्ध जिसका नाम होगा 'अरमाजेदन' उसमें वे तमाम लोग नष्ट हो जायेंगे जो प्रभु यीशु में विश्वास नहीं रखते। यीशु ने स्वयं कहा है, "पुकारो और मैं तुम्हारे एकदम निकट खड़ा हूं।"

मैं यह सब क्यों लिख रहा हूं इसलिए कि मैं अरमाजेदन से डरा हुआ हूं? नहीं, इस अरमाजेदन के बारे में कहा जाता है कि यह पाप और पुण्य का अंतिम युद्ध होगा। वह बाइबिल में वर्णित एक ऐसा प्रतीकात्मक या पौराणिक युद्ध है जो निर्णायक रूप से पाप-पुण्य को विलगा देगा। यह 'रीविलेशन' के अंत में सिर्फ चार पांच सतरों में एक प्रतीकात्मक युद्ध की चर्चा है। पता नहीं अरमाजेदन से ईसाई और यहूदी इतना भय क्यों खाते हैं। मैं जानता हूं कि हिंदुस्तान के हिंदू पिछली अष्टग्रही के अवसर पर संपूर्ण प्रकृति में ध्वंसलीला और जल-प्लावन की बात सुनकर डरे पर उतना नहीं जितना यहूदी और ईसाई अरमाजेदन के युद्ध की चर्चा से घबराते हैं।

मैं अपनी चारपाई पर लेटा इस लड़ाई की घोषणा का मजा ले रहा था क्योंकि इस पैंफलेट के लेखक ने महाविनाश की तिथि भी लिख दी है। वह प्रलय का दिन, तिनका हिले बिना खत्म हो गया। न तो आणविक युद्ध हुआ न तो प्रतीकात्मक घटना हुई, यह एक ऐसा हसीन झूठ है जिसके द्वारा नाना तरीकों से गरीब, अशिक्षित और भूखी मानवता को धोखा देते है सद्धर्म पिता लोग। यह भोजन, शिक्षा, रोजगार, दवाएं आदि पाने के लोभ को जगाता है। जनता को एक पुराने झूठ के स्थान पर नया झूठ स्वीकार करना पड़ता है। चाहे शूद्र हों तो न हों तो, अस्पृश्य बनकर संसार के सबसे अधिक कूड़े से लदे हिंदू धर्म को लात मार देने की शिक्षा दी जाती है। तब भी हिंदुओं की आंखें नहीं खुलतीं। वे अपने भीतर के जात-पांत की कट्टरता और वर्गवाद को मिटाने की कोशिश नहीं करते।

यह है ईशाइयों का सबसे बड़ा अस्पताल, यानी सी.एम.सी.। क्रिश्चिन मेडिकल कॉलेज का अस्पताल।

20 जनवरी 1982 को हमें तीन सौ बीस रुपये पर उसी टैक्सीवाले की शरण जानी पड़ी जो रात को ही सारा कुछ तय कर लेना चाहता था।

हम मेन गेट के अंदर सामान्य कंटीली झाड़ियों से घिरे गोल चबूतरे की परिक्रमा करते हुए पोर्टिको में पहुंचे। तभी एक तमिल भाषा-भाषी ने पूछा, "सेठ, कौन रोगी है, तुम या यह लड़की ?" मैं कहने जा ही रहा था कि मंजु बोल पड़ी, "तुम अपना काम देखो, हमें जहां जाना होगा, चले जायेंगे।"

"क्यों घबड़ाती हो मैडम, मैं सिर्फ दस रुपये में तुम्हें एडमिट करा देगा।" मंजु चुप हो गयी, वह जानती थी कि उसके बाबूजी में इतना धैर्य नहीं है। उन्होंने

तीन सौ बीस मांगने वाले को तीन सौ बीस गिनकर दे दिये और अब दस रुपये में अनजानी जगह एडमिट कराने वाले तमिलियन को दस रुपये के लिए भगा देंगे, यह मुमकिन नहीं है। उसने हमारा एडमिशन कार्ड बनवाया।

"किस वार्ड में चलना है, सेठ ?"

"नेफ्रोलॉजी।"

"आओ-आओ" उसने हमारे साथ की पेटिका उठायी और होल्डाल एन्काउंटर पर सौंप दिया। फिर नेफ्रोलॉजी विभाग के प्रतीक्षालय में लंबे-चौड़े, स्वच्छ, साफ बरामदे में सोफे पर बिठा दिया।

उस दिन कुछ ऐसा दुर्भाग्य था कि सभी सीनियर, जूनियर डाक्टर्स उड़ीसा के भुवनेश्वर में आयोजित कान्फ्रेंस में जा चुके थे। वह बूढ़ा तमिलियन दौड़-धूप तो बहुत कर रहा था, पर मामला नहीं बन रहा था। मैं यह सब तो बहुत बाद में जान पाया कि ब्लड बैंक ने इन्हें अयोग्य कहकर अपनी डायरी से खारिज कर दिया है। तमिलियन ब्लड व्यवसाय से कट गये। सी.एम.सी. में बाहरी दुनिया को चक्कर में डालने वाले तमिलियन गाइड को विभागीय प्रोफेसर भगा देता है क्योंकि ये पेशेंट्स के काम को हाथ जोड़-जोड़कर डॉक्टरों से करवाते हैं और अपरिचित लोगों से बेतहाशा रुपये ऐंठते हैं।"

"एक डॉक्टर है सेठ, लेकिन उससे बात तुम करो। मुझे तो अपने कमरे में घुसने भी नहीं देगा।"

"मे आइ कमिन प्लीज ?"

"आइए-आइए" डॉ. लक्ष्मीनारायण विभाग के बहुचर्चित व्यक्ति थे, उन्होंने पूछा, "आपका परिचय ?"

मैंने अपना नाम बताया और अपने विश्वविद्यालयीय अस्पताल का पत्र उन्हें दे दिया।

"कौन बीमार है ?"

"मेरी पुत्री।"

"उन्हें अन्दर ले आइए।"

मैंने मंजू को जगाने की सैकड़ों कोशिशें की किंतु वह इतनी थक गयी थी मैंटली कि उसने अपना मुंह दूसरी ओर कर लिया।

मैंने जब सारी स्थिति डॉ. लक्ष्मीनारायण को बतायी तो वे मुस्कराये, "चलिए चल रहा हूं।"

उन्होंने मंजू के गाल पर थपकी लगायी, "एक मिनट बेटे, जरा चित लेट जाओ।" उन्होंने हार्ट की स्थिति देखी, बी.एच.यू के डॉक्टरों की रिपोर्टें देखीं।

"एडमिट कार्ड बना रहा हूं, यह लड़की स्पेशल वार्ड में रहेगी या

जनरल ?"

"अगर जनरल बहुत गंदा हो तो स्पेशल में करिए डॉक्टर, क्योंकि बी.एच.यू. के डॉक्टर्स कह रहे थे कि इस चिकित्सा में करीब-करीब एक वर्ष लग जाते हैं । उस हालत में मेरे जैसा प्राध्यापक डेढ़ लाख से भी अधिक रुपये कहां से लायेगा ।"

"यू आर क्वाइट राइट" लक्ष्मीनारायण ने कहा, "हमारे जनरल वार्ड्स भी दूसरी जगहों के स्पेशल वार्डों से अधिक साफ-सुथरे होते हैं ।"

"आप यह एडमिट कार्ड लीजिए और क्यू वन वेस्ट, प्लास्टिक सर्जरी के कक्ष में उस आदमी यानी डकैत और धोखेबाज के साथ चले जाइए । मैं दो घंटे बाद आज ही पेरिटोनियल डायलसिस करुंगा । उसे तैयार रखियेगा । 'क्यू वन वेस्ट' विदेश में बना हमारा पहला नीड़ था, एक घोंसला जिसमें गौरेया के बच्चे की तरह चारे के लिए मुंह खोले मंजु थी और पालक-पंछी की तरह आहार या चारा ले आने वाला मैं था ।

"मंजु, क्या खाओगी ?" उसके बेड नंबर 9 के पास रखे स्टूल पर मैं बैठा था।

"यहां इस समय क्या मिलेगा बाबूजी ? टोस्ट और चाय, बस ? हां, एक बात बताइए, आप कहां रहेंगे ?"

तुम्हें खिला-पिलाकर मैं किसी होटल में रह लूंगा । कल तो तुम्हारी मां, नरेंद्र और श्रीकांत वगैरह आ जायेंगे, तभी लंबे समय के लिए जगह का प्रबंध होगा।

मैंने उस तमिलियन गाइड को पाँच रुपये दिये, "एक गिलास में दूध और दो ताजे बंद ले आओ गेट के पास वाली दुकान से ।"

"अभी लाया, सेठ !"

"सुनो, तुम लोग हर धोती-कुर्ता पहनने वाले को सेठ समझते हो, यानी कैपिटलिस्ट। मैं उस तरह का सेठ नही हूं, जिनके लिए तुम्हारे अस्पताल में वातानुकूलित कमरे हैं, सारी सुविधाएं हैं । भाई, मैं धोती-कुर्ता पहनने के लिए लाचार हूं । आज तक मैंने पैंट और शर्ट तो छुआ भी नहीं है । यह सब सेठवाद तुम्हारे 'एम' वार्ड में चलता है । जहां एम का अर्थ मनी यानी दौलत—वालों का वार्ड । तुम टोस्ट और दूध लाओ ।"

"अब आप आराम करिए मि. सिंह" एक मालाबारी सिस्टर ने कहा, "नाउ शी इज अंडर अवर प्रोटेक्शन" आपकी फेमिली कहां है ?"

"मेरी पत्नी कल आ रही हैं ।"

"तब ठीक है, यहां मर्दों का आना मना है ।

तमिलियन गाइड दूध और ताजी बंद लेकर आया, "लो मैडम, इसे खा-पी लो। अपने को 'गाड' की शरण में सौंप दो । सब कुछ ठीक हो जायेगा।"

मैंने झोला टटोला तो उसमें दस का कोई नोट न था । मैंने बीस रुपया देते हुए कहा, "इसे लो और भुनाकर दस रुपये दे जाओ ।"

"हां, सेठ" वह गया और मैं बैठा रहा । "आप सोचते हैं बाबूजी कि वह आयेगा ?" मैं चुप मुस्कुराता रहा ।

बेड नंबर नाइन पर स्वच्छ सफेद चादर, सफेद ही रंग का तकिया, पैताने उठे हुए पटल पर तय किया हुआ ऊनी चादर मैंने देखा । "मंजु तुम्हारे पीने के पानी के लिए एक सुराही और गिलास अभी भेजता हूं। मैं आस-पास के किसी होटल में आज की रात गुजार लूंगा । सुबह देखेंगे । कितने लोग रह पायेंगे इस होटल में ? यह सब कल के लिए छोड़ रहा हूं । जाऊं न ?"

"डॉक्टर ने क्या कहा ?"

"वे चार घंटे की पैरोटोनियल डायलसिस करेंगे । उन्होंने दो बजे से कहा है। अभी तो साढ़े बारह है, दोपहर के । मैं अभी आता हूँ आधे घंटे में ।

मेरे होटल साबू लाज के निकट ही मेन रोड पर एक रेस्तरा था, जिसके सामने हिंदी में लिखा था– "बंबइया खाना तैयार है ।"

मैं इडली, डोसा और चावल-सांभर भी खा सकता था । जहां प्रवास या अभिशाप के दिनों की कोई गणना नहीं थी, वहां हर कुछ झेलने-भोगने के लिए तैयार होकर आये थे । इडली, नारियल की चटनी, चावल और सांभर में बुराई क्या है । सी.एम.सी. के गिरजाघर के सामने एक खुली जगह थी । वहां पेड़ों पर कौवे ही कौवे दिखलाई पड़ते थे । दक्षिण भारत के लोग यानी गरीब जनता, केले के पत्ते में चावल-सांभर लपेट कर ले आती थी और उस चौकोर आंगन में अपनी पेट-पूजा करती थी । उनके खाने का ढंग जो भी हो, उस पर कमेंट करना टुच्चापन होगा, क्योंकि खाना-पीना, भोजन-वस्त्र कोई जन्म से लेकर नहीं आता, यह संस्कार तो उसे समाज से मिलता है । भोजन के बाद वह चौकोर आंगन जूठन से भर जाता था, जिसके लिए कौवे प्रतीक्षा करते रहते थे । बंबइया कहा जाने वाला भोजनालय नाम मात्र से ही बंबइया था । जली हुई रोटियां सब्जी के नाम पर चने का काढ़ा, चावल और प्याज । रेट सिर्फ छः रुपये ।

7

'आल थिंग्स वर्क टुगैदर फॉर गुड टु देम
दैट लव द लार्ड'

(पृष्ठ 1176/8/26-28)

सभी वस्तुएं उनके लिए मिल-जुलकर शिवं बन जाती हैं, जो भगवान को प्यार करते हैं ।

यह बहुत बड़ी शपथ है । इसे ईश्वरपुत्र ही कह सकता था । क्योंकि पिछले नवंबर 1981 से लेकर बीस जनवरी 1982 तक मैंने उस उक्ति पर या कहो सूक्ति पर विचार किया तो चाहकर भी मैं इस जकड़बंदी से निकल नहीं पाया।कहां है ईश्वरपुत्र । कहां है अन्याय का जन्मदाता ? उसके अनुयायियों द्वारा संचालित इस चिकित्सालय में मेरी भी कठिनाइयां दूर हों, सब चीजें मिलकर मेरे भले के लिए सक्रिय हों, यह चिंता मन के अश्वों की वल्गा को कड़ा कर रही थीं । पिछले दो महीने या कि पूरे साठ दिन यानी पूरे चौदह सौ चालीस घंटों के प्रति सेकेंड से गुजरते हुए भी मुझे वह हारमनी नहीं दिखी जो इस बात का सबूत मानी जाय कि भगवान नामक कोई चीज भी होती है ।-मुझे मेरी नास्तिकता पुकारने लगी । मैंने एक नास्तिक की तरह इस सूक्ति को अस्वीकार कर दिया । "यह सब झूठ है, इन शब्दों के पीछे कोई अर्थ नहीं है, वे पूर्णतः व्यर्थ हैं ।" आप अधिक से अधिक यही तो कहेंगे कि तुम उसे पुकारने का तरीका नहीं जानते, तुम्हारे भीतर वह तत्त्व है ही नहीं जिसे सच्चा समर्पण कहा जाता है, मैं क्या कर सकता हूं । सारा निर्णय उस पदार्थ के अधीन है जो उससे जुड़ा है जिसे मैंने न जाना, न जान पाया, न कभी जान पाऊंगा । यहां तो घंटे और दिनों की इतनी बड़ी पंक्ति है कि मै गिनाने लगूं तो एक दूसरी रचना जन्म ले सकती है जिसका शीर्षक होगा "द सरमन व्हिच फेल्ड" । मेरी प्रगति में, मेरी शरणागति में कोई दोष नहीं है क्योंकि उसने प्रश्न तो उठाये हैं, पर उत्तर कभी प्राप्त नहीं हुए । क्यों यह सब क्रमबद्ध ढंग से मेरे ही जीवन में घटता है ? क्यों वह ईश्वर संपूर्ण रस निचोड़कर अपना मटका तो भर लेता है और उसठ खली मेरे सिर पर रख दी जाती है ? मानता हूं कि ईश्वर का

अपना एक अलग तंत्र है जिसमें विश्वास करने वाले को धैर्य रखना चाहिए । पांडिचेरी की श्री मां ने कहा है "कभी मत भूलो कि जितनी बड़ी कठिनाइयां होंगी, उतनी ही बड़ी संभावनाएं भी होंगी । यह उन्हीं के जीवन में होता है जो बड़ी क्षमताएं रखते हैं, महान् भविष्य रखते हैं, उन्हें ही बड़े-बड़े अवरोधों से टकराना पड़ता है एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है ।" (सफेद गुलाब । 6.11.1966) ।

मैं इस कथन को कई बार पढ़ता हूं । मैं इसे सीधा मेटकाव मानता हूं। असह्य कष्टों को भविष्य की आशा लगाये सहते रहना निकृष्टता है ।

श्री मां के साथ बाबा अरविंद समझाते हैं, "विपत्तियां जो आती हैं वे अग्नि परीक्षाएं हैं, इम्तहान हैं । अगर कोई व्यक्ति ठीक-ठाक सही ढंग से उनसे जूझता है तो वह पहले की अपेक्षा अधिक मजबूत एवं आत्मिक रूप में अधिक पवित्र, शक्तिशाली और महान बनकर निकलता है ।"

अब मैं किससे पूछूं । सभी यही चिल्लाते हैं कि संकट संकट है उसे पहचानो और यह मानकर चलो की तुम्हें विशिष्ट बनने के लिए इस चक्रव्यूह का भेदन करना ही होगा ।

मैं जिंदगी भर शांत रहा हूं और शायद रहूंगा भी, पर शांति की माला जपने वालों के यहां जब अनेक छोटे-बड़े व्यूहों का भेदन करता हूं तो सिर्फ निराशा हाथ लगती है । तंत्र से प्राप्त महान सिद्धियों के प्रदाता योगच्युत भगवानों को भी क्या मिलता है ? यानी रजनीशीय निरीहता अथवा न उबर पाने वाले नशे के जलाशय में डूब जाने की भवितव्यता । मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा । इस छलावे भरी परम शांति की खोज में जाना मुझे स्वीकार नहीं है । मुझे विशिष्ट मत बनाओ-मत बनाओ ।

दो बजे डॉ. लक्ष्मीनारायण ने पेरिटोनियल डायलसिस की आज्ञा वार्ड में भेज दी । अस्पताली कपड़े में लिपटी मंजु को एक वार्डब्वाय पहियेदार कुर्सी पर बैठाये नेफ्रोलॉजी कक्ष के पश्चिम तरफ के गलियारे की ओर ले जा रहा था ।

"कहो मंजु, कैसी हो ?"

"ठीक हूं, बाबूजी, आपने अपना डेरा-डंडा कहां रखवाया ?"

"बहरहाल, एक-दो दिन तो मुझे उसी होटल में रुकना ही है । यानी साबू होटल के दो मंजिले पर स्थित कमरा नं. 13 में ।"

वह खिलखिलाकर हंसी "नंबर 13 हम लोगों को साथ नहीं छोड़ रहा है ।" उसकी ह्वील चेयर पेरिटोनियल डायलसिस वाले कक्ष के पास पहुंची और भीतर चली गयी ।

"यहां तो ढेरों सामान लाना होगा बाबूजी आपको ?"

"अब देखो, कोई कह रहा था कि अस्पताल आवश्यक चीजें स्वयं खरीदता है यानी सप्लाई करता है और उसका बिल पेशेंट को भरना पड़ता है ।"

अक्सर जब रेलगाड़ी से यात्रा के लिए आप जब आरक्षण करवाते हैं तो भी टिकट के अंकों का जोड़ या तो एक होगा या तो 4 । आपकी ही भाषा में कहूं तो हर्सल का नंबर जिसे लोग विस्फोटक तत्त्वों से भरा हुआ निगेटिव सूर्य कहते हैं कमरा नं. 13 या न्युमरोलाजी अंक, ज्योतिष के सर्वाधिक प्रचारित अशुभ अंक पर भाई-बहन मेरे और अतिथियों के बीच होने वाली वार्ताएं सुनते रहे हैं।

"क्यों इसे इतना बदनसीब नम्बर माना जाता है बाबूजी, नरेंद्र ने पूछा।

सुनो भाई, इसका असली रहस्य लोग नहीं जानते, केवल यह सुनकर कि अमुक ने अपने कमरे का नं. देखा 13 था तो उन्होंने तुरंत मैनेजर को बुलवाया और कमरा चेंज करा दिया। इस तरह की घटनाएं बढ़ा-चढ़ा कर कही जाती हैं। पश्चिम में तो इसे अशुभ मानते हैं कि भय लगता है ।

"बाबूजी" मंजु बोली थी, "आप जब छात्र थे तब एम.ए. हिंदी में विरला छात्रावास के कमरा नं. 85 में थे । इसका योग भी 13 ही था। जब गुर्टू हॉस्टल में थे तो भी कमरा नं. 13 ही था । आखिर इससे इतना भय क्यों लगता है लोगों को ।"

"देखो यह सब पश्चिमी जगत का संस्कार है, जिसे हमने ग्रहण किया । यद्यपि भारतीय कर्मकांड में भी इसका प्रभाव है, यानी मरे हुए का त्रयोदशाह।

"पर जब पिछले वर्षों के किसी दिन पंडित जी आये थे और आपकी सायटिका के बारे में पूछ रहे थे तो आपने कहा था कि सारी दिक्कतें मकान नम्बर 13 की वजह से हैं ।" मंजु मुस्कुराते हुए बोली ।

"तुम अपने को ज्योतिष का जानकर कहते हो आज तक तुम्हें तिथियों की शुद्धता-अशुद्धता का ज्ञान भी नहीं हैं ।" पंडित जी ने कहा ।

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि तुमने कभी इस कथन पर विचार ही नहीं किया, सर्व शुद्धा त्रयोदशी ।

"हां, कहा तो था पंडित जी ने ।"

"मगर ऐसा होता क्यों है ? आपके चेंबर की ताली का नम्बर है 85396 यानी टोटल 13 या 4 तो कहिए ।"

"देखो, मेरे रोग की छूत तुम लोगों को भी लग रही है। तुम लोग हल्के-फुल्के अंग्रेजी अखबारों में अथवा किसी विस्फोटक घटना में अगर नं. 13 दिख गया तो परेशान हो जाते हो । चांद को लक्ष्य बनाकर जब अमेरिका ने अपोलो नं. 13 छोड़ा था तो दुर्घटना हुई, क्षेप्यास्त्र के इंजन में आग लग गयी और सारा विश्व

अंतरिक्ष यात्रियों की रक्षा के लिए मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों, गुरुद्वारों में प्रार्थना करता रहा । प्राचीन हिब्रू में यहूदियों में यह अंक 13 मेम (Mem) नाम से प्रसिद्ध था और हेडान (Heydon) में इसे सर्वोच्च विकास और सफलता का प्रतीक माना जाता था ।

एब्बे द लाक्लर(ABBE Delaclere) नामक विश्व विख्यात भविष्य वक्ता ने नैपोलियन बोनापार्ट से कहा, "आज की तारीख से आगे तक विश्व में कोई भी ऐसी ऊंचाई न होगी, जहां तुम पहुंच न सको, किंतु सावधान होकर यह चेतावनी सुनो—आज से तुम्हारे नये नाम के आधार पर जिसकी अंकात्मक संख्या 13 है जो शक्ति का अंक है अगर वह गलत ढंग से प्रयुक्त हुई तो तुम पर वज्र की तरह टूटेगी ।" (सरकारी आरकाइव, पेरिस में सुरक्षित भविष्यवाणी की अंग्रेजी अनुवाद है वह) नम्बर 13 स्पष्टतया एक नवजीवन, आत्मपरिवर्तन और आध्यात्मिक रूपांतरण का प्रतीक है । यह अंक दैवी शक्ति और आशाओं, प्रकाशमान भविष्य की सूचना देता है । यह शक्ति की संख्या है ।" दोनों बच्चे चुप हो जाते थे । पर मैं बार-बार कुरेद-कुरेद कर अपने मन से पूछता था— क्या नैपोलियन बोनापार्ट बनना है तुम्हें ? यह एक परीक्षा है । तुम इस नंबर के आतंक को अंध विश्वास कह कर छोड़ते हो या नहीं, । मुझे खुशी है कि पिछले दो दशकों में एक बार भी मैंने नंबर 13 को कोई महत्त्व नहीं दिया ।

साबू होटल बीमारों के साथ जुड़े उनके तीमारदारों से भरा था । कमरा बिल्कुल कबूतरों या मुर्गियों के दरबे जैसा था, किंतु मैं इससे अधिक बेहतर कर भी क्या सकता था । सी. एम. सी. अस्पताल से सबसे नजदीक स्थित इस होटल में इतना गंदा पानी मिलता था कि मन उबकाई से भर जाता था । सुराही के ऊपर अपना रूमाल मैंने इस तरह बांध दिया कि पानी कीटाणुओं से थोड़ा मुक्त मिले । पर यह दिखावा था जो फुसला रहा था । ऐसा करने से क्या सचमुच जल कीटाणुविहीन हो जायेगा । रूमाल छोटी-छोटी कीड़ियों से काला हो जाता था । 21 जनवरी 1982 को प्रातःकाल नौ बजे के करीब नरेंद्र, श्रीकांत और मेरी पत्नी जी. टी. पकड़कर मद्रास से बस द्वारा वेल्लोर पहुंचे । उन लोगों ने नेफ्रोलॉजी के किसी आदमी से पता लगाया कि मंजु क्यू वन वेस्ट प्लास्टिक सर्जरी वार्ड में बेड नं. 9 पर मिलेगी । मंजु से साबू होटल का पता और कमरा नं. पूछकर दो-दो विराट होल्डालों को लादे हुए ये योद्धा कमरा नं. 13 में उपस्थित हुए ।

"कहो महारथियो, कैसी रही यात्रा ?"

श्रीकांत ने कहा, "वह तो कहिए कि एक दूसरी गाड़ी लेट होने के कारण रास्ते में किसी स्टेशन पर खड़ी थी और जी. टी. के सहयात्रियों ने बता रुकी हुई ट्रेन जी. टी. से कई घंटे पहले मद्रास पहुंचा देगी

पवन पुत्र अपने होल्डालों का धौलागिरि उठाये, नयी गाड़ी में बैठे और भगवान की कृपा से सकुशल मद्रास पहुंचे, रास्ते में सिर्फ एक चीज पकड़ से बाहर चली गयी यानी मिट्टी के तेल वाला लंबा-चौड़ा स्टोव । मेरी पत्नी जिस तत्परता से अपनी गृहस्थी की आवश्यक चीजों को जुटा-जुटाकर समृद्ध करती हैं उसी तत्परता से एक भी चीज खोयी या नष्ट हुई तो उनका पारा आसमान छूने लगता है—

"पियज्जा चाय होटल जाके, चूल्हा रास्ते में छोड़ के हमार हाथ कटाय देहल तू लोग" । बहरहाल नहा-धोकर, काफी हाउस में मद्रासी 'काफी' पीकर नरेंद्र और श्रीकांत हास्पिटल अनेक्से में कमरा खोजने चले गये । मैं मंजु के बेड के पास पहुंचा । वे लोग बड़े प्रसन्नचित्त लौटे क्योंकि अनेक्से में दो कमरे ऐसे थे जिनमें तीन बेड्स थे । उन लोगों को दूसरे तल्ले पर स्थित एक ऐसे ही कमरे को मात्र पैंतीस रुपये प्रतिदिन के हिसाब से मेरे नाम बुक करा दिया और सावू होटल छोड़कर हम अस्पताल से सटे या कहिए जुड़े परिशिष्ट (अनेक्से) में आ गये ।

शाम चार बजे जब मंजु के पास पहुंचा तो वहां पत्नी थीं । दोनों मां-बेटी बीमारों के अथाह समुद्र को देखकर भगवान के प्रति कृतज्ञ थीं कि भारत के इस सर्वोत्तम अस्पताल से बिल्कुल ठीक और स्वस्थ हो जाने पर मंजु के साथ पुनः अपने मकान में जायेंगे । कितनी कितनी खुशियों भरा होगा वह दिन ।

उस वार्ड में कुल दस बेड थे, जिनमें पांच बेड्स उन महिलाओं के थे जो प्लास्टिक सर्जरी कराने आयीं थीं । उन पांचों की ओर देखना इतना कठिन और डरावना लगता कि उधर पीठ करके बैठना ही एकमात्र विकल्प था । मंजु ने हंसते हुए कहा, "बाबूजी, कैसा वार्ड दिलाया आपने । यहां तो सामने के पांचों बेड्स पर ऐसी महिलाएं हैं जिनकी ओर देखने में डर लगता है । सामने की नंबर एक बेड पर एक सत्रह साल की बच्ची थी जिसका चेहरा इस तरह जल गया था कि उसे देखकर लगता कि वह काले मुंह वाले लंगूर की बहन थी । वह उड़िया थी । मंजु दो-तीन दिन तो हिचकी, पर चौथे दिन से उससे उड़िया में, जो उसने अपनी सहेली कनक से सीखी थी, बोलने-बतियाने लगी । बेड नं. नौ के ठीक सामने तो नहीं केवल एंगिल बदलकर जमशेदपुर की एक मोटी तगड़ी मुसलमान महिला थी जिसके एक ओर का पूरा गाल, सत्यं-शिवं-सुंदरम् की नायिका की तरह हो गया था जिससे देखकर घिन होती थी । वह चूंकि उर्दू जानती थी तो मंजू को खुशी हुई कि चलो इस रद्दियेष्ट वार्ड में भी दो-एक लोग ऐसे हैं जो इस दमघोंट चुप्पी और नहूसत को तोड़कर मन बहलाने में सहायक हो सकते हैं । डॉ. घोष कलकत्ते से नेफ्रोलॉजी में एम. डी. करने आये थे । वे जूनियर डॉक्टर्स में सबसे अधिक शिष्ट और हम लोगों के लिए नजदीकी पड़ते थे क्योंकि वे थोड़ी हिंदी भी बोल लेते थे ।

सुबह टेस्ट करने के लिए मंजु का खून आठ बजे ही निकालकर जांच के लिए जा चुका था । वह तो मैं बाद में जान पाया कि नाश्ता के पहले तीन-चार दल निकलते थे और तमाम वार्डों में तरह-तरह के बीमारों का रक्त सेंपुल लेकर लैब में चले जाते थे । इन्हें मैंने कई बार सीढ़ियों से चढ़ते-उतरते देखा था । मंजु का ब्लड निकालते देखा था, मैं इन्हें मासूम साईलाक के पुत्र कहा करता था । फर्क यह था कि साईलाक ने अपने जीवन में अधिक से अधिक बारह-तेरह लोगों का मांस निकाला होगा जांघें काटकर, जबकि ये हजारों पेशेंटों का रोज रक्त शोषण करते थे । यह सब मैं आरोप लगाने की दृष्टि से नहीं, बल्कि अपने भीतर जो स्वाभाविक प्रतिक्रिया होती थी, उसे व्यक्त करने के लिए कह रहा हूं ।

"प्रो. सिंह" मैं मंजु वाले वार्ड में जा ही रहा था कि घोष ने बुलाया, "यू शुड बी ग्लैड ।"

"कौन-सी खुशखबरी है डा. घोष?" मैं उनके टेबुल के पास पहुंचा ।

"ब्लड की जो रिपोर्टें आ रही हैं उनसे लगता है कि किडनी स्लो कार्य कर रही है, डैमेज्ड नहीं है ।

"मेरे चेहरे पर, उस समय कोई परिचित देखता तो कहता कि प्रसन्नता का प्रकाश छा गया था । मैंने डॉ. घोष को धन्यवाद दिया और मंजु के बेड के पास पहुंचा । खून निकाला जा रहा था । मैं प्रसन्न हुआ खून चूसकों को देखकर क्योंकि अगर ये अपनी ड्यूटी न करें तो शाम आठ बजे तक अच्छे-बुरे-हालात की प्रामाणिक सूचनाएं कहां से मिलतीं ।

मैंने जब मंजु को यह सब बताया तो वह इतनी खुश हुई कि खिलखिलाकर हंसी, "तो किडनी खून की जांच करने वाले दल को देखकर डर गयी ।"

"हां" मैंने भी मुस्कराते हुए कहा, "कीनाराम के डंडे की पहली चोट में ही जांता अपने आप गेहूं पीसने लगा ।" यह घटना जूनागढ़ में हुई थी । इस हिन्दू फकीर के फक्कड़पन को राजकीय अपमान कहकर जेल में डाल दिया था नवाब के अमलों ने । जांते के सामने एक मन गेहूं रख दिया । और कहा, "इसे पीसने पर ही शाम की रोटी-दाल मिलेगी ।" बाबा न रोटी-दाल के लिए परेशान थे न तो जांते को छूने के लिए तैयार थे, तभी एक सिपाही आया और बोला, "क्यों रे काफिर, तुझे अभी तक समझ में नहीं आया कि सुलतान के हुकुम को न मानने का नतीजा क्या होता है ?"

बाबा ठाकर हंसे, "मूरख, कीनाराम अवधूत है, वह महाशक्ति सर्वेश्वरी के अलावा किसी को न राजा मानता है न नवाब । तू शाम को आकर आटा ले जाना।"

बाबा ने जांते पर डंडा मारा और जांते में गेहूं डाल दिया । जांते की ऊपर वाली चकरी बड़ी तेजी के साथ घूमने लगी । इस दृश्य को देखकर सिपाही भागा

और जेल के कैदी बाबा के चरणों में गिर पड़े ।

"यह कहानी है न बाबूजी ?" मंजु बोली, " मुझे हर चमत्कारी घटना गप्प क्यों लगती है ।"

"इसलिए कि उपन्यासों और नाटकों की दुनिया में रहते हुए भी तुम्हारे पैर ठोस कठोर भूमि से उखड़ते नहीं । जिस दिन वे उखड़े, तुम्हें हर घटना जो असत्य और निराधार होगी वह भी चामत्कारिक लगने लगेगी ।"

तीन-चार दिन बीत गये । डॉ. घोष मंजु की सारे चेकअप की रिपोर्ट फाइल में दर्ज करते रहे, प्रेशर नापते, दिल और फेफड़े की गतिविधि नोट करते।

एक दिन आठ बजे से कुछ पहले आ गया । सी. एम. सीं. के विशाल फाटक से प्रवेश करते ही बायीं ओर मुड़ा तभी मेरी दृष्टि पड़ी, लिखा था, "हैव यू रेड युवर बाइबिल टुडे– क्या आपने आज अपनी बाइबिल पढ़ी ।"

बाइबिल क्या है । किससे पूछा जा रहा है । क्यों पूछा जा रहा है। ये प्रश्न मेरे दिमाग में कुलबुलाने लगे । यह ईसाइयों का धर्म-शास्त्र है । हर व्यक्ति से पूछा जा रहा है । वे लोग जो अपने जिगर के टुकड़ों को यहां लेकर इसलिए आये कि वह स्वास्थ्य लाभ करेगा । वह पुनः स्वस्थ होकर खेलेगा, कूदेगा, उसके लिए बाइबिल पढ़ना क्या मजबूरी है । मेरे घर में तो कृष्ण और क्राइस्ट एक साथ रहते हैं किंतु आज तक किसी ने पूछा नहीं कि – यह सब क्यों ?

मैं ज्योंही क्यू वन वेस्ट विंग में पहुंचा, मंजु को चादर में मुंह छिपाये, रोती हुई देखा । मैं सीधे बेड नं.नौ के पास पहुंचा । मैंने उसके सिर को छुआ, "क्यों, क्या बात है, क्यो रो रही है ।"

मेरे बार-बार पूछने पर उसने सिसकते हुए कहा, "आज एक बड़ा डॉक्टर आया था । उसने कहा कि किडनी बिल्कुल डैमेज्ड हो चुकी है । जाओ डायलसिस कक्ष में और 'शंट' लगवाओ ।"

"क्या नाम था उस डॉक्टर का ?"

"घोष बाबू भी थे, उनसे पूछिए ।"

मैं डॉक्टरों वाले काउंटर पर पहुंचा, काफी लंबा, सांवला, फ्रेंचकट दाढ़ी वाला आदमी ठीक सामने खड़ा था ।

"क्या आप मंजुश्री के फादर हैं ?"

हां, "मैं उसका बाप हूं, क्या आपने कहा है उससे कि दोनों किडनीज डैमेज्ड हैं। तुम डायलसिस रूम में चलो, वहां शंट लगेगा ?"

"एस, आई टोल्ड हर ।"

"डॉक्टर, जब एक बीमार व्यक्ति सात दिन तक लगातार सुनता रहे कि किडनी डैमेज्ड नहीं है, अभी भी आशा है, तो क्या वह आपकी आज्ञा को बिना

संकोच स्वीकार कर लेगा ? मैने अंग्रेजी में कहा ।

"किसने कहा था कि किड्नीज डैमेज्ड नहीं हैं ?" इस बार डॉ. जाकोब हिंदी में बोले ।

"वह आपके लैब से आने वाली रिपोर्ट कहती है ।"

"डॉ. सिंह, आप यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर है, लिटरेचर के, या तो आप अपने निर्णय को मानिए और बिल का पेमेंट करके उसे ले जाइए, या तो फिर मेरी बात मानिए और डायलसिस के लिए भेजिए ?"

"आज तो चाहे खुद भगवान आ जायं, वह डायलसिस कराने नहीं जायेगी। शी इज ए वेरी आब्सिनेट गर्ल, प्लीज गिव हर सम टाइम" (बहुत जिद्दी है थोड़ा समय दीजिए)

"वी डोन्ट केयर । हम बीमार की जिद को नहीं देखते । हम उसे प्रोटेक्ट करने के लिए काफी है ।"

"मैं यह कहां कह रहा हूं डॉक्टर कि आप जिद को मानिए । आप अपने कार्य के प्रति पूर्णत : जिम्मेदार हैं, मैं यह सब मानता हूं । पर क्या आप पिछले तीन महीनों से बीमार, बार-बार डॉक्टरों के मुंह से लाचारी और निराशा की बातें सुनते-सुनते टूटे हुए मरीज की मेंटल कंडीशन पर विचार नहीं करेंगे ? यह चाहे जैसे भी हुआ हो, उससे कहा गया है कि किडनी डैमेज्ड नहीं हैं ।"

"मैं जानता हूं रिपोर्टस देखने वाले डॉक्टर को यह पता नहीं था कि भरती होते ही डॉक्टर लक्ष्मी नारायणन् ने पेरीटोनियल डायलसिस करायी थी । इसलिए जो रिपोर्ट आयी है वे डायलसिस के बाद की है ।"

"खैर आप थोड़ा और वक्त दीजिए ।"

"ठीक है, आप उत्तरदायी होंगे इफ समथिंग हैपेन्स ?" डॉक्टर जाकोब काउंटर से उठकर चले गये ।

आप मेरी ही तरह अस्पताली डॉक्टर तो हैं नहीं कि ब्लड यूरिया और क्रियेटनिन को सुनते ही जान जायेंगे । ब्लड यूरिया मूत्र का वह अंश है जो शरीर के बाहर नहीं जा सकता क्योंकि किड्नी काम करने में असमर्थ है । ब्लड यूरिया को मथकर अगर मक्खन की तरह कोई चीज बने तो उसे क्रियेटनिन कहते हैं। इस तरह तीन दिन बीत गये । मैं उसे रोज समझाता था । चूंकि डॉक्टर लक्ष्मीनारायण ने उस दिन पेरीटोनियल डायलसिस करायी थी, इसी के कारण ब्लड यूरिया और क्रियेटनिन की रिपोर्ट बहुत ठीक लगती थीं । आज एनेक्से में जाते वक्त डॉ. घोष मिल गये । वे कह रहे थे कि मुझसे गलती हो गयी । मुझे पेरीटोनियल डायलसिस की जानकारी नहीं थी । कल से ब्लडप्रेशर, हार्टबीट और ओडिमा (सूजन) बहुत ज्यादा है । डॉ. जाकोब से आप जब तक नहीं कहियेगा, वे नहीं बोलेंगे और न तो

मंजु को डायलसिस के लिए भेजेंगे ।"

"तो घोष मूर्ख हैं, मुझे आज सांस लेने में भी तकलीफ है बाबूजी, आप बनारस लौट चलिए, मेरे बचने की कोई उम्मीद नहीं है । वहां लोग कहते हैं कि हिंदी विभाग के छात्र ही नहीं कई अध्यापक भी आपसे बोलते वक्त सहम जाते हैं इस तरह के व्यक्तित्व वाले आदमी को मैं कितना विवश कर रही हूं झुकने के लिए, डॉक्टरों से याचना करने के लिए ..."

"बेकार की बातें छोड़ और जो शपथ तूने चंडीगढ़ में ली थी, उसे निभा, यह लड़ाई तबतक चलेगी जबतक नियति खंडित न हो जाय । अथवा टुकड़े-टुकड़े में विभक्त होकर मेरे परखचे न उड़ जायं, तब तक यह लड़ाई जारी रहेगी । मैं जा रहा हूं जाकोब के यहां, कह दूंगा कि शंट लगवा दीजिए । वे वैसे थोड़े लगाते होंगे शंट कि दुखे, वे तो उस जगह को सूई लगाकर सुन्न कर देते होंगे तब तुम्हारी कलाई की नस में शंट लगेगा । तैयार हो जाओ, मन से भी, तन से भी ।" मुझे देखकर जाकोब और श्री निवास ने मुंह फेर लिये । तीन-चार चक्कर लगाने के बाद भी मैं जाकोब के पास नहीं गया ।

" यू वांट टु से समथिंग प्रोफेसर सिंह ? क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

"आप इसे डायलसिस के लिए भेजें, शंट के नाम से डर रही है, डॉ. जाकोब । जरा सावधानी पूर्वक...।"

"परेशानी की बात नहीं...डोंट वरी ।"

करीब पांच मिनट में उसी व्हील चेयर पर जिस पर बैठाकर पेरीटोनियल डायलसिस के लिए ले जाया गया था, वह आज आर्टिफिशल किडनी वाले कक्ष में लायी गई । मरीज का वजन लिखा गया । फिर कुर्सी पर बिठाकर उसे भीतर ले जाया गया । मैं दो घंटे बाद थर्मस में काफी और दो कटे-छिले सेब लिये पहुंचा । मैं डर के मारे उस वार्ड में घुसना नहीं चाहता था इसलिए नहीं कि उसके दरवाजे पर लिखा था 'नो एडमिशन' बल्कि इसलिए कि अगर मंजु ने देख लिया मुझे तो शंट-वंट निकालकर फेंक देगी । मैंने कालबेल दबायी और उधर से डॉ. जाकोब आ रहे थे ।

"मंजुश्री के लिए लाये हैं । दीजिए मुझे" उन्होंने थर्मस और लिफाफे में रक्खे कटे हुए सेब ले लिये । कितनी बढ़िया हिंदी है डा. जाकोब की । मैं तो उनके चेहरे को देखकर मुस्काया — डॉ. चाको क्या आप को मालूम है कि आप बहुत अच्छी हिंदी बोलते हैं ।"

"रियली ।" जाकोब ने मुस्काते हुए कहा, "आपने भी तो जाको की जगह चाको कहना सीख लिया । तमिल उच्चारण मेरे नाम का ।"

8

ऐसे अपढ़ संत डूबती हुई नारी को बचाने के लिए सहारा तक न देंगे क्योंकि धर्म का आदेश है कि नारी पर नजर न डालो।

यहूदी तिश्ना कबीरी संतों का दादा गुरु लगेगा आपको, मगर तिश्ना बहुत ही बहुपठ व्यक्ति था और ढाई अक्षर पढ़कर झूठी ऐंठन में पड़े लोगों को घृणा से 'निरक्षर संत' कहा करता था ।

आज मन पता नहीं क्यों बहुत उदास है । कृत्रिम किडनी कक्ष में बहुत देर तक खड़ा मैं दरवाजे पर लगे, महाप्रभु यीशु के चित्र को देख रहा था । यीशु के अनेक चित्र लटक रहे हैं यहां वेल्लोर चिकित्सा अस्पताल में । उनके महत्त्वपूर्ण कथन भी सुंदर अक्षरों में लिखे लटक रहे हैं । मेरे कमरे की तख्ती पर लिखा है—'कभी भी धैर्य मत छोड़ो ।' एनेक्से से बाहर आता हूं तो नीचे के तल्ले के सामने सुनहली मछलियों का एक गोलाकार छोटा-सा जलाशय है, इसमें छोटे कमल के फूल हैं, ये मुझे आकृष्ट करते हैं, पर इनसे भी ज्यादा आकर्षक एनेक्से कार्यालय में कील से लटक रही, प्रभु यीशु की तस्वीर का होता रहा है । जब तिश्ना जैसे दार्शनिक अपनी सभ्यता और विद्वता का घमंड दिखाते हैं तो मेरे दिमाग में यहूदियों के प्रति नफ़रत हो जाती है । धारा में डूबती औरत भी तो उन्हीं की जाति में पैदा हुई। 'मेरी' की आंखों की गहराई में ईश्वरीय पुत्र के जन्मने की जो खुशी है, उसे क्या यहूदियों ने बर्दास्त किया ? कुंवारी मेरी के गर्भ की सूचना क्या दबा दी गयी थी । क्या यहूदी इस धर्म विरोधिनी को डूबने से बचाने को आये थे? किस नारी को बचाना चाहता है गर्वस्फीत ?

मंजु डायलसिस रूम में चली गयी थी । एक घंटे बाद अनेक्से से नहा-धोकर मेरी पत्नी आ गयी थी ।

"गइल भीतर ?"

"हां"

"तो जाईं, आराम करीं ।"

मैं चल पड़ा । मुझे आज बार-बार पत्नी में मरियम और मरियम में अपनी

अनेक प्रकार मानो झलक रही थी । कभी सही चित्र, कभी काल्पनिक चित्र, "हे पिता, इन्हें क्षमा कर देना । क्योंकि वे नहीं जानते थे कि वे क्या कर रहे हैं ।"

पिता ने पुत्र की सलाह मानकर उन्हें यानी यहूदियों को क्षमा किया या नहीं, पर मेरे नेत्रों में तो कोई और ही मंजर रील पर रील उभरता चला जा रहा था । हत्या, यातना शिविरों में अमानवीय त्रास, देश निष्कासन, इतने बड़े पैमाने पर कि फ्राइंस्टाइन को भी नाजियों ने नहीं देखा । यह सब यहूदियों को ही झेलना पड़ा। क्या इसके पीछे ईश्वरीय क्षमा का कोई लक्षण दिखता है ? नहीं, यहूदी संत्रस्त हो रहे थे क्योंकि पिता ने पुत्र की प्रार्थना ठुकरा दी । उन्हें क्षमा नहीं, शाप मिला । मेरे सामने भारत का नक्शा था जो टुकड़े-टुकड़े में बंट गया था । लाखों लोग, सीमा के उस पार के हों या इस पार के, खून से रंगे, भूखे-प्यासे, थके-हारे लंबी कतारों में चले जा रहे हैं, चले आ रहे हैं । पर क्या सीमा रेखा पार कर लेने से ही यंत्रणा कम हुई । मंटो की युवती सिर्फ सुनती है—खोल दो " । उसके पास इतनी भी समझ नहीं बची है कि उसे घबराते देखकर, घुटती हुई देखकर सामने खड़े व्यक्ति ने खिड़की खोलने को कहा है, मगर वह इजारबंद खोलकर नंगी हो जाती है क्योंकि उसकी जिंदगी में 'खोल दो' का मतलब सिर्फ वहशी लोगों के सामने नंगी हो जाना ही रह गया है । यह सब क्यों हो रहा है । आगे भी होता रहेगा । हमारा पैगंबर खुदा का पुत्र नहीं था । वह एक कोपीन लपेट कर डंडे को हाथ से पकड़े डांडी मार्च करता रहा । उसे जब गोली लगी तो मुह से निकला "हे राम" । मैं बहुत घबराया था उस समाचार से, लगभग धसककर गिर पड़ा था जमीन पर । नाथू राम गोड्से हिंदू था । ईश्वरीय पिता हिंदुओं को बिना शाप दिये, शांत नहीं होगा ? कौन बचायेगा हिंदू कौम को ?

छोडिए, आप कहेंगे— तुम जब मामूली बात भी करते हो तो उसकी जड़ के छोटे से अंकुर को देखकर घोषणाएं करने लगते हो, जैसे यह सारी दुनिया तुम्हारे दिमाग के वजह से चल रही है । भले आदमी, कभी चुप भी रहा करो । कोई बोलता है, मेरे भीतर । मैं सचमुच उदास हो जाता हूं ।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि व्यक्ति की पीड़ा जब इतनी ऊंचाई छूने लगती है तो संत अपने भी प्राणों को तुच्छ समझकर सक्रिय सैनिक की भूमिका में उतरता है । असूरी राजाओं ने इज्रायल पर जब-जब आक्रमण किया, यहूदी संतों ने ही उन्हें धिक्कारा । शाप दिया । उनका धर्मकेंद्र जरूसलम धूल में मिला दिया गया, बार-बार यहूदी संत और नबी पहाड़ी गुफाओं के भीतर से, पर्वतों की चोटियों से, बियाबां से शाप की ज्वाला लिये शत्रुओं को धिक्कार उठे । नाहोम इनमें सबसे अधिक जाग्रत और तेजस्वी था । इसने असूर राजाओं की राजधानी निनेवे को लक्ष्य कर धिक्कारा ।

"धिक्कार उस नगर को, धिक्कार उस खूनी नगर निनेवे को, देख निनेवे, मैं तेरा

विरोधी हूं अन्यथा शत्रु, और देख कि तेरे नंगपन का राज खोल दूंगा, तेरी बर्बरता को ढकने वाले लेबास को उलट दूंगा । और तेरी नग्नता को राष्ट्रों के बीच भंडाफोड़ कर रख दूंगा । राज्यों पर तेरी बेहयाई जाहिर कर दूंगा । और तेरे ऊपर तेरा ही गलीज बरस पड़ेगा, तेरे अहंकार को ढंक लेगा, तुझे घिनौना बना देगा । और तू अपनी ही जलालत निहारता रह जायेगा और ऐसा होकर रहेगा जान ले तू अभिशप्त निनेवे जो कि आज जो तेरे हमगुजर है, तुझसे बाजू मिलाये चल रहे हैं, वे ही एक दिन तुझे अछूत कहेंगे, और तेरा मुंह देखने से परहेज करेंगे, तेरे साये से दूर भागेंगे । चिल्ला-चिल्लाकर ऐलान करेंगे कि निनेवे नष्ट हो गया, ध्वस्त हो गया, धूल में पड़ा है, जमींदोज हो चुका है । फिर कौन तुम पर आंसू बहायेगा ? देख निनेवे, कान खोलकर सुन ले । तेरे वाशिंदों में सिर्फ औरतें रह जायेंगी । मर्द तलवारों के घाट उतर जायेंगे । तेरे घर के द्वारों के फाटक दोनों ओर दुश्मनों के सामने अपने आप खुल जायेंगे । आग की लपटें तेरे शहरपनाह को तुझे घेरने वाली ऊंची दीवारों को चाट जायेंगी... असुरों के राजा, तू सुन ले, तेरे गावों के सिंगार भेड़ों के चरवाहे सदा के लिए सो जायेंगे, तेरे अभिजात अमीर धूल में मिल जायेंगे, तेरी कौम टुकड़े-टुकड़े होकर बरबाद होकर पहाड़ों पर बिखर जायेगी, और कोई उसका पुरसाहाल न होगा, कोई नामलेवा न बचेगा, फिर उनकी पुकार सुनकर इकट्ठा नहीं होगा और न तब, निनेवे, न तो कोई तेरे घाव का मरहम होगा, तेरा घाव बहुत गहरा होगा । ऐसा गहरा कि तेरे दर्द से किसी कि आह न निकलेगी । सुनने वाले तालियां पीटकर हंसेंगे, क्यों ? क्योंकि जमीन पर कोई भी ऐसा नहीं है, जिस पर तूने अपना कहर न बरसाया हो।"

यह है यहूदी तेज । यह तेजो दीप्त वाणी । यदि संत फक्कड़ अपनी जनता के साथ खड़ा होकर इस तरह दुश्मनों को ललकारता नहीं तो उसे जनता अपने शिरमाथे पर उठाती भी नहीं । ललकारा होगा नहौम ने निनेवे को । मैं तो असुरी लोगों के निनेवे से भी ज़्यादा खतरनाक किले को ध्वस्त करने का संकल्प लेकर चला हूं । मैं यमलोक की ताकत को ललकार रहा हूं । मेरा संकल्प अडिग है। मैं तुम्हारे नगर की ईंट-से-ईंट बजा कर रहूंगा । मैं हो सकता है, कि तुम्हारी तामसिक और प्रवंचक शक्तियों से हार जाऊं, पर याद रखना यमलोक के महिषावरोही, मेरी मृत्यु विजयिनी आत्मा तब तक लड़ती रहेगी जब तक तुम्हारा काला जादू चूर्ण-चूर्ण होकर बिखर न जाये ।

मैं चलने को हुआ । अनेक्से के रास्ते में पप्पू जी मिल गये । अनेक्से में अपनी मां के साथ रहते थे और मां ने जोर डाला तो दिन में एक बार अपनी मां के डायलसिस के दिन या किसी खाली वक्त पर अपने पिता सिन्हा जी को देखने करते थे । वरना अनेक्से की लिफ्ट का बटन दबाकर सबसे ऊपरी रहते और ऊपर पहुंचकर फिर बटन दबाते और एक दम फर्श तक

खिलखिलाते । 'अंकल' वे मुझे बुलाते, "आप जा रहे हैं न मेरे पापा को देखने?"

"हां वेटे, मैं जा रहा हूं । तेरे पिता भी तो बगल के मेल वार्ड में हैं । मैं तो रोज जाता ही हूं वेटे । तुम्हारी मां कह रही थीं कि तेरे पापा को किडनी तुम्हारे चाचा दे रहे हैं ।" "हां अंकल । कल हमारे छोटे ताऊ आ जायेंगे फिर पापा का ऑपरेशन होगा। फिर पापा को लेकर हम हाउसिंग वोर्ड में रहेंगे । फिर हम पापा के साथ वस पर बैठकर रोज यहाँ आयेंगे । फिर लौट जायेंगे । फिर हाउसिंग वोर्ड से यहं आयेंगे फिर लौट जायेंगे, फिर...।"

"अरे वेटे पप्पू" मैंने उसके मासूम चेहरे पर हथेली फेरी और कहा, "पप्पु जी, आप विल्कुल ठीक कह रहे हैं । आपके पापा एकदम अच्छे हो जायेंगे तो आप घर जायेंगे, अपने घर यानी इलाहावाद ।"

"हां, अंकल ! पापा ने वादा किया है कि यहाँ से लौटते समय मद्रास से ढेर सारे खिलौने हवाई जहाज, रेलगाड़ी, हेलीको..."

"हेलिकोप्टर" मैं हंसा, "इतने खिलौने लेकर जायेंगे हमारे पप्पू जी।"

"क्यों भाभी" मैंने श्रीमती सिन्हा से कहा, "आप क्या इलाहावाद गयी थीं?"

"आपको कैसे मालूम, भाई साहव ? इस पप्पू ने वताया होगा । मैं आपसे क्यों छिपाऊं भाई साहव, मैं अपने देवर को समझाने गयी थी कि मेरा खून आपके भाई के ग्रुप का नहीं है । आप का खून उनसे मिलता है । मुझे विधवा वनने से वचा लीजिए । आप चलिए तो । कोई जरूरी नहीं कि आपकी दोनों किडनियां ठीक ही हों, यह भी तो हो सकता है कि आपके शरीर में केवल एक ही किडनी हो। वहुतों को एक ही किडनी होती है । क्यों भाई साहव, आपने भी तो यहां के डाक्टर्स से यही सुना होगा कि किसी-किसी व्यक्ति को एक ही किडनी होती है । और वह उसी से खूब मेहनत में या अय्याशी में कहिए, अपनी पूरी जिंदगी हंसते-हंसते विता देता है । दो तो सिर्फ इसीलिए दी ही है, ईश्वर ने कि एक किडनी किसी रोगी दुखिया को दान देकर उसे अपनी तरह हंसते हुए जीवन विताने का अवसर दें।"

"हां भाभी जी, आप विल्कुल ठीक कह रही हैं, यहां के डॉक्टरों ने ही नहीं, चंडीगढ़ दिल्ली के तमाम डाक्टर्स यही कहते हैं । आप के देवर ने क्या कहा?"

"यही सुखद समाचार सुनाने के लिए तो मैं पप्पू के साथ इसके पापा के पास चल रही हूं । भाई साहव, जरा यह वताइए कि जव आप वनारस से आये थे, सामान वगैरह लेकर तव मद्रास से वेलौर का कितना भाड़ा लिया था, टैक्सी वाले

ने ?"

"उसने तीन सौ बीस रुपये लिये थे, भाभी जी । क्यों कुछ छूट गया है टैक्सी में ? या –आखिर बात क्या है, बोलिए ?" मैंने उत्सुकता से पूछा।

"अब जाने दीजिए । औरत को सभी मूर्ख बनाते है । मैं पहली बार आयी तब भी और कल आयी तो भी टैक्सी वाले ने साढ़े सात सौ लिया । ये लोग हम हिंदी वालों को बहुत 'चीट' करते है । ये एकदम शैतान हैं.."

भाभी जी रुआंसी हो गयीं ।

"जाने दीजिए, सिन्हा जी ठीक हो जायं तो यह सब 'चीटिंग' आप को नहीं अखरेगी ।" मैंने कहा, "अच्छा भाभी, आप अपने देवर के बारे में अपना सुखद समाचार सिन्हा साहब को तुरंत सुनाइए । उनका आधा रोग तो इस सुसमाचार से ही दूर हो जायेगा ?"

"थैंक्स, भाई साहब!" श्रीमती सिन्हा बोलीं, "आप तो मंजु को लेकर यहां आये है । अपने इलाके में ही क्या कहिए कि पूरी इंडिया के लोगों के सामने आपने एक नजीर रख दी कि ऐसे भी बाप होते है जो लडकी का ट्रांसप्लांट कराने के लिए सारे हिंदुस्तान की खाक छान रहे है । भगवान आपकी खुशी लौटा दें । हां, भाई साहब, ऐनेक्से कार्यालय में मैनेजर या किसी और से आपका परिचय है ? मैं कल से बहुत परेशान हूं । किसी ने मैनेजर को रिपोर्ट कर दी । उसने कहा कि अगर तुमने दुबारा हीटर लगाया या स्टोव जलाया तो हम यहां से निकाल देंगे । आप कोई उपाय बताइए भाई साहब ।" श्रीमती सिन्हा मेरी ओर आशा से देख रही थीं। उनकी आंखों में इतनी कातरता थी, जो मेरे मन में चुभ गयी । मैंने कहा," भाभी जी, आपकी गलती यह है कि मेरी ही तरह आप भी दुनिया को बिना समझे सभी में विश्वास करके, सबकी बात मान लेती हैं । पहले मैं भी इसी तरह परेशान होता था । पर जब देखा कि कुछ चंद रुपयों से हर बात संभव हो जाती है तब से मैंने अपनी नैतिकता का कुर्ता उतार दिया है। "गिव द डॉग इद्स ह्यू" यानी कुत्ते के सामने रोटी का एक टुकड़ा फेंकिए, आपको जरा भी परेशानी नहीं होगी । आइए, आप सिन्हा जी को देखकर । मैं आपको दिखला दूंगा कि रोटी के एक टुकड़े की अहमियत क्या होती है ।"

हम लोग अपनी-अपनी दिशाओं में चल पड़े । मुझे परेशानी यह थी कि मैं कुछ रुपये तो कैश लाया था, लगभग दस हजार । साथ में दस हजार के ट्रैवलर चेक्स थे । बी. एच. यू. के स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का । मैंने दो-तीन दिन पहले ही "सी.एम.सी. के सामने वाली सड़क पर देखा था बड़ा-सा बोर्ड । सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया । मुझे तो स्टेट बैंक आफ इंडिया खोजना था । सो आगे चला । सेंट्रल बैंक से मुश्किल तमाम दो सौ गज दूर था स्टेट बैंक ऑफ इंडिया । मैं उसकी ऑफिस में घुसा । एक कक्ष पर लिखा था मैनेजर । मैंने उनके दरवाजे पर ठक-ठक किया।

तभी आवाज आयी "कम इन प्लीज" वहां एक आकर्षक लगने वाली तेज-तर्रार औरत थी। मैंने बहुत अतिरिक्त नम्रता के साथ कहा, "मैडम ए हैं ट्रेव्लर्स चेक्स। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के। आप कृपया इन्हें कैश करा दीजिए।" उस औरत ने मुझे सिर से पांव तक देखा। वह एकदम हेरोइन-चोरों की तरह मेरी खाना तलाशी कर रही थी आंखों से। मैं बड़ी हैरानी में उसे देख रहा था, "डोंट वरी। इट इज काल्ड धोती। आइ नो। हीयर इन साउथ नो बडी कम्स इन सच ड्रेस। (आप चिंतित न हों, इसे धोती कहते हैं। यहां दक्षिण में इसे लोग नहीं पहनते।"

उसने ट्रैवलर चेक्स देखे और अंग्रेजी में बोली, "मेरे यहां कोई ट्रांसलेटर नहीं है। तुमने दस्तखत हिंदी में की है। ये चेक्स हम नहीं लेंगे।" मैं उसकी ओर ताकता रहा। मैंने अंग्रेजी में ही कहा, "मैडम" इसके लिए ट्रांसलेटर की जरूरत नहीं है। आप लाइए हम 'पेयी' के सामने हिंदी में हस्ताक्षर कर देते हैं। हिंदू यूनिवर्सिटी के स्टेट बैंक की शाखा ने ऊपर वाले हस्ताक्षर को प्रमाणित लिखा है, आप दूसरी दस्तखत को टैली कर लीजिए और अगर दस्तखतें नहीं मिलती हैं तो मैं अपने आप यहां से चला जाऊंगा।"

"नो, नो थैंक्स यू मे प्लीज गो, आई विल नाट पे द एमाउंट बिकाज चेक इज साइंड इन हिंदी।"

मैं चुप चाप चला आया। बड़ा लाचार था। परेशानी यह नहीं थी कि उस युवती ने चेक बेइज्जती के साथ लौटा दिया। परेशानी यह थी कि मैं बिना रुपयों के एक डग हिल भी नहीं सकता था। मेरे पास तो चाय पानी के लिए भी शाम तक कुछ नहीं बचेगा। मैं बुझा-बुझा था। अचानक मुस्कुरा पड़ा। मुझे अपने बनारसी बन्धुवर नजीर मियां साहब का एक शेर याद आ गया— वह कुछ इस तरह से था—

तुम्हीं कुछ बुझे-बुझे से लगते हो नज़ीर
बज़्म में रोशनी कम नहीं

मैं सीधे सेंट्रल बैंक में घुसा। लिखा था तख्ती पर— अंग्रेजी में सुब्रह्मण्यम्, नीचे देवनागरी में लिखा था सुब्रह्मण्यम। यानी उस कमीनी औरत से अलग वहां ऐसा माहौल था कि हिन्दी ट्रांसलेटर की जरूरत नहीं थी। "क्या मैं आ सकता हूं" मैंने अंग्रेजी में कहा।

उन्होंने अंग्रेजी में ही कहा, आप का हर तरह से स्वागत है। "आज्ञा करिये।" मैंने सारी दास्तान सुना दी। वे बोले, "लाइए, कितने चेक्स है।" मैंने दसों चेक्स उनकी मेज पर रख दिया। उन्होंने कहा प्राप्ति स्वीकार वाली जगह पर हिंदी में ही ऊपर की तरह हस्ताक्षर कर दीजिए।

मैं चेक्स पर साइन करता जा रहा था । वे देखते जा रहे थे, जब नौ चेक्स पर हस्ताक्षर हो गये तो वे मुस्कुरा कर बोले, "दसवें पर मत कीजिए ।" मैं आश्चर्य से देख रहा था । उन्होंने हथेली में तीन-चार बार ठोंक कर घंटी बजायी । उनका स्टेनो आया तो बोले, "नौ हजार रुपए इन कैश ले आओ । जल्दी आना ।" फिर मेरी ओर देखते हुए बोले, "आप बी.एच.यू. में प्रोफेसर हैं ?"

मैंने कहा, "जी हां ।"

"क्या पढ़ाते हैं ?"

"हिंदी ।"

"कुछ कविता-वविता, कुछ कहानी-वहानी, लिखते हैं ।" वह हमउम्र आदमी हंसा, "जनाब, यह चेक आप उस बदतमीज औरत के पास ले जाइए । कहिए उससे कि राइटिंग में लिखो कि चूंकि चेक हिन्दी में हस्ताक्षरित है इसलिए मैं इन्हें कैश नहीं कर सकती ।" रुपया आया और वे मुस्कुराये, उन्होंने गिना और देते हुए बोले— "डोंट लिव पोयट इन इमेजिनेशन । कम आन द हार्ड अर्थ, थैंक यू।"

मैं गुस्से में जल रहा था । सुब्रह्मण्यम् ने मुझे भावुक कहा । बिल्कुल ठीक कहा उन्होंने । मैंने बिना पूछे उस औरत की आफिस का दरवाजा ढकेल दिया । वह भौचक ताकती रही, फिर अंग्रेजी में बोली, "फिर आ गये डिस्टर्ब करने । मैंने कह दिया न कि ट्रांसलेटर नहीं है ।" "यू ब्लडी फूल, गिव इन राइटिंग दैट यू विल नाट कैश द ट्रेवलर चैक बिकाज इट इज साइंड इन हिंदी, गिव मी इन राइटिंग। यू हैव ह्यूमिलिएटेड मी, आई विल नाट लीव यू । तुम मुझे नहीं जानती मैडम ।" मैं यह समझ कर चुप रहा कि मैं इस अहिंदी क्षेत्र में अपनी वजह से कोई हंगामा न खड़ा करूं । "गिव मी इन राइटिंग एंड आई एम. गोइंग टू डिस्क्राइब माई ह्यूमिलियेशन टु ए. जी. रामचंद्रन एंड टु द फाइनांस मिनिस्टर इन डेल्ही ।" उसने चुप चाप चेक मेरे सामने रख दिया ।"यहां हस्ताक्षर करिए ।" मैंने हस्ताक्षर किया और उसने चपरासी से कैश लाने को कहा ।" बैठ जाइए । आपको इतना गुस्सा नहीं होना था ।" वह हिंदी में बोली." बाकी नौ चैक्स भी निकालिए, मैंने नौ हजार नोटों की गड्डी दिखाते हुए कहा," सेंट्रल बैंक से सुब्रह्मण्यम् साहब ने कैश करा दिया ।"

"और उन्होने ही कहा कि आपको "इन राइटिंग मांगिये ।"

"जी हां, मैं इसलिए कह रहा हूं मैं हिंदी क्षेत्र का एक गांधीवादी आदमी हूं । इतनी आशा मत करिये हिंदी क्षेत्र के गंवार लोगों से । वे कभी भी आपकी बेइज्जती कर सकते है । इसलिए नियम से काम कीजिए । उसने लंबी सांस ली, रुपया देते हुए बोली, "प्लीज फारगिव मी"

"डोंट वरी । थैंक्स ।"

मैं जयकांतन् जैसे साहित्यकार के सम्मुख नत-मस्तक होता हूं । जब वे उत्तेजना में हिंदी विरोधियों द्वारा फेंकी हुई कुर्सी से घायल और लहूलुहान होकर भी हिंदी में बोलते रहे क्योंकि वे मानते थे कि भारत की भाषाएं एक-दूसरे के इतनी करीब हैं कि हम अधिक से अधिक भाषाओं को जान सकते हैं, सीख सकते हैं । और फिर एक मौलिक प्रश्न था उनका कि अगर तमिलनाडु सरकार हमारे सुयोग्य नवयुवकों को तमिलनाडु में नौकरी देने में असमर्थ है, और हमारे युवकों को इसके लिए उत्तर भारत में जाना ही है तो वहां हिंदी भाषी हिंदी न जानने वालों को वैसे ही फेंक देंगे जैसे ये कुर्सियां फेंक कर तुम मुझे मौत तक ले जाना चाहते हो ।

दो-तीन दिनों बाद अचानक एक दिन मास्टर पप्पू से मेरी भिड़ंत हो गयी । वे लिफ्ट को लेकर सबसे ऊंचे तल्ले पर गये थे और वहां विहंगावलोकन कर रहे थे। मैं तीसरे तल्ले पर खड़ा था । वहां अन्य लोगों की भीड़ लग गयी । "कौन है भाई, अरे लिफ्ट का दरवाजा बंद करो और नीचे लाओ "मैं जोर से चिल्लाया," पप्पू गुरु, नीचे आ जाइए ।" पप्पू मास्टर तिलस्मी दुनिया से जगे । जब तीसरी मंजिल के लिफ्ट द्वार पर पहुंचे तो रंगारंग भाषाओं में लोग उन्हें गालियां देते रहे। वे कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे । मैंने हाथ जोड़कर उनकी ओर मुखातिब होकर कह, "एक्सक्यूज हिम जैंटलमेन, वह अपने मां-बाप का इकलौता बेटा है । उसके पिता तीन महीने से आर्टीफिशेल किडनी सेक्शन में भरती हैं वह जरा अपसेट रहता है ।"

"हमें पता नहीं था" सभी बोले, "वेल पप्पू मास्टर, चलो भाई, तुम्हीं ले चलो हमें निचले तल्ले पर ।" जब हम उतर गये और लिफ्ट बाकी लोगों को ले आने के लिए पुनः तीसरे तल्ले की ओर भीड़ चली गयी, तो पप्पू मास्टर मेरे पास आये, "अंकल आप जादू जानते हैं न ?"

"क्या ? आजकल तुम बहुत बदतमीज होते जा रहे हो ।" मैंने कहा । पप्पू मास्टर समझ नहीं पाये, पर यह जानकर कि मैं गुस्से में हूं, वह मुझसे चिपककर बोले– "मेरे ताऊ आ गये हैं अंकल । पापा-मम्मी सभी बहुत खुश हैं । मै उसी खुशी में लिफ्ट में झूला झूल रहा था ।" उन्होंने पलकें झुकायीं-उठायीं– "आप नाराज हैं अंकल, वे लोग बहुत वैसे आदमी हैं । जाने क्या-क्या कह रहे थे । मुझे लगाकि घेर कर मारेंगे मुझे । पर अंकल जाने आपने क्या कहा, वे सब हंसने लगे । आप जादू जानते हैं न अंकल ।"

"हां पप्पू मास्टर, मैं जादू जानता हूं, कभी आपको सिखा दूंगा । मैं बगल की गोलाकार पुष्करिणी के बायें किनारे से होता हुआ आर्टिफिशेल किडनी वार्ड की ओर चल पड़ा ।

एक नारी को बेवकूफ बनाकर तीन सौ की जगह सात सौ लेना, एक ईमानदार और नम्र भाषी व्यक्ति को हिंदी वाला समझकर हस्ताक्षर को

अप्रामाणिक कहकर हिंदी को धिक्कारती हुई औरतें— ये सभी चीजें सीधे लोगों के साथ ही क्यों घटती है । तुम कहते हो कि जयकांतन् की भी स्तुति बेकार है *क्योंकि हो सकता वह हिंदी में अपने उपन्यासों का अनुवाद अथवा दूरदर्शन पर* सीरियल बनवाने से लेकर सम्पूर्ण उत्तरभारत में भारतीय एकता के जबर्दस्त हिमायती के रूप में अपना अभिनंदन कराना चाहता हो ? क्या तुमने यहां यह सब देखा नहीं। क्या श्रीकांत को हिंदी बोलने पर गालियां देते हुए लोगों ने पीछा नहीं किया था ? किंतु यहां तो रहमान मियां, अकरम, हयात भी है तो जो बहुत ख्याल करते हैं हिंदी वालों का । वे अपना ख्याल करते हैं । उनकी फलों की दुकान पर 'जूस' पीने वालों की भीड़ होती है । उनके पानों की बहुत व्यापक खपत को भी तो देखो। उनकी मद्रास और बेलोर के बीच दो-दो टैक्सियां चलती हैं ? यह सब वे लोग प्यारी उर्दू के जरिये तहजीब के साथ करते है । तुम मुझे इन लोगों को गलत समझने के लिए उकसाओ मत, मेरे अदर का आस्थावान कहता है। कभी वह बुझकर निराश हो जाता है । कभी उसे यह सब बहुत बड़े मुर्दाघाट की तरह लगता है । मैं बिल्कुल शांत बैठ गया । मुझे लग रहा था कि वेल्लौर में क्या मेरी मृगतृष्णा शांत होगी ? एक तरफ पीड़ा के नाक बराबर पानियों के घेरे को तोड़कर बाहर तो आ गयी मेरी आत्मा पर क्या वह मुझे मृगतृष्णा के पीछे दौड़ा कर मार नहीं डालेगी ?

> निकल कर आतो गयी घेरे-पानियों से मगर
> कई तरह के सराबों ने मुझे घेर लिया
> न जाने कौन है जिसकी तलाश में बिसमल
> हर एक सांस मेरा अब सफर में रहता है।
> — बिसमल साबी ।

श्री सिन्हा जी के भाई के आ जाने से डोनर की जांच-पड़ताल मुकम्मल हो गयी । उस वक्त से ठीक 15 दिन बाद ट्रांसप्लांट की तिथि निर्धारित कर दी गयी। सातवें दिन सिन्हा साहब यूरोलाजी वार्ड में आ गये । पप्पू मास्टर अपने पापा के दुःख के साथ-साथ रेस लगाये थे । पापा-मम्मी खुश तो पप्पू गुरू खुश,पापा-मम्मी उदास तो, पप्पू गुरू उदास ।

मैं आश्चर्य से पप्पू को देखा, "अंकल " पप्पू गुरू ने हाथ पकड़ लिया," सब कुछ एकदम कर्रेक्ट चल रहा है" "अच्छा तो आपने अमेरिकी लोगों की तरह "र" की जगह "र्" बोलना शुरू कर दिया । बड़े खुश हो?"

"हां अंकल, परसों मेरे पापा का ट्रांसप्लांट है । आज शाम को मेरे ताऊ भी अस्पताल में भरती हो जायेंगे । इसके बाद पापा के साथ हम पहाड़ों पर जायेंगे

वहां देखिए वहां, जहां बादल ही बादल हैं ।"

"अच्छा तो आप बादलों के पास जायेंगे, मास्टर पप्पू ?"

तभी नीचे वाले कमरे से श्रीमती सिन्हा आ गयीं," ये है सिन्हा जी के ब्रदर।" श्रीमती सिन्हा के चेहरे पर अलौकिक शांति थी, ऐसी जो तभी उभरती है जब कोई अपनी मंजिल के निकटतम पहुंच जाता है ।

" क्या सिन्हा साहब अटैची लिये जा रहे हैं । यूरोलाजी में ?" मैंने श्रीमती सिन्हा से पूछा ।

"अरे नहीं भाई-साहब, मेरे भाभी- भईया मद्रास जा रहे हैं पार्थसारथी मंदिर का दर्शन करने । अभी लौट आयेंगे शाम तक ।"

"अच्छा, बड़ी खुशी हुई सिन्हा साहब आपको देखकर । आप तो नये संसार के लक्ष्मण हैं । ऐसा त्याग बहुत कम लोग करते हैं । देखिए न जब श्री लक्ष्मण मेघनाथ की शक्ति लगते ही धरती पर गिर पड़े तो राम रोने लगे, जानते हैं क्यों रोये... ? मैं बताता हूं अपने तुलसी बाबा ने लिखा है कि राम की परछाई के पीछे चलने वाले लक्ष्मण ही नहीं रहेंगे तो अपने दुःख को बंटाने वाले भाई के बिना मैं किस भरोसे जिंदा रहूंगा ।

अब मेरो पुरुसारथ थाको,
बिपत बँटावनहार बंधु बिनु करों भरोसो काको ?

अच्छा भाभी नमस्कार ।

तीसरे दिन मैं 8 बजे नहा-धोकर जब लिफ्ट के पास गया तो पप्पू गुरू नहीं मिले। मैं ताली पीटकर हंसा, "मैं भी कैसा भुलक्कड़ हूं । अरे अब तक तो सिन्हा जी ट्रांसप्लांट वाले ऑपरेशन कक्ष में चले गये होंगे । मैं लिफ्ट से जब निचले तल्ले पर पहुंचा तो देखा पप्पू मास्टर दोनो ठेहुनियों का सहारा लिये बांहों में सर छिपाये बैठे थे । मैं जब उनके पास पहुंचा तो भी वे कुछ नहीं बोले, "क्यों मास्टर" मैंने उनकी बांह पकड़ कर खींची, "क्या बात है ?" पप्पू मास्टर रो रहे थे । मेरे बार-बार पूछने पर उन्होंने कहा कि उनके चाचा भाग गये । अब बाबूजी का ट्रांसप्लांट कभी नहीं होगा ।" वे हिचक-हिचककर फूट पड़े । तभी श्रीमती सिन्हा आ गयीं बोलीं," आपने तो तभी ताड़ लिया था भाई साहब, जब अटैची लेकर जा रहे थे ।"

"क्या कहा उन्होंने ? आपमें से किसी ने कांनटैक्ट किया ।"

"हां मैं खुद गयी । वे लोग पार्थसारथी टेंपुल के पास की धर्मशाला में थे । मैंने कहा, बहुत कहा, हाथ जोड़ा, अनुनय-विनय की, पर वे कहने लगे की मेरी किडनी

तभी मिलेगी जब भाई साहब अपनी पूरी प्रापर्टी मेरे नाम लिख देंगे ।" वे रोती रहीं ।

सुख के दिन सब एक सपन थे।
दुख के दिन अब बीतत नाहीं

यह आवाज मेरे मन को रेतने लगती है रहमान मियां । मैं सब कुछ यानी शोक में डूबी शायरी, नातिया, कव्वाली सुनता हूं या ताजिये के साथ रोते हुए मर्दो खवातिनों को देखता हूं तो बड़ी पीड़ा होती है । मैं अक्सर ऐसे मौकों पर ठिठक कर खड़ा रह गया हूं । मैंने खलील मियां के परिवार को जलालपुर से रुखसत होते देखा था । पुल पर चढ़ी बैल गाड़ी में बैठा उनका परिवार मुझे ताजिये की तरह लगा था । पर रहमान मियां, देवदास का यह गीत जिसे सहगल गा रहे हैं, अभी बंद कर दीजिए । रहमान मियां, कैसेट निकाल दीजिएगा ।"

"आप नाहक अपने दिल को दुख मत पहुंचाइए प्रोफेसर साहब, इन गीतों को सुनकर क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि मेरी ही तरह इन्हें सहने वाले पहले भी थे और आगे भी रहेंगे ?"

"रहमान मियां, आप तो फलसफा झाड रहे हैं ।"

जैसी कि उम्मीद थी, मेरे खानाबदोश परिवार के पास पहली चिट्ठी आयी वह दिनांक 21 फरवरी 1982 की लिखी थी । निर्मल तुली ने भेजी थी । मैं पीछे लिख चुका हूं कि निर्मल और श्रवण मुझे काशी विश्वनाथ के प्रसाद से मिले । इन्होंने जितना मेरे लिए तथा मेरे परिवार के लिए किया, वह सब एक चांदनी के समुद्र में धीरे-धीरे बहती चमकीली लहरों जैसा लगता है, हालांकि अपनी चिट्ठी मे निर्मल ने अपने गुरुदेव यानी मुझको धीरज बंधाया था पर वह चिट्ठी मंजु के लिए लिखी गयी थी ।" मंजु का स्वास्थ्य कुछ राहुयुक्त हो गया है, जो ठीक होने में बहुत लंबा समय ले रहा है । किसी दिन मंजु की स्मृति की सघनता अनुभूति के ताने-बाने में इस तरह पिघलती दिखाई देती है कि मैं उसमें बहने लगती हू । आपका पूरा परिवार एक कड़वी जिंदगी को झेल रहा है । मैं अच्छी तरह यह महसूस कर रही हूं, चूंकि कड़वी जिंदगी को चाय की चुस्कियों में पी जाने की मैं काफी आदी हो चुकी हूं । क्या आपने किडनी ट्रांसप्लांट का निश्चय कर लिया है ?

हां, निर्मल, कर चुका हूं । तुम जिस तरह बच्चों को कानवेंट भेजकर थर्मस में चाय और जाने क्या-क्या ले आकर मंजु को खिलाती-पिलाती रही, वह स्मृति शेष ही है अब ? मुझे चिकित्सा संस्थान के निर्देशक बड़े तुली साहब, भाभी जी और उम्र में मुझसे एक साल जूनियर श्रवण तुली और विलक्षण निर्मल जो हर मोर्चे

पर मेरे साथ खड़ी रही, इन्हें क्या धन्यवाद दूं ।

3 मार्च 1982 का लिखा पत्र था वशिष्ठ जी का जो जनवार्ता के पैड पर स्पष्ट ढंग से अंकित था । वशिष्ठ ने तमाम साहित्यकारों का नाम गिनाया । यानी वशिष्ठ जी के शब्दों में ही कहूं तो "डॉ. गया सिंह, हरिशचंद्र श्रीवास्तव, मंजीत कुमार चतुर्वेदी, मोहन लाल गुप्त, डॉ. चंद्रभाल द्विवेदी, आर. के शुक्ला, श्री कृष्ण तिवारी, धर्मशील चतुर्वेदी आदि लोगों की सहानुभूति और संवेदना मंजु के साथ है यह सब मुझे परितोष देने का बहाना था ।

रहिमन निज मन की व्यथा मनहीं राखिय गोय ।
सुन अठिलइहैं लोग सब बांटि न लैहैं कोय ।

मैं बहुत कृतज्ञ हूं भाई वशिष्ठ जी, कि आपने कुछ परिचित साहित्यकारों की सहानुभूति और संवेदना का संबल दिया । यद्यपि आप द्वारा गिनाये हुए नामों में से गया सिंह और श्रीकृष्ण तिवारी को छोड़कर किसी ने क्षेत्र सन्यासी तथा खानाबदोशों के परिवार के मुखिया के नाम एक कार्ड भी डालने का कष्ट नहीं किया क्योंकि लोग अच्छी तरह जानते हैं कि शिवप्रसाद ने कभी भी, उन दिनों में भी जब उसे रिक्शे पर बैठकर उदयप्रताप कालेज तक रोज आने और जाने की विवशता उठायी, क्योंकि वह इस व्यक्ति की रोटी से जुड़ी हुई समस्या थी, तब भी उसने किसी से भी, किसी भी तरह की मदद नहीं ली, क्योंकि वह अपनी हथेली को उलटकर नहीं, हमेशा ऊपर रखकर जीने वाला व्यक्ति है । वशिष्ठ जी, आपकी चिट्ठी ने जितना बल दिया, उतना ही आहत भी किया । हालांकि मैं उसे आपकी त्रुटि नहीं मानता । पत्र के अंत के वाक्यों ने मुझे पीड़ित किया है," एक बार और याद दिलाता हूं कि आधे-से अधिक बनारस की शुभ कामनाएं आप और मंजु के साथ हैं और हम लोग अपना रक्त तक देने में नहीं हिचकने वाले हैं, बस इशारे का इंतजार है ।" मैं आपके इस संकल्प से प्रसन्न हुआ वशिष्ठ जी क्योंकि हम नवंबर उन्नीस सौ इक्यासी से 19 जनवरी 1982 तक लगातार काशी में रहे, केवल एक हफ्ते के लिए चंडीगढ़ गये थे । हमलोग यानी तीन तिलंगे नरेंद्र, श्रीकान्त और श्याम नारायण पाण्डेय दिन-रात डटे रहते । एक और नाम भी था इस त्रयी को चतुष्टयी बनाने वाला यानी मंजु का सहपाठी पराग जो प्रतिभावान कवि के रूप में उभड़ने के पहले ही जीविका धंधे में फंस गया । तीसरा पत्र उसका है । (उस मंजु के लिए, जो बसंत के पहले प्रहर में जिंदगी और मौत के बीच खेल रही है।)

मंजु / एक चिड़िया है ।
और सामने एक खुला आकाश /एक पूरी जिंदगी ।
चिड़िया /हर पिंजड़े के खिलाफ़ दृढ़ है ।
चिड़िया /खुले आकाश के लिए पंख फड़फड़ती है ।
मैं /आश्वस्त हूं ।
कि चिड़िया /पिंजड़े के पार /खुले आकाश में इठलायेगी ।
मंजु /एक चिड़िया है /चिड़िया / अपना आकाश पायेगी ।

यह चिड़िया कितनी अभिशप्त है, वह खुद चल उड जा रे पंछी-- गुनगुनाती है । पता नहीं क्या है उसके सामने ? वह शरीर के पिंजड़े में रुकेगी या...।"

डायलसिस के लिए तब साढ़े पांच हजार प्रतिमाह की फीस होती थी । मैंने दो महीने की अग्रिम फ़ीस के ग्यारह हजार तो दे दिये थे, पर अप्रैल मास की एडवांस फीस जमा नहीं हुई थी ।

इस बीच हम लोगों ने अपने अंदेशे और अपरिचित सर्जन डॉ. अवधेश प्रसाद पांडेय से वार्ता नहीं की । मंजु की हालत सुधर रही थी । बस बीमारी सिर्फ एक थी कि वह खाकर उल्टी करने लगती थी । मनुष्य-मनुष्य के लिए, वसुधैवकुटुंबकम् का नारा लगाता है, खासकर हिंदुस्तानी, इस दिलफरेब नारे के बीच लोगों को लपटों में झोंक देता है । इस तरह के डरावने चेहरे वाली महिलाएं एक समस्या बन गयी थीं । वह बिना उसकी ओर पीठ किये खाना नहीं खाती थी। उसे अक्सर जाड़ा देकर बहुत बुखार हो जाता था ।"डॉ. सिंह" हैड सिस्टर ने एक कागज थमाया,"आपने मार्च की डायलसिस फीस अब तक जमा नहीं की । अगर एक हफ्ते के अन्दर जमा नहीं हुई तो हम डायलसिस रोक देंगे ।" यही लिखा था उस छपी हुई चिट पर।

मुझे वाराणसी जाना ही होगा क्योंकि अब तक बी. एच. यू. के चिकित्सा संस्थान, चंडीगढ़ की यात्रा, फिर लौटकर चिकित्सा संस्थान में डायलसिस की व्यवस्था, मद्रास आगमन और बेल्लौर की यात्रा और शेष कार्य निपटाने में कुल तीस हजार लग चुके थे । इस बीच बनारस में हीमो डायलसिस के टेकनीशिन लक्ष्मेंद्र शर्मा ने चंडीगढ़ से आकर समूचा उत्तरदायित्व संभाल लिया था, नतीजा यह कि हम लोगों को तीन हफ्ते मुफ्त मिल गये । अब क्या होने वाला है? हम हीमो डायलसिस के बरामदे में चक्कर लगाने लगे । लक्ष्मेंद्र अपनी बुद्धि और व्यवस्था के अनुसार जो कर सकते थे, करते रहे । एक दिन उन्होंने मेरे पास बैठते हुए कहा, "यह लगातार चलने वाली डायलसिस के बारे में आपने क्या निर्णय लिया है ।"

"देखिये, लक्ष्मेंद्र जी, हम अब तक तीस हजार लगा चुके हैं और यह जानते हैं कि यह वांछित व्यय का केवल बीस प्रतिशत है । अब तो पांव रकाब में और सवार घोड़े की लगाम संभालने में लगा है । हम क्या करें, जब हमारे पास किड्नी डोनर नहीं हैं ?"

"आप अखबारों में मंजु के ब्लड ग्रुप का जिक्र करते हुए विज्ञापन दिला दें । कौन जाने कोई तैयार ही हो जाये ।"

मुझे लक्ष्मेंद्र का कथन कुछ भरोसे लायक लगा ।" क्या हर्ज है ? यह करके भी देख लें," यह सब बातें तब की हैं जब हम बनारस में थे यानी बी. एच. यू. के अस्पताल में ।

मैं दोपहर खाना खाकर लेटा हुआ था । वैसे मार्च की शुरुआत ही थी, पर दक्षिण की दुपहरिया उत्तर से बहुत भिन्न होती है । यहां तापमान गिरे तो, उठे तो, बहुत थोड़ा अंतर पड़ता है, पर गर्मी की तपिश बर्दास्त नहीं होती थी । एक दिन में एनेक्से के कमरा नं. 417 में लेटा था कि पत्नी ने दरवाजा खटखटाया।

"खोलीं," ऊ जो शास्त्री हैं, बुलावा है, एक चिट भी लिफाफे में रखल हौ ." मैंने लिफाफा ले लिया, चिट पर लिखा था, "प्लीज कम विद आल द रिपोर्ट्स, एक्सरेज एंड डोनर इमीडियेटली ?"

हूं तो अब वह घड़ी आ ही गयी । डोनर थे जगरदेव यादव जिसका पिछले एक पखवारे से नाम संस्कार हो गया था, शंभू प्रसाद सिंह, बीमार से संबंध था चाचा का । मैंने अपनी पत्नी से कहा, "ललित विहार जाकर खाना खा लो और फिर आगे बढ़कर, जहां रुके हैं, नरेंद्र, श्रीकांत आदि उनसे कहो कि शंभू चाचा को जे. सी. एम. शास्त्री ने बातचीत करने के लिए बुलाया है । वहां यह कहकर तब खाना खाने बैठना ।"

नरेंद्र, श्रीकांत और जगरदेव— तीनों के तीनों लगभग दौड़ते हुए आये और अनेक्से के कमरा नंबर 417 में आकर बगल वाली बेड पर बैठ गये । इन लोगों के खाने के पहले काशी के एक हरिश्चंद्र नामक व्यक्ति का धमकी भरा तार मिला, हिंदी में । जो उन्होंने पर्याप्त पैसा खर्च करके भेजा होगा । मैंने तार नरेंद्र को दे दिया—गुर्दा प्रत्यारोपण रोकिए, बहुत बड़ा खतरा होगा । अपने परिवार की ही किडनी लगनी चाहिए । आर. जी. सिंह ने कहा है कि प्रत्यारोपण पांच बार हो सकता है । रुपयों की चिंता न करें । अगर प्रत्यारोपण कराना ही हो तो खराब किडनियों को निकलवा दीजिए । प्रत्यारोपण की तिथि तुरंत तार द्वारा सूचित कीजिए ।"

"हूं तो उसी साले की करतूत है यह सब ? तीनों एक साथ बोल पड़े । विजयी भाई साहब भी आ गये हैं । लाइए यह तार । जरूरत पड़ी तो मैं

वाराणसी जाऊंगा और क्या-क्या खतरा होता है, बताकर ही आऊंगा ।" नरेंद्र ने कहा, "छोड़ो, इसमें झूठ क्या है ? क्या हम नहीं जानते कि रक्त संबंधी की किडनी ही ठीक होती है ? यह सब मुझे प्रेशराइज्ड और परेशान करने के उद्देश्य से लिखा गया है । तुम लोग आफिस के पास वाले खुले बइठके में बैठे रहना, मैं शास्त्री से बात करके लौटूं तो कोई निर्णय लिया जायेगा ।"

हम लोग 'आर्टिफिशल किडनी विभाग' यानी उसी नैफ्रोलौजी विभाग में पहुंचे । मैंने क्लर्क को शास्त्री का लिखा चिट दिखाया और कहा, "मैं दौड़ता हुआ आ रहा हूं, क्या बात है ? इस इमीडिएटली का मतलब क्या है ? मेरी पुत्री की आज डायलसिस का टर्न था, कोई गड़बड़ी तो नहीं हुई ?"

"नो सर, ही वांट्स टु मीट यू । डायलसिस के फीस के बारे में कुछ बात करनी है आपसे ।"

"आल राइट, इनफार्म हिम । आई हैव कम ।"

शास्त्री ने अपनी कुर्सी पर उचकते हुए मुझसे हाथ मिलाया । सारी रिपोर्टें और आई. बी. पी. टेस्ट्स की फोटो प्रिंट लाये हैं ?" शास्त्री ने कहा । प्रसंगतः कह दूं, शास्त्री तमिल नहीं आंध्रा के है । मैंने प्रिंट्स का लंबा-चौड़ा लिफाफा उन्हें पकड़ा दिया ।

उन्होंने एक फोटो प्रिंट उठाया और ट्यूब लाइट से प्रकाशित कांच पटल पर जड़ दिया । उन्होंने स्केल निकाली और बची हुई किडनी की लंबाई नापने लगे । तब तक डायलसिस रूम से डॉ. जाकोब आफिस मे आये और जे. सी. एम. शास्त्री को स्केल से नापते देखकर बोले—" डॉ. सिंह मैंने कह दिया था आपसे कि कोई विकल्प नहीं है । फिर ये सब फोटो प्रिंट्स लेकर आप यहां क्यों आये ? क्यू वम वेस्ट विंग मेरे मातहत है, इनके नहीं ।" मैंने झोले से वह चिट निकाली और जाकोब को दे दी । "सो यू आर इंटरेस्टेड टु नो द फैक्ट्स ?" ह्वाट इज युवर ओपिनियन मि. शास्त्री ?" शास्त्री इस कदर भयभीत होकर चुप रह गये कि मेरे मन में उसके प्रति दया जगी । "किसी दिन मैंने ही शास्त्री जी से प्रार्थना की थी कि जरा ..सरे प्लेट्स देख ले ।"

"झूठ मत बोलिये," जाकोब बोले ?

मैं हल्के मुस्कुराया और चुप हो गया ।

"हवाट एबाउट द डोनर, किडनी देने वाला कौन है ?" शास्त्री ने पूछा।

"मैं जानता था डॉक्टर कि आप डोनर से मिल चुके है ।"

कौन है ?

"मेरा सगा भाई"

"हैज ही कम ? क्या वह आये है ?"

"प्लीज काल हिम, आई वांट टु सी हिम ।" चाको ने कहा

मैंने जगरदेव को बुलाया । उन्होंने आफिस में आकर जाकोब और शास्त्री को नमस्कार किया । "सो यू आर द डोनर मिस्टर शंभू प्रसाद ।" तुम डोनर है न ? कौन-कौन टेस्ट हुआ अब तक ?"

"ब्लडयूरिया, क्रियेटनिन, यूरिन कल्चर, आई.बी.पी." ।

"दैट इज आल राइट, आप जाइए ।"

मैंने हाथ का इशारा किया और जगरदेव आफीस से बाहर चला गया ।

"कम टु द् पाइंट डॉ. शास्त्री ? मैं क्यों बुलाया गया ?"

"आपने इस महीने की एडवांस डायलसिस फीस नहीं दी अब तक ।"

"डायलसिस जनवरी में किस तारीख से शुरू हुई, मिस्टर शास्त्री ?"

"आई डोंट नो"

"यू शुड" मैंने कहा ।

उन्होंने बेल बजायी क्लर्क आया, "मंजुश्री की फाइल ले आओ । फाइल खोलने पर पता चला कि 29 जनवरी को पहली डायलसिस हुई ।

"कहिए मिस्टर शस्त्री, मैं दो महीने का एडवांस दे चुका हू, बल्कि यह कहिए कि यू हैव नो राइट टू आस्क । मैंने मार्च का एडवांस क्यों नहीं दिया । आई विल पे इट आन मार्च ट्वेंटी नाइन । दैट विल बी एडवांस फार अप्रिल । मैं दो अग्रिम शुल्क दे चुका हूं ।"

"यह आपकी सुविधा के लिए है डॉ. सिंह—" जाकोब ने कहा ।

"डॉ. जाकोब, मेरे पास पैसे नहीं हैं—" अप्रैल की एडवांस फीस के लिए पैसे लेने मुझे बनारस जाना है । लौटकर ही दे पाऊंगा ।"

"आपसे किसने कहा डॉ. शास्त्री कि डायलसिस का ऐडवांस नहीं मिला है ?"

"मैं नहीं जानता" शास्त्री झल्लाकर बोला ।

"यू शुड" जाकोब ने कहा । मैंने एक्सरे प्लेट्स, रिपोर्टें सब उठायीं और कमरे से बाहर आ गया ।

"डोंट माइंड प्रो. सिंह" जाकोब बोले और चले गये ।

मैं लौटकर कुछ पुरानी चिट्ठियां खोजने लगा । जहां तक मुझे मालूम है नरेंद्र नीरव ने 19 फरवरी 1982 को चिट्ठी लिखी थी, वह बनारस के शुभेच्छुओं को सुना देना चाहता हूं । वह चिट्ठी काशी से लेकर बेल्लोर तक को बांधने और सत्य को सत्य की तरह कह देने की स्पष्टता का उदाहरण है । आप कुछ नहीं कर सकते । साफ कहिए । पर सब कुछ का इशारा मत पूछिए । मैं घमंडी आदमी हूं। उसी में जीते हुए चौवन वर्ष बीत गये । उसे तोड़ने की कोशिश मत कीजिए । मुझे नीरव की शैली अच्छी लगी । चिट्ठी देर से मिली । फिर भी, वह पत्र हमारी

स्थिति का नमूना है ।

प्रिय डॉक्टर साहब,

प्रणाम ।

मंजुश्री की सखी अपर्णा ने पत्र द्वारा हाल लिखा था । जब वाराणसी गया तब पूरी खबर मिली । 'आज' कार्यालय में गया सिंह भी मिले थे । यह पत्र डाला से लिख रहा हूं तथा डॉ. जगदीश गुप्त को इलाहाबाद लिख रहा हूं । उन्हें भी पेप्टिक अल्सर हो गया था, अब ठीक है । डॉक्टर साहब, मैं सोचता हूं, आपकी मानसिक, आर्थिक, सामाजिक यंत्रणा के लिए हम सब क्या कर सकते हैं । इस व्यवस्था में आपकी स्थिति एक समाचार भी नहीं बन सकती ? मैं ईश्वर में विश्वास करता हूं इसलिए सब कुछ उसे समर्पित कर देता हूं अन्यथा आपकी और आपकी तरह अनेक प्रतिभाओं की मन:स्थिति से व्यवस्था का कोई संवेदनात्मक रिश्ता नहीं है ? अस्सी पर, गोदौलिया पर, छात्रसंघ भवन तथा प्रेसों में आपकी चर्चा करते हुए यही सोचता रहा कि मंजुश्री के स्वास्थ्य और हिंदी के स्वास्थ्य का क्या रिश्ता है ? क्या हम इसे महसूस करेंगे ? मैं तो क्षमायाचना के भी योग्य नहीं हूं । वहां श्रीकांत भी गये हैं, भाग्यशाली हैं । उन्हें मेरा स्नेह, आशीर्वाद पहुंचा देंगे, वह इस अर्थ में सभी लोगों से जीत गया ।

समर्पित

नरेंद्र नीरव (19/2/82)

9

कुछ भी नहीं है अनदेखा, नियति या कि भाग्य
जो मोड़ सके, रोक सके, डिगा सके
संल्पित, निश्चयकृत, आत्मा का पंथ
अवदान कुछ भी नहीं, इच्छा ही है सर्वश्रेष्ठ महत् वस्तु
तमाम बाधाएं हट जाती हैं राह से
तुरंत या विलंब से
तीव्र शक्ति धारा को रोक कौन पायेगा
मिलने के पहले समुद्र से
कोई मेहराबदार क्रमशः बढ़ता हुआ अवरोध
एक छिन भी अथाह चेतना की धारा के सामने ठहर नहीं पायेगा
प्रत्येक जन्मी हुई आत्मा वह जीत कर रहेगी
जो उसका ही प्राप्य है
बेवकूफों को बकने दो कि यह महज चांस है
सच्चा भाग्य है उसका जो संकल्प से डिगता नहीं
अणुमात्र सक्रियता या निश्क्रियता भी होती है उद्देश्य हेतु
अर्पित । मौत भी कभी-कभी रुक जाती है धार में
घंटे भर तक ऐसों के इंतजार में

एल्लाव्हीलर विलकाक्स (Ella Wheeler Wilcox) की सुप्रसिद्ध कविता 'विलपावर' का अनुवाद मैंने इसी उद्देश्य से प्रस्तुत किया है कि मैं इस की सबलता और दुर्बलता दोनों ही जानता हूं । यह सबल वहां होती है जहां जूझने वाला सख्श अपने उद्देश्य की पूर्ति के बिना धरती छोड़ना अस्वीकार कर देता है, वह मृत्यु के समय भी यमराज को रोक देता है । वह दुर्बल वहां होती है जहां वह मृत्यु के पहले ही हार मान लेता है । युद्ध के पहले अर्जुनीय मुद्रा में धनुष-बाण रखकर बैठ जाता है ।

मंजु क्या करेगी । यह सवाल था, जिसका मेरे पास कोई जवाब नहीं था ।

उसे मैंने अपनी संकल्प शक्ति से थिर किया है, दृढ़ बनाया है, पर वह अब भी क्या अज्ञात नियति से मुक्त हो सकी है ?

आज डायलसिस का टर्न नहीं था । मैं मंजु से मिलकर प्रातःकाल 9 बजे ही हास्पिटल एनेक्से में आ चुका था । वहां मैंने नरेंद्र, श्रीकांत, जगरदेव, सत्यनारायण और विजयी को बुला रखा था । सब लोग सादे नौ तक आ गये । मैंने श्रीकांत से कहा कि बड़े वाले थर्मस में गेट से खूब गरम चाय, और पान लेकर आ जाओ । जगरदेव यानी मेरे भ्राता शंभू सिंह को ढूढ़ने का सारा श्रेय श्रीकांत और नरेंद्र का था । इनका एक दुःखी दल है, जो मारवाड़ी अस्पताल गोदौलिया के बरामदे में बैठा रहता है । पैसा लेकर खून बेचना इनका धंधा है । ब्लड बैंक बी. एच. यू. में जिन चार आदमियों के नाम दर्ज थे 'ओ-निगेटिव' ब्लड ग्रुप के, उसमें एक नाम और जुड़ा जगरदेव यादव का । उसका घनिष्ठ मित्र था सत्यनारायण । वही रिंग लीडर भी था । उसने दो साल पहले अपनी किडनी स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के बी. एच. यू. शाखा के एक वरिष्ठ कर्मचारी श्री प्रभात कुमार जैन को दी थी । उसे तब कुल चार हज़ार रुपये मिले थे । उसी सत्यनारायण ने श्रीकांत से बताया कि मेरा एक मित्र है जिसका ब्लड ग्रुप ओ—निगेटिव है । उससे अगर बात करना चाहें तो उसे डॉक्टर साहब के घर तक ले आऊंगा । ब्लड ग्रुप की विलक्षणता देखते हुए मेरे दिमाग में हमेशा हलचल होने लगती । कितनी अभागिन है मंजु कि ब्लड ग्रुप श्रीमती इंदिरा गांधी का मिला और रोग राष्ट्र नायक जयप्रकाश नारायण का । जयप्रकाश जी को जिलाने के लिए नब्बे लाख की डायलसिस मशीन मंगाई गयी जिसका सारा व्यय श्रीमती इंदिरागांधी ने उठाया । मैंने ये नाम इसलिए नहीं गिनाये कि मैं मंजुश्री को आसमान की ऊंचाई पर बैठाना चाहता हूं, इसे मात्र अपनी दीनता के प्रमाण के रूप में रख रहा हूं । कहां राजा भोज और कहां भोजुआ तेली । यह बात और भी स्पष्ट हो चुकी है कि रेनल फ़ैल्योर से जान बचाने के लिए तमिलनाडु के मुख्यमंत्री रामचंद्रन पर कितना व्यय हुआ लगभग एक करोड़, जैसा कि अखबारों में छपा । उन्हें अपनी भतीजी ने किडनी दी पर उनकी हालत कैसी है, यह न तो मैं और न तो आप जान सकते हैं । राजनीति के क्षेत्र में मृत्यु की ओर जाने वाले को अमर, कमजोर को पूर्ण चंगा, विकलांग को संतुलित और अशक्त को शक्तिशाली और पूर्ण प्रभावी बताया जाता है ।

"ठीक है सत्यनारायण, तुम्हारा पांच हजार का प्रस्ताव मैं स्वीकार करता हूं।" मैंने कहा ।

"नाहीं भइया, हम छः हजार से एक्को पइसा कम न लेब" जगरदेव ने गर्दन झुकाये हुए कहा— "हमहन के रहे-सहे क इंतजामों ठीक नाहीं बा । अच्छा होटल आ बढ़िया खाने-पीने का बंदोबस्त भी चाही ।"

"ठीक है जगरदेव, मंजु जैसे मेरी बेटी है, वैसी ही आज से वह तुम्हारी बेटी

भी हो जायेगी । अगर तुम छः हजार चाहते हो तो छः हजार भी मैं देने को तैयार हूं इस आशा से कि जब सत्यनारायण की किड्नी से जैन भले चंगे होकर स्कूटर से दौड़ रहे हैं, वैसी ही कृपा अगर मातेश्वरी दुर्गा की हुई तो यह लड़की भी स्वस्थ प्रसन्न हो जायेगी । जहां तक खाने-पीने के बंदोवस्त का सवाल है आप लोग क्या चाहते हैं ?"

सत्यनारायण ने कहा "यही कि हम अपना खाना खुद बनायेंगे और उसका सारा खर्च आपको देना होगा ।"

"चलिए यह भी मान गया ।" मैंने कहा— "आप लोग होटल भी वदलना चाहते हैं ।"

"नाहीं भइया, हमहन के टूरिस्ट होटल पसंद है । वहां अपने हाथ से खाना-पीना बनाने का वंदोवस्त अन्ना करा देगा ।" जगादेव ने कहा ।

"ई अन्ना कौन है ?"

"टूरिस्ट होटल का पहरेदार ।"

"अच्छा, अब आप लोग अपने-अपने काम में लग जाइए । आज शाम को मैं ऐसा चूहा बनूंगा कि विल्ली के गले में घंटी बांधने का कार्य कर सकूं यानी इस अस्पताल के सबसे अधिक डरवाने वाले सर्जन डॉ. ए. पी. पांडेय से मिलूंगा।"

शाम के छः वजे होंगे । मैं अपने झोले में कुछ चीजें भरकर डॉ. ए. पी. पांडेय के फ्लैट पर पहुंचा । दरवाजा बंद था । मैंने कालवेल बजायी । एक तमिलियन किशोरी ने द्वार खोला, "क्या डॉक्टर साहब हैं?"

"वे घर में ही हैं, उन्होंने कहा है कि एक सज्जन धोती-कुर्ता पहने हुए आयेंगे। तुम उन्हें बैठाना । आप उनसे ऑफिस में मिल चुके हैं न ?"

"जी हां ।"

"तो सामने वाली कुर्सी पर बैठ जाइए, मैं उन्हें इत्तला करती हूं ।"

थोड़ी देर में पांडेय जी आये । वे चालीस-पैंतालीस से अधिक वय के नहीं लगे। चेहरे पर एक इस तरह की शांति थी जो प्रायः आत्मविश्वास से पैदा होती है ।

"कहिए डॉक्टर साहब !" आपके वारे में बी. एच. यू. के अस्पताल से या गैर परिचित लोगों की दर्जनों चिट्ठियां आ चुकी हैं । सबने एक बात जरूर लिखी है कि आप हिंदी के रचनाकारों की अग्रिम पंक्ति में खड़े हैं । मुझे बहुत खुशी हुई।"

"यह सब आपकी शालीनता है डा. पांडेय । मेरे जैसे मुदर्रिस और फटीचर लेखक के बारे में लोगों ने क्या-क्या लिखा है, मैं नहीं जानता । न तो उत्कंठा ही है कि उनकी प्रशंसा भरी पंक्तियों को देखूं, पर आज मैं आपके सम्मुख एक घोर

संकट में पड़ी लड़की के बाप की हैसियत से आया हूं ।"

"आप बी. एच. यू. की सारी रिपोर्टें लाये हैं ?" पांडेय ने पूछा ।

"लाया तो था सर, पर वह नेफ्रोलॉजी विभाग में रखी मंजु की फाइल में लगी है । ये हैं कुछ आई. वी. पी. के चित्र...।

सहसा पांडेय का चेहरा एकदम तमतमा गया, "माफ करियेगा । मुझे झूठे लोगों से सख्त नफरत है । आपके साथ जो आया था टीचर हरिश्चंद्र वह तो हरिश्चंद्र घाट के डोमों से भी निकृष्ट आदमी था । ऐसे लोगों को ठुकरा दिया कीजिए । जो सामने कुछ कहते हैं, अलग जाने पर कुछ और कहते हैं।"

मैं शांत रहा । शायद जैसा तार मेरे पास आया है, वैसा ही पांडेय जी के पास आया हो ।

"क्या सचमुच वह आपका लड़का है ?"

"नहीं, न तो मेरा लड़का, न तो गांव घर से जुड़ा कोई दायादी का व्यक्ति और न तो मेरा रिश्तेदार है । वह एक अहंवादी पागल है जो अपने को प्रेमचंद से भी बड़ा लेखक समझने का अहंकार ढो रहा है । उससे मेरा कोई संबंध नहीं है ।"

"मैं तभी पहचान गया कि यह एक नंबर का फ्रॉड है, जब उसने कहा कि वह आपका इकलौता पुत्र है । देखिए, डा. साहब, एक बात मैं स्पष्ट कर दूं आपको, क्योंकि रचनाकार भावुक होते हैं पर अपनी बीमार बेटी को रेनल फेल्योर से बचाने वाले बाप को भावुक नहीं होना चाहिए । इसमें आपका लाख-डेढ़ लाख खर्च होगा, पर इसकी कोई गारंटी नहीं है कि लड़की की बाडी कब रिजेक्ट कर देगी नयी किडनी को । यह सिर्फ लाइफ को प्रोलांग करने का तरीका है, इलाज नहीं । आपके यहां तो जो खर्च करना होगा, करेंगे ही पर लड़की की जिंदगी भर, यानी जब तक वह भगवत् कृपा से जीवित रहे तब तक प्रतिदिन बीस रुपये की दवा का इंतजाम करना होगा, उसकी बीमारी में कोई नयी उलझन न आये । अगर कोई साइड इफेक्ट हुआ तो पुन दवाओं को बढ़ाना होगा ।"

"जैन का भी तो ऑपरेशन आपने ही किया था सर, वह तो स्कूटर पर दिन भर दौड़ता हुआ दिखाई पड़ता है ।"

"जैन का सारा खर्च स्टेट बैंक ने दिया । उसका भी एक लाख से ऊपर लगा था । और ऑपरेशन के बाद डेली खाने वाली दवाओं का खर्च उसे बैंक देता है । आपके यहां प्रोफेसरों के दवा खर्च को रिइंवर्स करने का कोई फंड नहीं है ।"

"आपका कहना ठीक है डॉक्टर साहब" मैंने कहा—"पर नवंबर 1981 से फरवरी 1982 के अंत तक मैं तीस हजार फूंक चुका हूं । उसे मैंने इतनी आत्मशक्ति दी कि वह अपने संकट से संघर्ष करे । जब वह तमाम उपचारों के बीच कहती थी कि बाबूजी मैं बचूंगी नहीं । कहां से लायेंगे डेढ़ लाख । तब मैंने

उससे कहा था कि अपना मकान बेच दूंगा । अब क्या कहूं उससे ? यही कि इस रोग से बचने या बचाने की शक्ति आजतक की वैज्ञानिक चिकित्सा के पास विकसित नहीं हुई । अब उसे समझा-बुझाकर वाराणसी ले जाऊं तो प्रतिदिन तिल-तिल करके इसे मरते देखना होगा, मैने उसे जो शपथ दिलायी है कि 'विल पावर' से काम लो । उसने मेरे कहने से सब तरह के संकल्प लिये, अब उसे इस डर से कि मरना लाजिमी है, वापस ले जाऊं तो यह मेरे लिए असंभव है । मैं चिकित्सा के बीच उसे उठाकर वाराणसी नहीं ले जा सकता ।"

"आपको विल पावर पर इतना विश्वास है ?" डॉ. पांडेय ने पूछा ।

"ईश्वर पर विश्वास है कि नहीं यह तो नहीं जानता पर अगर ईश्वर पर विश्वास करने का अर्थ है बिना चिकित्सा के उसे घर लौटाना है तब कहूंगा कि मै ईश्वर में विश्वास नहीं करता और निकृष्टतम स्थिति के भीतर भी 'समथिंग' को चाहे आप उसे इच्छा-शक्ति कहें, अतिक्रमण करने वाली विराट् चेतना कहें, तो मै उसे नमस्कार करूंगा चाहे वह जो भी अर्थ-अनर्थ करे उसे सह लूंगा ।"

"क्या आपको डोनर मिल गया है ।"

मैं एक क्षण चुप रहा, "हां, मेरा छोटा भाई तैयार है किडनी देने को।"

"वह भी क्या आपके इकलौते बेटे जैसा ही फ्रॉड है या सचमुच का डोनर है?"

"आप जो समझें ।"

"मैने बनारस में शिक्षा पायी है डॉक्टर साहब, मै वहां के सब तरह के फ्रॉड लोगों के तौर-तरीके जानता हूं । आप अगर जिदवश सब कुछ फूंकने पर आमादा ही हैं तो मैं भी आपको अपना समर्थन दूंगा ।" काफी आयी । हम पीते रहे । मैने बैग से 'अलग-अलग वैतरणी' निकाली और उन्हें समर्पित करते हुए कहा, काशी के लोग आपके कथनानुसार सब तरह का फ्रॉड करते हैं तो उनकी प्रशंसा भरी चिट्ठियों का आप पर जो असर पड़े उसे मन से निकालकर परस्थ नहीं स्वस्थ होकर पढ़ें इसे ।" पांडेय जी मुस्कराये, "संस्कृति सभ्यता जाने बिना साहित्यकार बनना संभव नहीं । आप ने स्वयं को उदाहरण बना कर रख दिया ।"

मैं सीधे क्यू वन वेस्ट विंग के बेड नं. 9 के पास पहुंचा। वह रोती-रोती हांफने लगी थी । बगल वाली बेड नं. 10 पर उसे जाने की आज्ञा प्रमुख परिचारिका दे चुकी थी । उसने बहुत गुस्से में उस परिचारिका से कह दिया था कि मैं उस बेड पर किसी भी हालत में नहीं जाऊंगी ।

"क्या आप मंजुश्री के फादर हैं ?"

"हां ।"

"उसे समझाइए कि हम अपने कामों में किसी की दखल बर्दाश्त नहीं करते ।" हेड नर्स बोली ।

"हम भी आपकी ही तरह हैं मैडम । आपको बाथ रूम से सटे बेड नं. 10 के स्थान पर बेड नं. 9 को खाली कराने का कितना घूस मिला है ?

"आप मुझे गालियां दे रहे हैं मिस्टर !"

"गालियां नहीं सत्य वचन बोल रहा हूं सिस्टर । आपने बेड नं. 9 के ऊपर एक उद्धरण टांग रखा है बाइबिल का—

"ही शैल कवर विद हिज फीदर्स एंड अंडर हिज विंग्स शाल्ट दाउ ट्रस्ट"—साल्मस, 91/5" वह तुम्हें अपनी कोमल पाखों से ढक लेगा । उसके डैने तुम्हारी शरण बनेंगे । तुम उस पर विश्वास करो । क्या विश्वास करें । तुम बेड नं. 9 से हटाकर बेड नं. 10 पर इसलिए ले जा रही हो उसे कि हम हिंदी भाषी हैं। गंदा बेड हमारे लिए है । बाथरूम में ले जाने वाली मूत्र की बोतलें, गंदे कपड़े, कै-दस्त से भीगे पोंछन सब बेड नं.10 के बगल से गुजरेंगे । इसलिए मैं कह रहा हूं सिस्टर कि बाइबिल की ऋचाओं को उतार दो । हम यहां विवश होकर आये हैं । मंजुश्री का बाप अगर डेढ़ सौ रुपये प्रतिदिन के हिसाब से देता तो तुम एम वार्ड में सारी सुविधाएं देती । मरीज के गार्जियन या बाप को अहमियत देती । उसके अगल-बगल घूमने की होड़ लगती तुम लोगों में यानी नर्सों में । मैं बेड नं. 9 से उसे दस पर नहीं ले जाने दूंगा । यू आर बिहेविंग लाइक ऐन अनजस्ट टिरैनिकल लेडी । तुम अत्याचारी महिला जैसी बातें कर रही हो ।"

"आप मुझे गाली दे रहे हैं !"

"यह गाली नहीं सत्य है, क्रूस पर लटकने वाले को भी लोगों ने कहा था कि उसने कानून तोड़ा है । मैडम, तुम एक नर्स हो । तुम्हारे पास पानी का घड़ा है पर तुम हम प्यासों को पानी नहीं दोगी । तुम समारिया नारी हो । तुम्हारे पास जल है परंतु वह यहूदियों के लिए नहीं दोगी, यानी तुम हिंदी बोलने वालों को यहूदी ही बकोगी ।"

"मुझे बाइबिल मत सिखाइए, इस लड़की से कहिए कि बेड नं. 9 छोड़कर 10 पर आ जाय ।" वह गुस्से से अपने जूड़े में खुसे हुए सफेद गुलाब को हिलाते हुए बोली, "मेरे पास समय नहीं है जल्दी कीजिए ।" उसकी आवाज सुनकर बगल की नर्स और वार्ड के जमादार खड़े हो गये ।"

"मेरे पास भी आप जैसी अनकल्चर्ड महिला से बात करने का वक्त नहीं है । आप डा. जाकोव को आने दीजिए अगर वे कहेंगे तब हम बेड बदल देंगे।

"मैं हेड नर्स हूं, इससे डॉ. जाकोव का क्या संबंध ?" उसने गुस्से में पैर पटकते हुए तमाम सिस्टर्स से कहा कि इस लड़की को बेड नंब 10 पर उठाकर रखो ।

दो।"

"तुम औरत नहीं विच (कुतिया) हो। मैं अपने हाथों से तुम्हें रोक सकता हूं पर तब तुम कहोगी कि औरतों के साथ गलत आचरण हुआ।" मैंने बहुत ही जोर से कहा।

"डोंट शाउट" वह बोली।

"यू आर शाउटिंग, गलत काम इसलिए अच्छे नहीं मान लिये जायेंगे कि तुम यह सब बड़ी गंभीरता से कर रही हो।" तब तक डॉ. घोष, दूसरे वार्डों की सिस्टर्स यह तमाशा देखने के लिए कक्ष के बाहरी द्वार पर खड़े हो गये।

"निकल जाइए आप यहां से।" वह चिल्लायी

"हू इज शाउटिंग" मैंने हंसते हुए कहा, "डोंट ट्राइ इट अदरवाइज आइ विल स्टाप इट फिजिकली।" मंजु बेड पर बैठ गयी। "बाबूजी चलिए बनारस, यह जीता-जागता नरक है। हम गरीबों के लिए यह अस्पताल नहीं है। यहां उनके जूते चाटे जाते हैं जो मालदार हैं। चलिए।

"लाओ सिस्टर, बिल दो, वी वांट टू लीव दिस हेल।"

तभी डॉ. जाकोब और श्रीनिवास भी आ गये। डॉ. जाकोब ने तमिल में उस हेड नर्स से कुछ पूछा। दोनों में तीन मिनट तक बातें होती रहीं।

"प्रो. सिंह, आपको इन्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए था।"

"और डॉ. जाकोब, क्या इन्हें कहना चाहिए कि निकल जाओ यहां से। क्यों चिल्ला रहे हो ?"

"यह सब आपने कहा था सिस्टर ?"

सिस्टर चुप हो गई, "डोंट बिहेव लाइक ए फूल।"

"बैठो मंजुश्री, यह बेड तुम्हारे लिए है, तुम्हें नौ नंबर से कोई नहीं हटायेगा।"

"थैंक यू !" मंजु मुस्कराते हुए बोली, "टेल सिस्टर आल सो।"

मेरी पत्नी बरामदे में खड़ी थीं। वे सारा दृश्य तो देख रही थीं, पर समझ नहीं पा रही थीं कि क्या हो रहा है। जब जाकोब चले गये और नर्से बच गयी तो हेड नर्स ने कहा, "आयेम इक्सट्रीमली सारी।" (क्षमा कर दें)

"फारगेट इट।" मैंने भी कहा

तब से हेड नर्स प्रतिदिन गुलाब का एक फूल लाती रही मंजुश्री के केश में लगाने के लिए।

मैं एक क्षण के लिए कमरे से बाहर आया। सी. एं. सी. के तमाम पेड़ों पर अनगिनत कौवों को बैठे हुए देखा। यद्यपि इनकी टर्र-टर्र और कांव-कांव मुझे नापसंद थी, पर ये आधे से अधिक अस्पताल में पड़ी हुई गंदगी को रोज साफ करते

थे। जो कूड़ा-कचरा जूठन, चारों ओर से उस छोटे-छोटे आंगन में गिरती थी, उसे वे परस्पर लड़ते-झगड़ते साफ किया करते थे।

मैं थोड़ी देर इन्हें देखता रहा और पुन: मंजु की बेड के पास आ गया। अब वहां दूसरा दृश्य था। मंजु को बहुत तेज जाड़ा देकर बुखार आ गया था। और उसके ऊपर तीन कंबल डाल दिये गये थे। तभी डॉ. जाकोब आये। साथ में ब्लड निकालने का सामान लिये एक नर्स थी। बुखार की हालत में ब्लड निकाला गया।

"यह तो बहुत परेशान हो गयी है डॉ. जाकोब। रोज बुखार-रोज बुखार।"

"आज ब्लड कल्चर करा रहा हूं। देखें, बुखार का कारण क्या है।" दूसरे दिन शाम को रिपोर्ट आयी। ब्लड कल्चर से पता चला कि उसके खून में राजयक्ष्मा के किटाणु मिले हैं।

डॉ. जाकोब ने पूछा, "मंजुश्री तुम्हारे शरीर में कोई ग्लैंड तो नहीं न।"

"है यह, गर्दन के दाहिनी तरफ।"

जाकोब चले गये। तभी वार्ड का नौकर स्ट्रेचर लेकर आया। बुखार की हालत में उसे उठाकर स्ट्रेचर पर लिटाया गया। जाना सिर्फ कुछ गज था, यानी इमरजेंसी रूम तक। स्ट्रेचर देखकर मंजु भड़की और जब स्ट्रेचर इमरजेंसी रूम तक पहुंचा और उसे कमरे के बेड पर लिटाया गया तो वह चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगी।"

डॉ. जाकोब ने कहा, "हम उस ग्लैंड से खून लेंगे थोड़ा। तुम्हें कतई दर्द नहीं होगा।"

"आप लोग बायप्सी करने के लिए ले आये हैं और कहते हैं कि दुखेगा नहीं। कैसे नहीं दुखेगा। मैं नहीं कराऊंगी यह सब। वह बाबूजी-बाबूजी चिल्ला रही थी और मैं इमरजेंसी द्वार पर खड़ा सब सुन रहा था।"

डॉ. जाकोब ने गर्दन की ग्लैंड पर सुई लगा दी। "इधर देखो" उन्होंने उसकी गर्दन को मोड़ा और मुश्किल से एक मिनट हुआ होगा पूरी ग्लैंड निकालकर एक शीशी में डाल दी गयी। उस जगह पर टांके लगाकर पट्टी चिपका दी गई।

स्ट्रेचर पर लेटी हुई पुन: बेड नं. 9 के पास पहुंची। उसे उठाकर बेड पर लिटा दिया गया।

"क्यों, इतना घबरा क्यों रही थी?" मैंने पूछा।

"मैं सोचती थी कि ये सब गर्दन काटकर उस ग्लैंड का एक हिस्सा निकालेंगे जांच के लिए।" वह मुस्कराते हुए बोली।

दो दिन बाद उसकी दवाओं में एक और कड़वी दवा जुड़ गयी यानी/

एम्पीसीलिन के चार कैप्सूल । वह ऐसे ही ब्लडप्रेशर, बुखार की कई दवाएं लेती थी। यानी पूरा आमाशय एक तरह के अखाड़े में बदल गया था, जहां आपस में एक दवा दूसरे से लड़ रही थी । इन दवाओं की गर्मी को शांत करने के लिए आलूड्रक्स के तीन खुराकें सुबह, दोपहर और रात में चल ही रही थीं । एम्पीसीलिन के चार-चार कैप्सूल एक साथ रात वाली दवा में जुड़ गये और अक्सर वह साढ़े आठ बजे खाना खाते ही लाल रंग की कै करने लगी । वह लाली एम्पीसीलिन के लाल कैप्सूलों के कारण थी । कभी-कभी एकाध कैप्सूल कै के साथ निकल जाते ।

इस उल्टी को मेरी पत्नी रोज साफ करती । मैं साढ़े आठ बजे चला जाता वैसे निश्चित समय तो आठ ही था, जब नर्से बाहरी लोगों को वार्ड से चले जाने का आग्रह करती थीं । पर मेरे लिए आधे घंटे का वक्त बतौर मेहरबानी मिल गया था। मैं मंजु की निरंतर बिगड़ती हुई हालत से परेशान था । तपेदिक के कारण उसका किड्नी ट्रांसप्लांट तब तक के लिए स्थगित हो जायेगा जब तक ये कीटाणु दवा के इस्तेमाल से पूर्णतः नष्ट नहीं हो जाते, इसी 'कामप्लिकेशन' के बारे में डॉक्टर पांडेय ने कहा था । क्या करें । गया आपरेशन तीन महीने बाद और खर्च एक लाख से दो लाख के करीब । हम अधर में लटक गये ।

मैंने तीन केले लिये और बगल वाली दुकान से एक छोटा ग्लास दूध । कमरा नं. 417 में मैं अपने बिस्तर पर लेटा था । नींद नहीं आ रही थी ।

ही मेक्थ मी टु लाइ डाउन इन ग्रीन पास्चर्स ।
ही लीडेथ मी बिसाइड द स्टिल वाटर्स । 6/7/23/2

कहां है वह हरित घासों का मैदान । कहां हैं वे शांत जलाशय । मैं रात दो बजे तक नींद बुलाता रहा । मेरे जीवन में दूर्वा से आच्छादित चरागाह कहीं नहीं आये । कुछ तो इस कारण कि मैं विश्व की सबसे बड़ी शक्ति के सामने भी अपने को भेड़ मानने के लिए कभी तैयार नहीं हुआ ।

10

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राण नेत्रे
न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायु चिदानन्द रूप शिवोऽहं, शिवोऽहम्

मैं स्वयं शिव हूं । मैं उस महाज्वाला का स्फुलिंग हूं जो मुझे अपनी गोद में सुलाने के लिए उतनी ही उत्कंठित है जितना उसके लिए मैं ।

जिसकी आत्मा में कालकूट पीने वाला प्रदीप्त तेज है, वह न तो चरागाह ढूंढेगा न तो शांत जलाशय जहां ताप मिटाने के लिए सहस्रार पर गंगा अजस्र धारा में बरसती रहती है, शीतल चंद्रकला जलते माथे को सहलाती है, नाग की शीतल गुंजलक विष का उत्ताप पी जाती है, चारों ओर बर्फ ढकी कैलाश की पर्वत चोटियां पूरे वातावरण को वातानुकूलित करती हैं वहां एक क्षण की झपकी ही काफी है ।

"ओकरे खून से पता जलल कि तपेदिक ह" पत्नी ने कहा, "आज दिन भर रोअत रहल ।" मैं कुछ नहीं बोला । मैं स्वयं उसके स्वास्थ्य के इस नये मोड़ से परेशान था । डॉ. पांडेय ने कहा था कि अगर कोई काम्प्लीकेशन न हुआ तो अस्सी हजार तो निश्चित हैं । अब इस नये घुमाव के कारण हम एक ओर ऊंचे शैलशिखर और दूसरी ओर विराट् खड्ड के बीच घिर गये हैं । [illegible] पर नट कौशल दिखाते हुए कब तक चलेंगे । पत्नी के प्रश्न में [illegible] स्नेह और आकुलता मात्र नहीं इस छुआ-छूत के रोग से पैदा होने [illegible] व्याप्त था ।

मैं उनींदा था । सुबह सात बजे उठकर [illegible] । "बाबूजी।" वह सिसकती हुई बोली, "[illegible] गये हैं । आप नौ बजे चले गये । शाम को [illegible] है ।"

"यह सब किसने तेरे दिमाग में भर दिया ?" बेड के पास रखे हुए स्टूल पर बैठते हुए मैंने कहा, "मैं चौवन पार कर चुका हूं । क्रिकेट की भाषा में अगर कहो तो अपनी 'इनिंग' खेल चुका हूं । मुझे न तो मृत्यु से डर है न तपेदिक से आशंका । मैं शाम को इसलिए नहीं पहुंच सका क्योंकि डॉ. पांडेय ने बुलाया था । वे बातें ज्यादा महत्त्वपूर्ण थीं । मैं दो बार उनके यहां गया, पर वे मिल नहीं पाये । तीसरी बार रात आठ बजे मुलाकात हुई । उन्होंने तुम्हारे बारे में बहुत-सी बातें बतायीं । चूंकि साढ़े आठ बजे या नौ तक मैं उनके यहां बैठा रहा इसलिए रात में आने का कोई सवाल ही नहीं था ।"

"क्या बताया उन्होंने ।"

"ट्रांसप्लांट होने के पहले बीमार और डोनर के रक्त का क्रास, मैच और टीसू टाइपिंग बहुत जरूरी है । डॉ. पांडेय किसी तरह जगरदेव को डोनर मान लेंगे, पर तभी जब यह टेस्ट उसकी उपयोगिता सिद्ध कर दे । दक्षिण भारत में कोई भी ऐसी जगह नहीं है जहां इस तरह का टेस्ट होता है । अतः दोनों के रक्त सैंपल को लेकर हमें दिल्ली के आयुर्विज्ञान संस्थान के डॉ. मेहरा के पास जाना होगा । डॉ. पांडेय वाले ब्लाक में ही डॉ. जाकोव रहते हैं । मैं उनसे भी मिला । उन्होंने कहा कि अगर यह जांच हो जाये तो अच्छा है, मगर डॉ. मेहरा से अप्वाइंटमेंट ले पाना बड़ा मुश्किल है ।"

"तब ?"

"तब क्या । चूंकि दिल्ली में मेरा परिचित ऐसा व्यक्ति नहीं है, राजनीतिक या मंत्री स्तर का, इसलिए मैं अपनी साहित्यिक सर्किल के ही कई लोगों को अप्वाइंटमेंट दिलाने में सहायता देने के लिए लिख रहा हूं । नरेंद्र को दिल्ली भेज रहा हूं । वहां उन्हें कैसी सहायता मिलती है, वे क्या कर पाते हैं जब तक यह मालूम नहीं हो जाता यहां से ब्लड सैंपुल लेकर दिल्ली पहुंचना बेकार है क्योंकि जरा भी देर हुई तो रक्त क्लाट (जमना) कर जायेगा ।"

"भइया कब जा रहा है ?"

"आज रात में वह बारह या एक बजे रात वाली बस से मद्रास जायेगा । वहां से दिल्ली के लिए जिस भी ट्रेन में आरक्षण होगा, उसे पकड़कर वह परसों तक दिल्ली में होगा ।"

तभी एक दबंग किस्म की नर्स आयी । वही सफेद साड़ी, सफेद ब्लाउज़ और छाती पर नेम प्लेट, अमीना बेगम । वह थोड़ी मोटी लेकिन आकर्षक नर्स थी।

"मंजुश्री, मुझे आज तुम्हें नहलाने के लिए भेजा गया है ।" वह खांटी उर्दू में बोली, "कहीं जाना नहीं होगा । मैं तुम्हारे बेड के चारों ओर पर्दे इस तरह खींच दूंगी कि तुम उड़न खटोले में बंद हो जाओगी ।" वह खिलखिलाकर हंसी, "प्रो.

सिंह, मिहरबानी करके आप भी बाहर चले जाइए ।"

मंजु को हां-या ना कहने का मौका दिये बगैर उन्होंने चारों तरफ के पतले तारों पर लटके पर्दे इस तरह गिरा दिये कि वह सचमुच उड़न खटोले में अकेली रह गयी ।

> मैं यहां नहीं हूं / मैं दूर बहुत दूर जहां गुम हूं /
> वह केवल / अपना ही केवल / मेरा अपना ही
> अपनापन है /
> और जो कुछ है, सब धोखा है ।"
>
> — शमशेर

मैं अचानक रहमान मियां की दुकान की ओर मुड़ गया ।

"आइए डॉ. साहब, चेहरा क्यों उदास है ?"

"कोई ऐसी बात तो नहीं है रहमान मियां । थोड़ी दिक्कतें हैं, इस चढ़ाव-उतार वाले समदर में डोंगी तो हिलेगी । यह आप पर है कि डोंगी और आप बचते हैं या समदरी तूफान में सब कुछ समा जाता है ।"

"छोड़िए, सब खुदा पर छोड़िए ।"

"ओ हयात, डॉ. साहब को कल रात में आये काले रंग वाले अंगूरों का थोड़ा रस चलाओ । एक गिलास जूस बनाओ, उसमें नमक और जीरा भी डालना । यह हल्का-सा असर करता है गले पर ।" लीजिए एक गीत सुनिए तब तक—"

"किसका गाया हुआ गीत है ?"

"चित्रा जगजीत का नाम तो सुना होगा आपने ?"

"नाम तो सुना है पर मैं फिदाई नहीं हूं उनका ।"

कैसेट बजने लगा —

> 'अजनबी शहर में अजनबी रास्ते मेरी तन्हाई पर मुस्कुराते रहे
> मैं बहुत दूर तक यूं ही चलता रहा, तुम बहुत देर तक याद आते रहे
> ज़ख्म जब भी कोई ज़ेहनो-दिल पर लगा ज़िंदगी की तरफ एक दरीचा खुला
> हम भी गोया किसी साज के तार हैं, चोट खाते रहे गुनगुनाते रहे ।'

गांव हाथ से निकल ही चुका था । सन् 47 से 87 यानी चालीस वर्ष को [illegible] इस जिंदगी से तो बचा ही क्या । मैं अठारह-बीस साल तक जिस [illegible] जिया हूं, वह गंदा है, वहां नाबदान में पिलुवे बिलबिलाते हैं, पर [illegible] पहुंचता हूं, मुझे पूरा गांव जंगली हवाओं की तरह सरसराहट [illegible] पिछले छः महीने में गांव में क्या कुछ हुआ है ये हवाएं मेरे

है । यह सब ठीक है । पर कोई ठिकाना तो चाहिए । सैंतालीस में इंटर में आया तो कंपनी बाग से ज्यादा ऋषि पत्तन खीचता रहा । मैं अपनी ही गंध से व्याकुल किसी देवता को खोजता फिरा जो कहीं होता नहीं । मैं किन तकलीफों के बीच गुजरा हूं उसका उल्लेख करूं तो मेरे दोस्त मुझे झूठा कहेंगे, क्योंकि रचना के स्तर पर मेरी यथार्थवादी, घोर यथार्थवादी जन से जुड़ी चीजों को कोई इसलिए ठुकराने की हिम्मत नहीं कर सकता कि ये कृतियां वायवी हैं, यूटोपिया हैं, रूमानी है । बहुत ढेर सारा प्यार देने वाले मेरे पाठक फतवे पर लात मार देंगे । हजारों पाठक मेरी रचनाओं के माध्यम से यह भली-भांति जान चुके हैं कि मैं कौन हूं । मैं विकाऊ माल नहीं हूं, सहज स्नेह और श्रद्धा से भरे वे पाठक मेरे अंतर्मन में उपस्थित हैं ।

नरेंद्र को दिल्ली गये एक सप्ताह बीते, पर कोई खबर नहीं थी । क्या किया उसने । मेरे साहित्यकार बंधुओं ने उसकी सहायता की या नहीं । आठवें रोज तार आया । 'कम विद द ब्लड इंफार्म द फ्लाइट नंबर' इस तार ने बहुत उलझा दिया। किस पते पर सम्पर्क करूं उससे । मैंने नेशनल को एक तार दिया । शायद वह उनके यहां सूचनाएं जानने के लिए गया हो । मैं ब्लड लेकर कहां जाऊं । मैंने श्रीकांत से कहा कि तुम इस तार को लेकर फोर्ट वाले डाकखाने में जाओ और जैसे भी हो पता लगाओ कि तार भेजने वाले का पता क्या है । तीन दिन की दौड़-धूप से पता चला कि वह पद्मधर त्रिपाठी के यहां ठहरा है । तभी शाम वाली डाक से मंजु के नाम एक पत्र आया ।

'प्रिय मंजु, सदा प्रसन्न रहो,

नई-दिल्ली

दिनांक 19-3-82

मैं यह पत्र बड़ी ही बोरियत की स्थिति में लिख रहा हूं । मैंने यहां अपना कार्य (प्रथम चरण) समाप्त कर लिया है । मैं स्वयं बिना किसी सिफारिश के डॉ. मेहरा से मिला और तुम्हारे और शंभू सिंह के ब्लड टिशू मैचिंग के लिए शनिवार और रविवार को छोड़ कोई भी दिन स्वीकृत करवा लिया है । एक तार बाबूजी को एनेक्से के पते पर ब्लड लेकर आने के लिए दे दिया है और साकेत नामक एक विशाल और भव्य लेकिन सुनसान कालोनी में पड़ा बोर हो रहा हूं । दिल्ली इतनी उदास कभी नहीं लगी ।'

उसके दूसरे पत्र में स्पष्ट लिखा था कि आपकी साहित्यिक सर्किल ने कोई नोटिस भी नहीं ली । मैं सब जगह गया । सबने कहा कि आयुर्विज्ञान संस्थान मे

कोई परिचित नहीं है हमारा । किसी ने टेलीफोन तक नहीं किया ।

मैं जानता हूं, दिल्ली देश की राजधानी है । वहां लोग दूर-दूर अपने-अपने नीड़ों में बसते है, किंतु मैंने गलत आशा कर रखी थी कि दिनमान, सारिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान के सम्पादक इतना प्रभाव तो रखते ही होंगे कि मेहरा से मिलने का समय दिला दें । अगर डॉ. जाकोब ने मेहरा के स्वभाव पर टिप्पणी न की होती तो नरेंद्र सीधे मेहरा को अप्रोच करता जैसा उसने किया । जहां रक्त के रिश्ते झूठे हो गये है, वहा किसी साहित्यकार या संपादक से यह आशा करना ही व्यर्थ था कि वे एक साहित्यकार की बेटी को अपनी बेटी समझकर कुछ न कुछ करेंगे ।

मैं उसी क्षण ललित विहार के शर्मा से कहा कि कल या परसों मुझे दिल्ली जाना है । मेरे लिए प्लेन का टिकट मंगा दीजिए । शाम को जब उनका एजेंट आया तो बोला तीन दिन तक जगह नहीं मिलेगी । मैंने चौथे रोज के लिए टिकट ले लिया है ।" रात को मैंने श्रीकांत को बुलाया । पुन जाओ फोर्ट डाकखाने और अरजेंट और एक्सप्रेस तार दो नरेंद्र को कि मैं ब्लड लेकर 25 को प्रातःकालीन फ्लाइट से दिल्ली आ रहा हूं ।" प्रातःकाल जब मंजु की बेड के पास पहुंचा तो वह बोली, "आप इतना अधिक ताप मत ढोइये बाबूजी, कभी आपने ..."

"बोलो-बोलो, क्या कह रही थी ?"

"आप बहुत दुबले हो गये हैं ।"

"तो इसमें परेशानी की बात क्या है । डॉ. सोमानी कहते हैं कि पंद्रह किलो वजन घटाना चाहिए । यह सब अपने आप हो रहा है । मेरी सायटिका अपने आप ठीक हो गयी ।

मैने डॉ. जाकोब से कहा कि "डॉ. मेहरा ने टीशू टाइपिंग के लिए 25 मार्च की तिथि दी है । मुझे आज ही रात में मद्रास पहुंचना और दिल्ली वाली फ्लाइट से जाना है "

"आप सीनू ऐजेंसी से एक आइस बॉक्स ले लीजिए । आप डेढ़ बजे रात वाली बस सर्विस पकड़िए, हम ठीक रात एक बजकर पंद्रह मिनट पर नेफ्रोलाजी के बइठके में आयेंगे, वहां मंजुश्री और डोनर शंभू सिंह के साथ उपस्थित रहिए।"

हमलोग यानी श्रीकांत, सत्यनारायण और जगरदेव एक साथ ठीक एक बजकर पंद्रह मिनट पर नेफ्रोलॉजी के बइठके में पहुंचे, वहां जाकोब का चैंबर खुला था, ट्यूबलाइट जल रही थी । इस तरह समय की पाबंदी मैंने कभी भी नहीं देखी । अगर इस तरह समयानुसार कंम्प्यूटर की तरह कार्य हो तो आधी दिक्कतें अपने आप खतम हो जायेंगी । डॉ. श्रीनिवास ने सुई लगाकर [illegible]काला और

पेशेंट और डोनर के दो-दो शीशियों में खून को लेबुल लगाकर उसी आइस-बाक्स में रख दिया ।

"आप कब तक लौटियेगा बाबूजी ।" भरभराये गले से उसने पूछा ।

"मैं बहुत जल्दी आऊंगा बेटे, मुझे नरेंद्र के हाथ डायलसिस की फीस भेजनी है । छः हजार रुपये चाहिए तुरंत । वह तो कल परसों आ जायेगा, पर मुझे दिल्ली से वाराणसी जाकर रुपयों का इंतजाम करना होगा ।"

"आप मुझे क्षमा कर दीजिए ।"

"क्यों, तूने गल्ती क्या की है ?"

"वही जो मैंने तपेदिक से डरने का आप पर आरोप किया था ।"

"तू निश्चिंत रह, मेरे लिए अब इस तरह के जुमले कोई अर्थ नहीं रखते । मैंने पिछले चार महीनों से लगातार तरह-तरह के दोषारोपण सुने हैं । कभी कोई नरेंद्र के प्रबंध के लिए दोषी ठहराता है, कभी डोनर अपने खाने-पीने के प्रबंध पर मुझसे शिकायत भेजता है । कभी सत्यनारायण आता है तो कभी जगरदेव । सबको अपने मनोनुकूल खाना चाहिए । पूड़ी-रबड़ी या मुर्गा-खस्सी का मांस चाहिए । मैं इन्हें यहां से हटा भी नहीं सकता क्योंकि उस हालत में तुम्हारा क्या होगा, सोचकर डर जाता हूं ।" मैंने उसके गाल पर थपकी दी । "बहुत जल्दी लौटूंगा बेटे ।"

पालम पर जब मैं ब्लड के सैंपुल लिये उतरा तो प्रतीक्षा हाल में नरेंद्र और पद्मधर के पुत्र को देखा । हम लोग बाहर आये । आटो रिक्शाओं की भीड़ थी । सब अपनी-अपनी बारी का इंतजार कर रहे थे । बहरहाल, एक आटोरिक्शा पकड़कर हम साकेत, पुष्प विहार की ओर चल पड़े ।

"बाबूजी यह है सामने अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान । आप ब्लड मुझे दे दीजिए । रोको भई, मुझे उतरना है यहां ।" नरेंद्र ने कहा ।

उसने आइस-बाक्स संभाला और हम दो यात्रियों को लिये हुए वह आटोरिक्शा पद्मधर के निवास के पास रुक गया ।

"कितने हुए सरदार जी ।"

"चौवालीस रुपये" उन्होंने मीटर देखर बताया ।

"इतना ?"

"हां जी, इसमें लौटने का किराया भी तो जुड़ा है ।"

पद्मधर हमेशा की तरह बड़ी गर्मजोशी के साथ मिले, पर उन्हें ऐसी बीमारी और उसकी चिकित्सा की जानकारी नहीं थी, जब मैंने सुरसा के आकार की समस्याएं समझायीं तो उनका चेहरा उदास हो गया । बहुत देर तक मंजु के बारे में बातें होती रहीं । मैंने स्नान और भोजन किया । हम पुष्प विहार से दरियागंज जाने वाली बस पर बैठे और पैंतालीस मिनट के बाद उस चौराहे पर उतरे जहां से

हमें 'नेशनल पब्लिशिंग हाउस' जाना था ।

मैं तेईस, दरियागंज के पते पर चल पड़ा । उस समय दोपहर के साढ़े बारह बजे थे । मैं सीधे क. ला मलिक के पास पहुंचा । नमस्कार प्रणाम के बाद उन्होंने नौकर से चाय मगायी और हाल-चाल पूछा । मैंने अक्टूबर 81 से मार्च 82 तक की स्थितियां बतायीं । मैंने उनसे कहा कि आप मेरी रायल्टी का हिसाब करा दीजिए ।"

"वह तो हो चुकी है डॉ. साहब, हफ्ते भर के अंदर वह आपके पते पर वाराणसी पहुंच गयी होती ।" "रायल्टी के बारे में एकदम सटीक रकम बता पाना तो मुश्किल है, पर तीन साढ़े-तीन हजार के करीब थी । वहीं दिग्गज साहित्यकार *श्री चंद्रभान रावत से मुलाकात हो गयी ।* जिस प्रकार विजयपाल सिंह के पुत्र अशोक को उन्होंने सम्मानित प्राध्यापक की कुर्सी दी । आदि-आदि, उन्होंने किस-किस ढंग से किसे काटा, खूब विस्तार से बता रहे थे । मलिक साहब से काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी-विभाग की नियुक्तियों से क्या वास्ता ? वे मुझे सुना रहे थे । सब कुछ । मैं जानता हूं जहां दरिद्रता ज्यादा होती है, वहां सूप भ. बहुत दूर तक बजता रहता है ।

मैंने आपसे पहले ही कह दिया है कि उल्लुओं की सिर्फ एक जात होती है । अगर मांसखोर हुआ तो आपको नोचेगा, अगर शाकाहारी हुआ तो आपको मुवा-मुवा करके रेंगा यानी आपकी मौत देखने की ख्वाहिश करेगा - - - - मुझे उस वक्त हिंदी विभाग में क्या हो रहा है, यह जानने की एक सेकेंड भी फुरसत नहीं थी । साढ़े तीन हजार का कैश मलिक साहब ने बढ़ाया । मैंने बिना गिने उसे रख लिया । समस्या बाकी दो हजार की थी । मैं चारों तरफ ढूंढ़ता रहा, पर ढाई हजार पाने की आशा की ही तरह दाता का पता भी गायब था ।

मुझे तो कम से कम साढ़े पांच हजार डायलसिस के बिल के पेमेंट के लिए चाहिए था । क्या तीन महीनों में मेरे एकाउंट में ढाई हजार भी नहीं बचे होंगे । मैंने एक चेक बनाया और उसमें ढाई हजार की राशि भरकर मलिक साहब को दी। मैंने कहा अगर दिल्ली में मेरा कोई विश्वसनीय मित्र हो तो यह चेक उसे देकर मेरे लिए ढाई हजार का प्रबंध कराइए । अगर यह व्यवस्था नहीं होती तो मुझे शास्त्री नहीं छोड़ेगा । वह पहले से ही रुष्ट है । मेरी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए ये रुपये हरहाल में 29 मार्च तक भेजने ही होंगे ।"

"आप उस व्यक्ति के बारे में तो बताइए कुछ ।"

मैं कुछ नहीं बोला । मलिक साहब ने मेरे चेक को फाड़कर फेंक दिया । उन्होंने दिल्ली में भाग-दौड़ का मौका न देकर मेरी हैसियत का अहसास करा दिया। उन्होंने सेल्फ लिखकर ढाई हजार और मंगाये और मेरी कृतज्ञता भरी आंखों में झांकते हुए कहा, "डॉ. साहब, ऐसी घड़ियां हमारा टेस्ट लेने आती हैं,

परेशान न होइए ।"

मैने छह हजार रुपये नरेंद्र को दिये । कहा, "अगर उन्तीस मार्च के पहले यह डायलसिस फीस न जमा हुई तो मैं बेल्लौर में मुंह नहीं दिखाऊंगा । तुम कल जाकर किसी तेज गति से चलने वाली ट्रेन में मद्रास तक का आरक्षण करा लो ।"

उसने तमिलनाडु एक्सप्रेस में शयनयान का एक स्लीपर आरक्षित करा लिया । हम जब शाम को बैठे तो नरेंद्र आया, "बाबूजी, डॉ. मेहरा नहीं थे । उनके पी.ए. ने कहा कि रिपोर्ट तो तैयार है पर उनकी गैर हाजिरी में नहीं दी जा सकती।"

"तुम्हारा रिजर्वेशन परसों के लिए हुआ है । रिपोर्ट कल ले आना ।" मैंने कहा।

मेहरा की रिपोर्ट ने मन उदास कर दिया । टीसू मैचिंग केवल पचास प्रतिशत थी । उन्होने लिखा था या तो इससे बेहतर डोनर खोजिये अगर उपलब्ध नहीं होता तो इसी से काम चलाइए ।" पद्मधर और मैं दोनों गंभीर हो गये।

"यह क्या चीज होती है, भाई साहब ।" पद्मधर ने पूछा

"किडनी देने वाले दाता और किडनी लगवाने वाले मरीज के रक्त टीशुओं का अनुपात अगर साठ से ऊपर हो तो ठीक माना जाता है ।"

बहरहाल, उस रिपोर्ट को बार-बार पढ़ने से कुछ हाथ लगने वाला नहीं था । जो सत्य है वह सामने है, इसकी सफलता-असफलता भी सामने आयेगी।

दूसरे दिन योजनानुसार हम श्रीकांत वर्मा के नार्थ ऐवेन्यू वाले बंगले पर गये। मैंने घंटी बजायी तो एक लड़का बाहर आया, "किसे खोज रहे हैं ?"

"श्रीकांत वर्मा को ।"

"क्या नाम है आपका ?"

"सुनो, ज्यादा घनिष्टता के प्रमाण ढूंढ़ने की जरूरत नहीं है । उनसे कहो कि शिवप्रसाद नामक एक व्यक्ति बाहर इंतजार कर रहा है।"

दरवाजा खुला, श्रीकांत खुद आये । मैं और पद्मधर उनके ड्राइंग रूम में बैठ गये। वे भीतर गये और तीन-चार मिनट के बाद आये, "क्या चलेगा शिवप्रसाद जी ?"

"कुछ भी । अब विकल्प चुनना बहुत आसान काम नहीं है । श्रीकांत जी, खासकर मेरे जैसे पराधीन को तो यह सोचना भी नहीं चाहिए । आप कुछ गरम, कुछ ठंडा जो पिलाना चाहते हैं, पिला दीजिये ।

"आप इतने उखड़े-उखड़े क्यों हैं ? आपका चेहरा भी मुर्झाया हुआ है, सब कुशल मंगल तो है ?"

"अगर कुशल मंगल होता तो मैं नार्थ ऐवेन्यू आता ही नहीं, इसके पहले कभी

मिला आपसे ?"

"नहीं तो ।" आपको बतौर एक संवेदनशील कृतिकार के नाते भांप लेना चाहिए था । राजसत्ता, नौकरशाही और सीढ़ी दर सीढ़ियों की मीनार पर चढ़ना तो दूर, मैंने देखा भी नहीं । "घाटियां" गूंजती हैं नाटक को उस जमाने में यानी बासठ में नेहरू को नहीं इन्दिरा गांधी को समर्पित किया । इसके एवज में सत्ता के निकट होने की कोशिश करता तो भंजाता । उन्हें अपने को निकटस्थ कहकर कुछ याचनाएं करता । सन् 64 में नेहरू की मृत्यु पर मैंने 'अंधेरी रात का गुलाब' शीर्षक रिपोर्ताज या संस्मरण जो कहिए, लिखा और वह कई विश्वविद्यालयों की बी.ए.एम.ए. कक्षाओं में पढ़ाया जाता है । मैंने दूर से उस आदमी को देखा था पर डूबकर उस पर लिखा । मैंने कभी पुरस्कार या पारितोषिक के लिए न लिखा, न लिखूंगा । मैं चारण नहीं हूं ।"

"बात क्या है पद्मधर जी" श्रीकांत ने हंसते हुए कहा—" शिवप्रसाद जी मुझसे बहुत नाराज हैं शायद ।" पद्मधर को जितना मालूम था, कह दिया ।

"आप कोई आवेदन पत्र लाये हैं ?"

मैंने हैंड बैग खोलकर इन्दिरा गांधी के नाम लिखा आवेदन पत्र दे दिया । मैंने कहा, "श्रीकांत जी रैनल फ्ल्योर कोई मामूली संकट नहीं होता । मैं तीस हजार के ऊपर खर्च कर चुका हूं । यह भी जानता हूं कि बंगाल या बांगलादेश के, सीलोन और तमिलनाडु के, उडीसा और महाराष्ट्र से कई बीमार डायलसिस के दौर से गुजर रहे हैं, उन्हें किडनी ट्रांसप्लांट के लिये पचास-पचास हजार की सरकारी मदद मिली है । एक हम हैं कि हिंदी क्षेत्र में जन्म लेने के कारण उपेक्षित और तिरस्कृत होकर प्रधानमंत्री के यहां याचना करने आये हैं ।"

"आप अभी रुकेंगे या जाने की योजना बना चुके हैं ।" श्रीकांत वर्मा ने पूछा ।

"आप जैसा कहें, अगर कोई खास बात पूछनी या बतानी हो तो नेशनल में फोन कर दीजिएगा ।"

चाय-पान करके हम इधर-उधर टहलते रहे ।

दोपहर को मैं नेशनल पहुंचा । सुरेंद्र मलिक को सारी बातें मालूम हो चुकी थीं । उन्होंने बहुत धीरज बधाया । मैं खूब अच्छी तरह जानता हू कि धीरज बंधाने के लिए प्रयुक्त शब्दों का मोल क्या होता है ।

"एक आरक्षण करा दीजिए सुरेंद्र जी, कल की किसी भी ट्रेन में जो वाराणसी में रुकती हो ।"

मैं उठा और राजेंद्र यादव के अक्षर प्रकाशन स्थित कार्यालय में पहुंचा, "कहो मित्र, तबीयत तो ठीक है ।"

परेशान न होइए ।"

मैंने छह हजार रुपये नरेंद्र को दिये । कहा, "अगर उन्तीस मार्च के पहले यह डायलसिस फीस न जमा हुई तो मैं बेल्लौर में मुंह नहीं दिखाऊंगा । तुम कल जाकर किसी तेज गति से चलने वाली ट्रेन में मद्रास तक का आरक्षण करा लो ।"

उसने तमिलनाडु एक्सप्रेस में शयनयान का एक स्लीपर आरक्षित करा लिया । हम जब शाम को बैठे तो नरेंद्र आया, "बाबूजी, डॉ. मेहरा नहीं थे । उनके पी.ए. ने कहा कि रिपोर्ट तो तैयार है पर उनकी गैर हाजिरी में नहीं दी जा सकती।"

"तुम्हारा रिजर्वेशन परसों के लिए हुआ है । रिपोर्ट कल ले आना ।" मैंने कहा।

मेहरा की रिपोर्ट ने मन उदास कर दिया । टीसू मैचिंग केवल पचास प्रतिशत थी । उन्होंने लिखा था या तो इससे बेहतर डोनर खोजिये अगर उपलब्ध नहीं होता तो इसी से काम चलाइए ।" पद्मधर और मैं दोनों गंभीर हो गये।

"यह क्या चीज होती है, भाई साहब ।" पद्मधर ने पूछा

"किडनी देने वाले दाता और किडनी लगवाने वाले मरीज के रक्त टीशुओं का अनुपात अगर साठ से ऊपर हो तो ठीक माना जाता है ।"

बहरहाल, उस रिपोर्ट को बार-बार पढ़ने से कुछ हाथ लगने वाला नहीं था । जो सत्य है वह सामने है, इसकी सफलता-असफलता भी सामने आयेगी।

दूसरे दिन योजनानुसार हम श्रीकांत वर्मा के नार्थ ऐवेन्यू वाले बंगले पर गये। मैंने घंटी बजायी तो एक लड़का बाहर आया, "किसे खोज रहे हैं ?"

"श्रीकांत वर्मा को ।"

"क्या नाम है आपका ?"

"सुनो, ज्यादा घनिष्टता के प्रमाण ढूंढ़ने की जरूरत नहीं है । उनसे कहो कि शिवप्रसाद नामक एक व्यक्ति बाहर इंतजार कर रहा है।"

दरवाजा खुला, श्रीकांत खुद आये । मैं और पद्मधर उनके ड्राइंग रूम [illegible] गये। वे भीतर गये और तीन-चार मिनट के बाद आये, "क्या चलेगा [illegible] जी?"

"कुछ भी । अब विकल्प चुनना बहुत आसान काम नहीं है । [illegible] खासकर मेरे जैसे पराधीन को तो यह सोचना भी नहीं चाहिए । आ[illegible] कुछ ठंडा जो पिलाना चाहते हैं, पिला दीजिये ।

"आप इतने उखड़े-उखड़े क्यो हैं ? आपका चेहरा भी [illegible] कुशल मंगल तो है ?"

"अगर कुशल मंगल होता तो मैं नार्थ ऐवेन्यू आता ही नहीं,

मिला आपसे ?"

"नहीं तो ।" आपको बतौर एक संवेदनशील कृतिकार के नाते भाप लेना चाहिए था । राजसत्ता, नौकरशाही और सीढी दर सीढ़ियों की मीनार पर चढ़ना तो दूर, मैंने देखा भी नहीं । "घाटियां" गूंजती है नाटक को उस जमाने में यानी बासठ में नेहरू को नहीं इन्दिरा गांधी को समर्पित किया । इसके एवज में सत्ता के निकट होने की कोशिश करता तो भंजाता । उन्हें अपने को निकटस्थ कहकर कुछ याचनाएं करता । सन् 64 में नेहरू की मृत्यु पर मैंने 'अंधेरी रात का गुलाब' शीर्षक रिपोर्ताज या संस्मरण जो कहिए, लिखा और वह कई विश्वविद्यालयों की बी.ए.एम.ए. कक्षाओं में पढ़ाया जाता है । मैंने दूर से उस आदमी को देखा था पर डूबकर उस पर लिखा । मैंने कभी पुरस्कार या पारितोषिक के लिए न लिखा, न लिखूंगा । मैं चारण नहीं हूं ।"

"बात क्या है पद्मधर जी" श्रीकांत ने हंसते हुए कहा—" शिवप्रसाद जी मुझसे बहुत नाराज हैं शायद ।" पद्मधर को जितना मालूम था, कह दिया ।

"आप कोई आवेदन पत्र लायें है ?"

मैंने हैंड बैग खोलकर इन्दिरा गांधी के नाम लिखा आवेदन पत्र दे दिया । मैंने कहा, "श्रीकांत जी रेनल फ्ल्योर कोई मामूली संकट नहीं होता । मैं तीस हजार के ऊपर खर्च कर चुका हूं । यह भी जानता हूं कि बंगाल या बांगलादेश के, सीलोन और तमिलनाडु के, उड़ीसा और महाराष्ट्र से कई बीमार डायलसिस के दौर से गुजर रहे हैं, उन्हें किडनी ट्रांसप्लांट के लिये पचास-पचास हजार की सरकारी मदद मिली है । एक हम है कि हिंदी क्षेत्र में जन्म लेने के कारण उपेक्षित और तिरस्कृत होकर प्रधानमंत्री के यहां याचना करने आये हैं ।"

"आप अभी रुकेंगे या जाने की योजना बना चुके है ।" श्रीकांत वर्मा ने पूछा ।

"आप जैसा कहें, अगर कोई खास बात पूछनी या बतानी हो तो नेशनल में फोन कर दीजिएगा ।"

चाय-पान करके हम इधर-उधर टहलते रहे ।

दोपहर को मैं नेशनल पहुंचा । सुरेंद्र मलिक को सारी बातें मालूम हो चुकी थीं । उन्होंने बहुत धीरज बधाया । मैं खूब अच्छी तरह जानता हूं कि धीरज बंधाने के लिए प्रयुक्त शब्दों का मोल क्या होता है ।

"एक आरक्षण करा दीजिए सुरेंद्र जी, कल की किसी भी ट्रेन में जो वाराणसी में रुकती हो ।"

मैं उठा और राजेंद्र यादव के अक्षर प्रकाशन स्थित कार्यालय में पहुंचा, "कहो मित्र, तबीयत तो ठीक है ।"

"तबीयत को क्या हुआ है । सब ठीक है । बोलो क्या हाल-चाल हैं तुम्हारे । मन्नू जी ठीक-ठाक हैं ।"

मैंने बहुत आग्रह करने पर मंजु की बीमारी का विस्तृत वर्णन राजेंद्र को सुना दिया । राजेंद्र यादव या तो स्थितप्रज्ञ हैं या तो पहले नं. के किल्विष धूर्त । मैं उनसे मिलने इसलिए नहीं गया था कि वे मुझसे सहानुभूति दिखायेंगे या सहायता करेंगे । महज दस-पंद्रह मिनट तक दिल्ली के साहित्यिक वातावरण का हाल-चाल जानने गया था । सन् 1976 से अस्सी तक सायटिका से परेशान रहा । उठने-बैठने में भी दर्द होता था, लंगड़ाते हुए सीढ़ियां चढ़ता था, अगर पढ़ाते-लिखाने में फिसड्डी होता तो परोक्ष में लड़के लंगड़ा भी कहते, शायद कहा भी हो उन्होंने । पर मुझे इन सब तुच्छ बातों को जानने या सुनने में कोई दिलचस्पी नहीं थी । मैं किसी से मिलने नहीं गया । वाराणसी के लिए जाने वाली ट्रेन में आरक्षण हुआ या नहीं । सुरेंद्र मलिक ने आरक्षित शायिका का टिकट दिया ।

मैं जब 1986 में बैठा सोचता हूं कि मेरे दुर्दिन में किसने सहानुभूति दिखायी, किसने धीरज बंधाया तो बड़े कड़वे स्वाद से मुंह भर आता है ।

राजेंद्र यादव ने जब हंस का कार्यभार संभाला तो एक पत्र लिखा 20 मई 86 को, "बहुत दिनों से आपने भी कोई कहानी नहीं लिखी या कम से कम मेरे देखने में नहीं आयी । आपकी जवानी की नयी रचना जरूरी है ।"

मैं तो प्रकृति के विरुद्ध संघर्ष कर रहा था राजेंद्र । तुमने अलग पत्र में लिखा है कि क्या सचमुच सन्यास ले लिया । हां, तुम्हारे अर्थों में मैंने सन्यास ले लिया । में हजारों लेखक हैं । दिल्ली में भी । अपनी मार्च 82 की यात्रा के समय मैं सिर्फ दो साहित्यकारों से मिला । श्रीकांत वर्मा से पूर्णतः स्वार्थ के चलते, पर मैं तुमसे इसलिए मिला कि तुम साहित्य और संघर्ष का रिश्ता जानते होंगे । हां, मित्र। मैंने सन्यास ले लिया । पर एक सेकेंड रुको । क्या तुम पर भी कोई लंबी यातना का पर्दा पड़ा रहा । क्या तुमने डेढ़ लाख जुटाने के लिए पागल हिरने की तरह लगातार दौड़ लगायी । खैर जाने दो, अपने गरेबान में झांककर देखो— 1970 से 1985 तक क्या लिखा तुमने जिसकी नोटिस ली गयी हो, तुम्हारे दिमाग में भी शायद वे घुन लग गये हैं जो तुम्हारी ज़मीर को छलनी कर चुके हैं । तुम लेखक नहीं, काफ्का के शब्दों में कहूं तो 'तिलचट्टा' हो । मृत्युशैया पर पड़ी एक लड़की को कोई अहमियत नहीं देते । तुमने शायद मन्नू से बताये भी न होंगे कि मैं यहां आया था, सिर्फ तुमसे मिलने । मैंने लड़की वाले प्रसंग को कभी प्रचारित नहीं किया, क्योंकि तब तुम्हें उस बंगालिन महिला की याद आ जाती जो मरी हुई बच्ची को सीने से चिपकाये, उसके गंगाप्रवाह के नाम पर भीख मांगती थी ।

प्रिय मंजु

127/11 पुष्प विहार
साकेत, दिल्ली-17
दिनांक 26 3 82

यहां का सारा काम हो गया । श्रीकांत वर्मा ने आश्वासन दिया है कि यथासंभव प्रधानमंत्री से सहायता देने की बात करेंगे । यहां आकर लगा कि हम लोगों की छोटी दुनियां बहुत अच्छी थी । जितनी बडी दुनिया है उतनी ही आपाधापी है, तनाव है, संघर्ष है, खींचातानी है । मैं अपनी शक्ति भर कुछ उठा नहीं रखूंगा । तुम्हारी चिकित्सा पर जो खर्च होने वाला है, उसका प्रबंध करने में मैं अकेले सक्षम हूं । इसलिए तुम्हें निराश होने या चिंता करने की कोई बात नहीं है । मैं आज शाम को अपरइंडिया से वाराणसी जा रहा हूं । वहां यथासंभव कम से कम समय लगाऊंगा । तुम्हें देखने और तुम्हारे स्वास्थ्य समाचार को पाने की उत्कट लालसा बनी रहती है ।

काशी में दो चार दिन रुककर रुपयों का बंदोवस्त करूंगा । देखूंगा कि पी. एफ. से लोन लेना ठीक है या कोई और तरीका हो सकता है । सब कुछ कर-कराकर मैं पहले सप्ताह (अप्रैल) में तुम्हारे पास पहुंच रहा हूं ।

आशा है अब तुम्हें बुखार नहीं आ रहा होगा । तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगी । मेरी छोटी-सी गृहस्थी फिर प्रसन्न भाव से जिंदा हो जायेगी । तुम अपनी इच्छा-शक्ति को बनाये रहो । निराशा को पास मत फटकने दो । जो बड़े बनने के लिए आये हैं उन्हीं की कडी परीक्षा ली जाती है । तुम अब तक सभी परीक्षाओं में प्रथम श्रेणी पाती रही हो । इस परीक्षा में भी तुम्हारी जीत सुनिश्चित है । शेष ठीक है ।
शुभ कामनाओं सहित ।

सस्नेह, शिवप्रसाद सिंह

मैंने सब जगह से जोड़-जाड कर 40 हजार रुपयों की व्यवस्था की । कुछ कर्ज कुछ गांव की जमीन को बेचकर । मैं जितना जोड बटोर सका उसे कैश कर के ले जाना मूर्खता थी । उस समय प्रसिद्ध भारत विख्यात सत्यनारायण शास्त्री के पौत्र विमला चरण पाडे स्टेट बैंक की विश्वविद्यालय शाखा में कार्यरत थे । उन्हें सारी परेशानियां मालूम थीं । उनके मित्र ने चार साल पहले बेल्लौर में ही किडनी ट्रांसप्लांट करायी थी । वह सब उनके दिमाग मे जरूर रहा होगा । मैंने ट्रेवलर्स चेक मांगे तो उन सब पर रबर की मुहर लगाने वाले व्यक्ति ने कहा कि मेरे पास ट्रेवलर्स चेक्स नहीं हैं । बहरहाल पाडेय जी कालकूट पीने वाले रुद्र रूप में उबल

पड़े । तमाम शोर-शराबा मच गया । तभी मैनेजर आये । उन्होंने जब सारी बातें जानीं तो उन्होंने पांडेय जी से कहा— " ड्राफ्ट के लिए जो रकम काटी जाती है, वह अब डॉ. साहब से नहीं ली जायेगी । इन्हें चालीस हजार का ड्राफ्ट बनाकर तुरंत दीजिए आपलोग । गलत फहमी के लिए माफी चाहता हूं ।" वे चले गये । मेरे जीवन में प्रकृति जाने क्यो बार-बार हस्तक्षेप करती है और मैं किसी न किसी ऐसे आदमी से जुड़ जाता हूं जो बिना स्वार्थ सब प्रकार की सहायता के लिए तैयार रहते हैं । हां, मुझे यह अफसोस सदा सताता रहा है कि विमला चरण जी के बिन मांगे स्नेह से कैसे उऋण हो पाऊंगा ।

11

जेहि मन पवन न संचरे रवि ससि नाहि प्रवेश
तेहिं बढ चित विश्राम कर सरहे कहि उपदेश

मैने आचार्य सरोरुह वज्रपाद के दोहे को थोड़ा बिगाड दिया है, अर्थ से नहीं भाषा से । मेरे मन में तो आचार्य, पवन भी सूर्य भी, चद्रमा भी लगातार प्रवेश कर रहे है। बिना सूर्य के मेरे जैसा सांसारिक आदमी यह जान भी तो नहीं सकता कि अस्पताल में मंजु के पास पहुंचने का समय हो चुका है? रवि और शशि के प्रवेश को रोकने के लिए मै कर भी क्या सकता हूं । इसी युग चक्र पर सारा संसार चलता जा रहा है । मेरे पास विश्राम का न तो समय है और न तो इच्छा ही।

उस दिन शायद सूर्य कुछ देर से निकला । यद्यपि नाना प्रकार के पुष्प झड रहे थे । पर मन को आनंद के समुद्र मे तो कृष्ण चूडा ही डुबा रहा था । पीले-पीले नन्हें फूलों की बारिश हो रही थी । फूलों से लदी सरसों रंग-बिरंगी छींट पहने, लचक जाती हुई मटर की लता के देश में मुझे खीच कर ले गयी । नीलिमा ऐसी ? और सफेदी ? वाह, क्या रूप है मटर के फूलों का ! मैंने हल्की झपकी ली होगी कि सिनेमा की तस्वीरों की तरह तमाम लोग मेरे सामने पक्तिबद्ध गुजरते रहे । सरसों के पीले फूलों की आड में जगगन मिसिर, बुल्लू पंडित और एक ओर कपाट के बाजू पर हाथ रखे छलछलायी आंखो से विपिन को विदा करती कनिया थी । पुष्पा थीं, धनेसरी बुढिया थी, मटरू नट था, अपने दिनों को लौटने की बाट जोहते डोम थे जो शायद हजारों साल से इतजार मे खड़े लोग है । शायद किसी दिन विधाता की कृपा हो, इनका दिन लौटे । कुत्तों की गुर्राहट के बीच जूठी पत्तली चाटने से छुटकारा मिले । आजकल आलोचक लोग पता नहीं क्यों इतने दुखी हैं । इतने संतप्त है कि मैं समझ नहीं पा रहा हू । क्या हो गया अनर्थ । मेरे तीन उपन्यास छप रहे है, मैं जिंदा हो गया हु, मेरी आत्मा न ब्रह्मराक्षसों से कभी डरी है न डरेगी । आप नोटिस ले रहे है, पूछ रहे हैं कि दस वर्ष के अंतराल के बाद की रचनाएं 'ग्रोथ' है या शिफ्ट । यह सब चक्रव्यूह बहुत पहले टूट चुका है।

किसी को चार साल तक भयानक पीड़ा के बीच जीना पड़ा है ? धीरज रखने की हिदायत मिली है ? खानाबदोश की तरह परिवार को लेकर करीब-करीब विदेश जैसे लगने वाले परदेश में दो साल रहना पड़ा है । खूब याद आया । इस शब्द का इस्तेमाल मेरे एक विभागीय मित्र ने किया । आप तो खानाबदोश बन गये । ठीक ही कहा उन्होंने । मैं खाली खानाबंदोश ही नहीं बना मेरे कबीले का हर व्यक्ति कत्ल घर में बसा हुआ था

मैं बच भी जाऊं तो तन्हाई मार डालेगी ।
मेरे कबीले का हर फर्द कत्लगाह में है ॥ (परवीन शाकिर)

यह सब झेलता कारवां टूटता रहा तीन लाख रुपये के लिए काशी, इलाहाबाद, गांव, घर को एकाकार करके "कैसे बचाऊं उसे, कैसे बचा लूं," इसी वाक्य को सिले हुए होंठों के भीतर मूर्धा से टकराते बवंडर की तरह भोगना पड़ा है । अगर हां तो आपको मालूम हो जायेगा कि 'ग्रोथ' और 'शिफ्ट' क्या होती है । मैं महापात्र नहीं हूं जो किसी को मृत्युशय्या पर लेटने की सूचना पाते ही एक टोना करते हैं कि वह जल्दी मरे और दान-दक्षिणा प्राप्ति का अवसर आये । ये महापात्र जो करते हैं उसे हमारे गांव में 'पसेरी' ढरकाना कहते हैं । मैं वैसा नहीं हूं । मैंने अपने सत्तावन वर्ष की आयु में किसी की भी जीविका पर लात नहीं मारा। मैंने किसी के साथ वादा-खिलाफी नहीं की । मैं आपका यश छीनने नहीं आया हूं । इतना कमजोर और लुजलुजा नहीं है मेरा मिशन । आप लोग मुद्दत हुई, बहुत पहले कह चुके हैं कि यह सब कूड़ा है । अपने कूड़े को सर पर उठाये पागल की तरह, अंधड़ की तरह मैं घूम रहा हूं चतुर्दिक्, तो दोस्तो मुझे फरेबी मत कहो । मैं मूढ़, निगुर्नियां लेखक हूं, या अपने अंतःकरण की अहमन्यता में जीने वाला पागल हूं । न तो आपके रास्ते को रोकने की कोशिश करता हूं न तो अपने रास्ते को रूंधने के षड़यंत्र को बर्दास्त कर सकता हूं । आप सफल हैं । आपका परिवार मुझ गरीब से जाने कितना-कितना महान है । मैं अभिमन्यु नहीं हूं । मुझे अपने महारथियों से जो वस्तुतः आपके चमचे हैं, घिरवाने की, अनैतिक और अक्षम्य नीतियों से डरवाने की कोशिश न करें। मैं न तो सेंट्रल डिमोक्रैसी में विश्वास करता हूं, न तो डिमाक्रैटिक सेंट्रलिज्म में । ये शब्द आपके आका लोग बार-बार कह चुके हैं । मैं इनका मतलब जानता हूं । मैंने षड्यन्त्र को तोड़ने के तरीके लोहिया से सीखे हैं और वशिष्ठी आचार्यों के कुनबे को पहचानता हूं । मेरे प्रेरणा के स्रोत हैं लोहिया, यानी कामरेड जो 'कैपिटल' और 'कठोपनिषद्' को समन्वित करने की तकनीक में माहिर थे । मैं इसलिए पीपुल्स डिमाक्रैसी में जी रहा हूं । मैं 'जन' के साथ हूं, श्रमिक, किसान, औरतें, मजदूर, संघर्ष में निरंतर

उपवास के बीच जीगरतोड़ कमाई करने वाले मेरे 'जन' के आधार हैं, बेरोजगार युवक मेरे जन के खंभे हैं । आप एक सूत्री प्रोग्राम में जीते हैं यानी जैसे भी हो सत्ता को मुट्ठी में बांधना, सरकार बीस सूत्री में जी रही है यानी मिथ्या शब्दावली बोलने वाले 'काकस' की गिरफ्त कस रही हैं । मुल्क टूटेगा तो मेरे कारण नहीं, आप जैसे नकली, गिरगिट की तरह निरंतर रंग बदलने वाले समझौता पसंद साम्यवादियों के कारण ।

करीब आठ बजने वाले थे । मैं मंजु के पास जाने के लिए कमरे से निकला ही था कि श्रीकांत और नरेंद्र आये । मैंने दरवाजा खोला और कहा—"आपलोगों के चेहरों को देखकर परेशानी हो रही है या कोई बात हुई है । बैठ जाओ और डिटेल बताओ ।"

नरेंद्र ने कहा, "बाबूजी डॉ. पांडेय ने ट्रांसप्लांट के लिए दूसरी किडनी का बंदोबस्त करने को कहा है । उन्होंने लगभग वहशियाने अंदाज में कहा, आप लोग मुझे परेशान न करें, यह संभव नहीं है ।"

"फिर ?"

"फिर क्या । हम दोनों सी.एम.सी. के सामने के गंदे दल पर सोये सोये सोचते रहे ।" नरेंद्र बोला,

"क्या सोचते रहे तुम लोग ।"

"यही कि पिछले दो हफ्तों में जितने भी ट्रांसप्लांट हुए हैं वे सब मरीज मर गये । हम लोगों को तो मालूम भी है कि मरने वालों में तीनों पेशेंट रक्त संबंधी को डोनर बनाकर लाये थे । एक केश तो आपको याद भी होगा, इलाहाबाद के कोई सिन्हा है, है न । उनका भाई ऐन ट्रांसप्लांट के दिन भाग गया और समय पर नहीं पहुंचा । फिर पता चला कि उनका छोटा भाई इस शर्त पर किडनी देने को तैयार हुआ कि बड़े भाई की सारी जमीन-जायदाद छोटे भाई के नाम लिख दी जाय । उन्होंने लिख भी दिया था और एकदम सगे भाई की किडनी लगी थी । पर दो घंटों के अंदर बाडी ने किडनी रिजेक्ट कर दी और सिन्हा जी का आज देहावसान हो गया ।"

"फिर क्या किया जाय? मंजु को अगर यह सब मालूम होगा तो वह एक क्षण भी यहां रूकने को तैयार नहीं होगी ।"

"बाबूजी, उसे सब मालूम है ।"

"क्या ?"

"यही कि टीसू टाइपिंग पर बहुत अच्छी रिपोर्ट नहीं आयी है । मैं तमिलनाडु एक्सप्रेस से जब बेल्लोर पहुंचा तो उसने पूछा, "रिपोर्ट मिल गयी न भैया?"

मैंने कहा,"हां, मिल गयी है ।"

"क्या है फाइंडिंग ?"

"वह सब ठीक है । हम लोगों को अभी डॉ. पांडेय और डॉ. जाकोब से मिलना है । फिर उनसे मिलकर तुम्हें बतायेंगे ।"

"मुझे सब मालूम है । मेरे ब्लड में जो चिनगारी है वह किसी यादव के ब्लड में नहीं मिलेगी ।"

"मंजु, तुम इतने अवैज्ञानिक तरीके से सोचोगी, यह तो विचित्र बात है । ब्लड से न किसी जाति का संबंध है, न किसी रेस का, न किसी धर्म का । ब्लड तो ब्लड ही होता है । वही ग्रुपिंग, वही गुण दोष ।"

"भैया, तू मुझपर फिलास्फी न लाद । ऐसे भी आज लग रहा है कि मेरी छाती पर किसी ने सौ मन वजनी पत्थर रख दिया है । तुम तार दे दो । मैं एक बार बाबूजी को देखना चाहती हूं ।"

"यह ले उनका तार" नरेंद्र ने कहा, "वे परसों पहुंच रहे हैं ।"

"आठ बज गया साहब ! आप लोग तुरंत हटिए यहां से । डॉ. जाकोब कह गये हैं कि इसे कल से इंटैंसिव केयर में रखा जायेगा ।" नर्स बोलीं ।

"हम लोग चले आये । बाबूजी, वह दूध पीती बच्ची नहीं है । आपने और उसमें फर्क सिर्फ इतना है कि थोड़ी देर तक अप्रिय समाचार को आप छिपाने में सफल हो जाते हैं और वह बिना बताये चेहरा देखकर जान जाती है ।"

मैं बहुत परेशान था । दो-ढाई लाख का तो बंदोबस्त हो जायेगा पर जगरदेव की किडनी लेना ठीक होगा कि नहीं । मेरे सामने कोई विकल्प नहीं था । इस स्टेज पर अगर कहें कि ठीक किडनी नहीं मिली अतः चलो बनारस लौट चलें तो क्या प्रतिक्रिया होगी । इतना धन बर्बाद करने के बाद भी अगर यही निष्कर्ष निकला कि किडनी नहीं मिली तो चंडीगढ़ के पी.जी.आई. के बरामदे में बैठी उसने जो कहा था—'कौन किडनी देगा मुझ अभागिन को' उसी वक्त कोई बहाना करके गुरुधाम लौट आना चाहिए था । यह सब सुनकर वह उसी वाक्य की बार-बार आवृत्ति करते, चादर से मुंह ढके सोने का नाटक करके, धारासार रोती होगी इस समय । कौन देगा किडनी, कौन देगा किडनी की रट लगाये होगी अगर कह दूं कि किडनी नहीं मिली तो क्या वह आत्महत्या नहीं कर लेगी ? यह सारा भरोसा, यह सारा बिलपावर एक मुदर्रिस के बस का नहीं है । यह तो एक छलावा था, छलावा ही है ।

तमिल छोकरा मुरली जो किडनी नष्ट हो जाने पर एक किडनी डोनर लेकर आया था, उसकी किडनी दो घंटे में ही फेल हो गयी । उसका बूढ़ा बाप किसी जमाने में दिल्ली जैसी जगह में रह चुका था और दूतावासों के अनेक लोगों को सिर पर श्वेत भस्म का तिलक लगाकर, आशीर्वाद देकर उनकी कृपा-दृष्टि प्राप्त की थी । उसने न तो होटल में कमरा लिया, और न तो खाने-सोने का कोई

बंदोबस्त ही किया । उसकी सिर्फ एक रट थी, रुपया, रुपया, रुपया । वह सपरिवार गंदे प्रांगण में सोता था ।

"हाऊ इज मुरली ?"

"फाइन सर, आई एम राईटिंग दीज लेटर्स टू माई फारेन फ्रेंड्स हू आल्वेज रिमेंबर मी । मैं ये पत्र अपने विदेशी दोस्तों को लिख रहा हूं ।"

"डु यू नो ह्वाट मोर सन वाज टेलिंग ?"

"नो सर, ह्वाट डिड ही टेल यू ?"

"जस्ट वन सेंटेंस, माई फादर नेवर कम्स टु सी मी ।"

"क्या है, सर, इस दिखावे में । मैंने मुरली का दो बार ट्रांसप्लांट कराया । दोनों अनसक्सेसफुल । मेरे बड़े लड़के को यही रोग था । उसका ट्रांसप्लांट कराया, वह साल भर के बाद मरा । यह रोग नहीं है सर, यह मुरगुन का शाप है।"

"ह्वाट इज दिस मुरगुन ?"

"ही इज दी सन आफ लार्ड शिवा । ही इज ग्रेटर दैन शिवा ।"

"कैसे ? तुम शिव को भगवान कहते हो और उनके पुत्र मुरगुन को उनसे भी बड़ा बताते हो, आई कांट अंडरस्टैंड ।"

"आपने सर, वह कहानी तो सुनी ही होगी । गणपति और स्कन्द में कौन बड़ा है, इसे लेकर विवाद खड़ा हो गया, बाजी यह लगी कि जो सबसे पहले पृथ्वी की परिक्रमा करके आयेगा, वही श्रेष्ठ माना जायेगा । भगवान मुरगुन अपने मयूर पर आसीन होकर परिक्रमा पर चल पड़े । गणपति ने सोचा कि क्या मेरे पिता महारुद्र पृथ्वी से बड़े नहीं है । क्या मैं अपने चूहे पर चढ़कर कभी कार्तिक से जीत पाऊंगा ? नहीं । उन्होंने डिप्लोमेसी से काम निकालना चाहा और अपने पिता की परिक्रमा कर दी । पिता यानी लार्ड शिव को क्या कहेंगे सर । क्या उनका निर्णय ठीक था, क्या वह अहंकार भरा पक्षपात नहीं था, । जब देव सेनानी मुरगुन ने यह निर्णय सुना कि गणपति को श्रेष्ठ कह दिया लार्ड शिवा ने तो उन्होंने कहा कि—आज से बेटा और बाप का रिश्ता टूट गया । अब न तो दशरथ होंगे, न वसुदेव होंगे, न तो बाप के चरणों में बिना कुछ सोचे स्वाभाविक रिश्ते को स्वीकार करके प्रणिपात करने वाले बेटे होंगे ।"

मैंने कहा, "सुब्रह्मन्यम् साहब, कहीं लिखा है ऐसा क्या ?"

"लिखा तो मैं जानता नहीं सर, रेलिजस बुक्स, पुराण वगैरह पढ़ने का न वक्त है, न रुचि । मैंने जो किंवदंती सुनी है, उसी को सुना रहा था आपको ।" अपने को ब्रह्मांड समझने वाले जाने कितने हैं लार्ड शिवा इस देश में, जो उसी पद्धति को चलाये जा रहे हैं । वे अपने इर्द-गिर्द चक्कर लगाने वाले चमचों को क्या वैजयंती की माला नहीं पहना रहे हैं । उनकी योग्यता के लिए जो केवल फरेब है, ठीक

गणपति की तरह, यानी मैनीपुलेशन से मालामाल नहीं बनाये जा रहे हैं। कंट्रेक्टरों, एजेंटों के गले में रत्नों के हार पहनाये जाते है। लोग उनकी विजय का डंका पीटते हैं। तिकड़म से मुहिम जीतने वाले लोग प्रसिद्ध होते हैं, ऐसे लोग महान होते है। और सच्चाई से श्रम करके रोटी कमाने वाले असमर्थ अक्षम कहकर ठुकरा दिये जाते हैं। हम तो फेमस नहीं हैं सर। हम अगर सी.एम.सी. में दिख गये तो हुक्म है गार्ड्स को, वार्ड ब्यायज को या किसी भी डॉक्टर को कि वे हमें दौड़कर पकड़ लें, आप तो उस दिन वहां बैठे ही थे सर, जब नेफ्रोलाजी के डॉक्टरों ने मुझे पकड़ लिया।"

"बोल, तूने अब तक विदेशों से सी. एम. सी. का नाम बेचकर कितने डालर्स पाये हैं ? मैंने कहा था सर, मैं न तो सी. एम. सी. का नाम बेचता हूं और न तो मेरे पास डालर्स ही हैं। लगातार चिट्ठियां लिखकर अपनी बेबसी और दीनता का इजहार करके, कुल पांच हजार रुपये पाये हैं, अभी पांच हजार रुपये और चाहिए क्योंकि आप तो जानते ही होंगे सर कि ट्रांसप्लांट के लिए दस हजार एडवांस देने होते हैं।"

"हां, बंधु जानता हूं, भगवान मुरगुन भी तुम्हें पराजित नहीं कर सकते, उनका शाप तुम्हें छू भी नहीं सकता क्योंकि ब्राह्मण होने का नकाब तुमने बहुत पहले फेंक दिया है।"

क्या-क्या रहस्य छिपा है हमारे महाकाव्यों और पुराणों में। एक ओर देव सेनानी के अभाव के कारण सदा के लिए पराजित देवता प्रार्थना कर रहे हैं भगवान शिव से कि उनकी रक्षा बिना शिव-पुत्र के नहीं हो सकती। अगर शिव-पुत्र पृथ्वी पर आयेगा कैसे ? क्या शिव-वीर्य को सहने की शक्ति है किसी में ? देव-सेनानी सुब्रह्मण्यम बन गये दक्षिण में। जब उस अपराजेय वीर्य-तेज को पृथ्वी नहीं संभाल पायी। गंगा नहीं संभाल पायी, अग्नि नहीं संभाल सका, तो सी.एम.सी. पद के डॉक्टर्स और वार्ड ब्यायज क्या संभाल पायेंगे। वाह रे मुरगुन!

देव देव महादेव लोकस्यास्य हिते रत।
सुराणां प्रणिपातेन प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥
न लोका धारयिष्यन्ति तव तेजः सुरोत्तम।
ब्राह्मण तपसायुक्तो देव्या सह तपश्चर ॥
त्रैलोक्य हितकामार्थं तेजस्तेजसि धारय।
रक्षसर्वानिमाल्लोकान् नालोकं कर्तुमर्हसि ॥

(वाल्मीकि रा. बाल./३६/९/-॥)

"एक बात बताऊं सर आपको, किसी से कहियेगा नहीं," सुब्रह्मण्यम बोले-- 'मुझ तमिलियन ब्राह्मण को खुले आम कहा गया कि तुम सपरिवार ईसाई बन जाओ । तुम जितनी बार चाहो, ट्रांसप्लांट मुफ्त में किये जायेंगे । यही नहीं तुम्हारे परिवार के लिए रोटी-मक्खन, कपड़े-लत्ते और रहने को मकान मुफ्त में मिलेगा ।"

"आप पूरे मूर्ख हैं सुब्रह्मण्यम साहब, आपको ईसाई बन जाना चाहिए था । जितनी जल्दी आप हिंदू कहलाना छोड़ दें उतना ही अच्छा होगा । आप किसी मजहब को चुनिए यानी ईसाई बनिए, मुसलमान बनिए, वैसे बौद्ध बनने से कोई आर्थिक लाभ तो नहीं होगा, पर आप अभिशप्त हिंदू धर्म से अलग होकर थोड़ी राहत की सांस तो ले ही सकते हैं ।"

"क्या, यह आप कह रहे हैं सर ?"

सुब्रह्मण्यम साहब बोले, "मैंने तो अभी कल ही फोर्ट के शिवालय में आपको और बहन जी को पूजा करते देखा है । क्या आप हिंदू नहीं हैं ? अगर आप ईसाई हैं तो हिंदुओं के मंदिरों को ठुकरा क्यों नहीं देते ?"

"इसलिए श्रीमान कि हिंदू कोई मजहब नहीं है, वह एक संस्कृति है । लोग सैकड़ों बार उनके मंदिरों को तोड़ते रहे, श्रेष्ठ मूर्तियों को, देव प्रतिमाओं को, ज्योतिर्लिंगों को हथौड़े और मुद्गर मार-मारकर चकनाचूर करते रहे, पर निरीह हिन्दू चुप रहे, और इनकी वह चुप्पी, हमलावरों से कुछ न कहने का शाश्वत मौन हमलावरों के लिए असीम और अगम समुद्र बन गया । इस देश में सबसे बड़ा पाप है हिंदू होना । उसमें भी ब्राह्मण होना । सुब्रह्मण्यम साहब, आज आपके तमिलनाडु में ब्राह्मण होने का बदला लिया जाता है । आर्य संस्कृति के नाम पर निराधार दौड़ते उत्तर भारतीयों से जो खुद एक मुट्ठी चने के लिए बिलबिला कर दौड़ रहे हैं । तमिलनाडु के मुसलमान कहते हैं—डॉ. साहब आप बेल्लौर की पहाड़ियों में सकून नहीं पा सकते । जाइए केरला, आपकी आंखें खुल जायेंगी । केरला एकदम अरब कंट्री माफिक है । केरला जन्नत है ।

मैं प्लास्टिक सर्जरी वाले कमरे में पहुंचा तो पता लगा कि उसे जांच के लिए श्री निवास और उनके सहायक निचले तल्ले पर स्थित एक्सरे कक्ष से सटे हाल में ले गये हैं । मैं दौड़ा-दौड़ा उस कमरे में पहुंचा तो वह इस तरह डकार रही थी जैसे कोई गाय की बछिया को जबह कर रहा हो ।

"ह्वाट इज द मैटर" पास बैठे वृद्ध ने कहा, "अगर कोई ऐसी दर्दनाक जांच थी तो उसे बेहोश करके करना चाहिए था । द गर्ल इज क्राइंग । तभी श्रीनिवास बाहर आये," डॉ. सिंह, प्लीज टेल हर दिस टेस्ट वाज़ कंपल्सरी ।

"डॉ , अगर यह टेस्ट बहुत जरूरी था तो कल शाम ही मुझे बताना चाहिए था । मैं कितनी बार प्रार्थना करूं आप लोगों से कि वह बिना समझाये, बिना

दिलायें कोई टेस्ट नहीं करायेगी । अभी साढ़े आठ बजे हैं—आपकी सारी नर्सें जानती हैं कि मैं ठीक-ठीक आज बजे आ जाता हूं । अगर आपने पांच मिनट के लिए यह प्रोग्राम रोक लिया होता तो कौन-सा आसमान टूट रहा था ।"

"वी कांट नाट वेट फार यू" वह बोला "लेट मी से ब्लंटली, हैड यू विन इन वाराणसी, योर डेड बॉडी उड हैव बिन फ्लोटिंग इन गंगा ।"

वह एक मिनट मेरे चेहरे पर देखता रहा, "प्लीज उसे समझाइए । ब्लाडर टेस्ट के बिना ट्रांसप्लांट नहीं होता ।"

मैं उसके पास पहुंचा । लंबे टेबुल पर उसके दोनों हाथों पर रस्सा-कसी कर रहे थे दो लोग । दाहिनी ओर और दूसरी ओर दो लोग पैर दबाये थे ।

"इसे छोड़िए प्लीज लीव इट एंड गो ।" मैंने कहा ।

उन्होंने डॉ. श्रीनिवास की ओर देखा और उनके इशारे पर उसके हाथ-पांव छोड़ दिये ।

"बाबूजी, बाबूजी" वह चिल्ला रही थी । "इससे तो अच्छा था कि मैं अपने शहर में, अपने कमरे में, अपने बेड पर मरती । मरना ही है तो इतना सताया क्यों जा रहा है मुझे । मैं और सह नहीं पा रही हूं, बाबूजी ।"

"बेटे तुम्हें गलत-फहमी हो गयी है, लंबी सूई देखकर । मुझे जब सायटिका हुई थी तो डॉ. गंगा सहाय पांडेय के परिचित और मेरे अनन्य प्रशंसक डॉ. सिंह ने कहा कि सूई देखकर डरिए नहीं । असल में स्थूल होने के कारण सायटिका नर्व को लोकेट कर पाना बहुत मुश्किल है । तीन बार तो हम प्रयत्न कर ही चुके हैं पर सायटिका को बेध नहीं पाये । वैसे ही यह पतली सुई तेरे ब्लाडर से युरिन लेने के लिए लाये हैं । तू तो जानती है कि लोकनायक जय प्रकाश जब चंडीगढ़ के पी. जी. आई. में भरती थे तो एक हफ्ते की जांच के बाद डॉ. ने कह दिया कि "सारी, सर, आपका ब्लैडर नष्ट हो चुका है । ट्रांसप्लांट हो ही नहीं सकता आपका । ये, तुम्हारे ब्लाडर से युरिन निकालकर जांच रहे हैं कि वह ठीक है या नहीं।"

"ठीक है, आप इन्हें बुलाइए, पर आप भी यहीं खड़े रहिए ।"

एक मिनट में ब्लाडर टेस्ट हो गया, "थैंक यू डॉ. सिंह ।" श्रीनिवास ने कहा, "एक्सक्यूज मी ।"

"डोंट थिंक ।"

मंजु कपड़ा ठीक-ठाक करके बाहर आयी ।

"ये हैं तुम्हारे फादर, मैं इनका नाम तो नहीं जानता, पर इन्होंने तुम्हें जोर-जोर से रोते हुए सुनकर गुस्से में कहा था, "अगर ऐसी जांच करनी ही थी तो बेहोश कर देते ...।"

मंजु ने उन्हें प्रणाम कहा । वे अज्ञात सज्जन मेरी ही आयु के थे । उनकी

आंखें छलछला आयीं । "बेटी, तुम पिछले दो-तीन महीने में तो जान ही गयी होगी कि मरीज का गार्जियन कितना अनाथ होता है । ये तो चिट भेज देते हैं और ये आदमखोर कुत्ते की तरह जीभें निकाले खून के चटखारे लेने लगते हैं । मेरी भी इकलौटी बेटी है । नेफ्रोलोजी के बगल के यूरोलोजी में भरती है । वे अंग्रेजी छोड़कर हिंदी में बोले — वह नार्थ इंडियन पांडेय सर्जन बोला एक किडनी सड़ गयी है, ऑपरेशन कराना हो तो रुको वरना बेड खाली कर दो । मैंने बेड खाली कर दिया । और सावू लाज के बगल की एक झोंपडीनुमा...तुम जानता रुफिंग टाइल्स मिट्टी का ।

"ओह, उसे हम खपैल कहते हैं ।"

"हां तो बाबा उसी खपरैल की छत वाला एक कमरा लिया, दो रुपया डेली । वहीं अपनी डाटर रहता । डायलसिस के डेट पर एक मेड सर्वेंट उसे नेफ्रोलाजी ले जाता । यही है मेरा फेट, यही है भाग्य । ये सारी बीमारियां उन्हें ही होती हैं सर, जो मध्यवर्ग के या दीन-दुखी वर्ग के होते हैं ।"

"आपका नाम क्या है सर ?" मैंने पूछा ।

"रामन् अय्यर"

"क्या तमिलनाडु सरकार ने, जो हर ट्रांसप्लांट वाले मरीज को पचास हजार देती है, आपकी सहायता नहीं की?"

"यह सब मिथ्याचरण है, प्रचार तो नहीं कहूंगा पर यह सरकार या आनेवाली कोई भी सरकार उसकी सहायता नहीं करेगी जो दुर्भाग्यवश ब्रह्मण वंश में पैदा हो गया है । आप गांठ बांध लीजिए सर, जब तक यह अस्पताल आपसे सब कुछ, क्या कहते हैं हिंदी में, टु मिल्क ए काउ...

"दूहना कहते हैं सर" मैंने कहा ।

"हां, थैंक यू, जब तक एक-एक बूंद दूह नहीं लेते, आपके मरीज को इस वार्ड से उस वार्ड में भेजते रहेंगे, खून चूसते रहेंगे, तरह-तरह के कंप्लीकेशन बताते रहेंगे और जब तक आप होटल से निकलकर सड़क पर नहीं आ जाते, आपको सत्य का सूरज नहीं दिखेगा सर, आप बिल्कुल अंधकार में अपनी बेटी के लिए सिसक-सिसककर रोते रहिए, कोई बात भी नहीं करेगा आपसे । यह है ईश्वर के पुत्र का करिश्मा । चलूं सर, बगल वाले एक्सरे रूम में मेरा डाटर क्यू लगाये इंतजार कर रही है ।"

12

सत्य का मुंह सोने के पात्र में बंद है ।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्योपहितं मुखम्

यह मंत्रद्रष्टा ऋषि का समझा-बूझा, भोगा हुआ यथार्थ था । मैं चुपचाप डॉ. ए. पी. पांडेय के फ्लैट पर पहुंचा । घंटी बजायी तो उसी किशोरी ने द्वार खोला, "विल यू प्लीज टेल मी । आई हैव कम यू मीट डॉ. पांडेय "क्या वे हैं?"

"ह्वाट इज योर नेम?

"मेरा नाम है शिवप्रसाद ।" आप लार्ड शिवा को जानती हैं ।

"वही काले पत्थर का गोल-मटोल चिकना पत्थर । यहां लोग लिंग कहता है।"

"हां-हां, इसके अलावा आप कुछ जान भी नहीं पायेंगी । आपसे शिव के उन्मत्त रूप के बावत कुछ कहना बेकार है । लार्ड शिवा जलते हुए शव को कंधे लादे पूरे ब्रह्मांड को हिलाते, प्रचंड अट्टहास करते चलते हैं । उन शिव का मैं हूं यानी आनंद कृपा । खैर छोड़िए, आप कृपा करके डॉ. पांडेय से कहिए कि पागल खड़ा है बाहर ।"

वह भीतर चली गयी । "मैं सोचता हूं कि मनुज अब तक की सर्वश्रेष्ठ चीज है जिसे प्रकृति ने अपनी प्रयोगशाला में करोड़ों साल गढ़-गढ़कर तराशा है । जड़ पाषाण से जल, थल, वनस्पति पशु और सबसे अंत में मनुज । मुझको मनुज तो बनाया पर कुछ भी ऐसा दे नहीं सकी कि मैं स्थितप्रज्ञ की तरह या जड़ भरत की तरह बिना कुछ सोचे, समझे आज्ञा-चक्र पर ध्यान केंद्रित करके बैठा रहूं । मैं तनाव झेल रहा था । किसी को मृत्यु के मुख से छीन लेने का संकल्प लेकर आया था । मैं शांत नहीं था । स्थिर नहीं था । बलवंत दृढ़ मन को मैं कभी भी वशीभूत नहीं कर पाया । मैं तब तक तनाव से मुक्त नहीं हो सकता जब तक अपनी मंजिल नहीं पा जाता ।

"आइये, आइये" डॉ. पांडेय ने कहा, "आपकी अलग-अलग वैतरणी ने तो धूम मचायी है । जो भी हिंदी जानते हैं वे सब बारी-बारी से इसे पढ़ चुके हैं । कहिए-कैसे आये ।"

"देखिए पांडेय जी, मिहरबानी करके, मेरे उपन्यास की प्रशंसा करके इतना हल्का मत बनाइए मुझे । मैं प्रशस्ति सुनकर बालकृष्ण की नाईं चंद्रखिलौना यानी थाली के हिलते जल में अपना ही प्रतिबिंब देखकर छला नहीं गया हूं । नकली चीजों से मुझे बहकाइए मत । मैं आपसे आज खुलकर बातें करने आया हूं । अब हमारी डोंगी मझधार में डगमगा रही है । हमें तट चाहिए चाहे वह इस पार हो, चाहे उस पार ।"

"आप चाहते क्या हैं? क्या आप जगरदेव की किडनी निकालकर मंजु का ट्रांसप्लांट कराना चाहते हैं । बोलिए आपने अभी रुद्र रूप की जो बातें कहीं, वे बहुत महान हैं, पर आप एक भावुक साहित्यकार हैं । ठोस धरती पर पैर रखकर सोचिए । क्या आप डेढ़ लाख रुपया फूंककर यह नाटक देखना चाहते हैं? तो सुनिए आज तक चाहे रक्त संबंधी की हो या किसी पराये आदमी की किडनी हो मरीज अधिक से अधिक सात साल तक जीवित रहेगा । यह सब उन अनुभवी लोगों का निष्कर्ष है जो मोस्ट एडवांस्ट कंट्री में लगातार ट्रांसप्लांट करके इस नतीजे पर पहुंचे हैं ।"

"यह आप पहले ही कह चुके हैं पांडेय जी, जरा सोचिए कि एक बीस वर्ष की कन्या, जिसने भविष्य जीवन की जाने क्या-क्या कल्पनाएं सजोयी होंगी, मेरी विवशता को वह कभी सत्य मानेगी । मैं एक अपराधी बाप की तरह उससे कहूं कि वेल्लौर भी झूठ है जैसे चंडीगढ़ । अब तुम दवाएं बंद कर दो और मृत्यु के आमने-सामने खड़ी हो जाओ... दूसरा कोई एक्जिट नहीं है—नान्यः पंथा । मृत्यु वरण कर ले बेटी तेरा बाप कितना निरर्थक और मूर्ख है जो तेरी जैसी प्यासी हिरनी को मृगमरीचिका दिखाता रहा । जिसने बनारस में तेरे कहने पर कि आप इतना रुपया कहां से लायेंगे, गर्व से कहा था कि मकान बेच दूंगा, गांव की जमीन बेच दूंगा, आवश्यकता हुई तो डोम राजा की गुलामी करने के लिए अपने को बेच दूंगा, वह बाप इसलिए नहीं लौट रहा है कि उसके पास पैसे नहीं हैं, वह लौट रहा है तो सिर्फ इसलिए कि वाजिब किडनी नहीं प्राप्त हो रही है ।"

आपने कहा था डॉ. पांडेय कि यह सब 'लक' है भाग्य है । मैंने पूछा था आपसे कि क्या देश के प्रमुख अंग्रेजी और हिंदी अखबारों में जाने कितने मर्द और औरतें गिड़गिड़ाकर प्रार्थना करते हैं कि अमुक ब्लड ग्रुप के भाई, बंधु एक मृत्यु की ओर बढ़ती औरत की प्राण-रक्षा के लिए या पुरुष की रक्षा के लिए जिसकी गृहस्थी बहुत कच्ची है, मृत्यु-मुख में जाने से रोकने के लिए एक किडनी का दान करिए । क्यों पांडेय जी, क्या यह सच नहीं है कि वर्षों तक डायलसिस पर जीने वाले

धनाढ्य उद्योगपति सेठ साहूकार, धनी देशों के बड़े-बड़े अफसर आदि जब एक्सीडेंट में मरे, किसी व्यक्ति की किडनी को उपलब्ध करके ट्रांसप्लांट कराते हैं तो खुशियों में डूब जाते हैं, क्या वह किडनी उनके रक्त संबंधियों की होती है?"

पांडेय जी ने गंभीर सांस ली । मेरा निवेदन उन्हें द्रवित नहीं कर सका । वे गुस्से में बोले, "ले जाइए इसे अमेरिका, हमारे लिए यह संभव नहीं कि हम परिवार से अलग एक बाहरी व्यक्ति की किडनी लगाएं । वह किडनी तो लगते ही काली हो जायेगी । और जरा एक बात और बताइए बी. एच. यू. में आपकी लड़की को ओ निगेटिव ब्लड कई बार चढ़ाया गया होगा । कहीं इस तथाकथित डोनर का ब्लड तो नहीं चढ़ाया गया है । विल्कुल सत्य बोलिए । अगर डोनर का ब्लड आपकी बेटी को चढ़ाया गया है तो वह एंटी बॉडी हो जाता है । ऑपरेशन के पंद्रह मिनट बाद ही 'बॉडी' किडनी रिजेक्ट कर देती है ।"

"भाग्यवश ऐसी गलती नहीं की है हम लोगों ने । बनारस के नेफ्रोलाजिस्ट डॉ. आर. जी. सिंह ने प्रथम पेरिटोनियल डायलसिस के समय ही कहा था कि यह ध्यान रहे, डॉ. साहब कि किसी पोटेंशियल डोनर के ब्लड की एक बूंद भी शरीर में नहीं जानी चाहिए । हम पूरी तरह सावधान थे डॉ. पांडेय, इस डोनर का ब्लड हमने नहीं लिया ।"

"क्यों?"

"क्योंकि एक पाइंट ब्लड के लिए यह पांच सौ रुपये मांग रहा था और बनारस में जो भी पांच-छः लोग थे इस ग्रुप के, उन्होंने मेरे नाम को सुनकर बिना मुझसे पूछे मंजु के लिए ब्लड दे दिया था । आप इसके लिए तो निश्चिंत रहें कि डोनर का ब्लड नहीं चढ़ा है, मंजु की बॉडी में ।"

"ठीक है, मैं कल नेफ्रोलॉजी सेक्सन से पूछूंगा कि टुबरकुलेसिस (तपेदिक) की दवा का परिणाम क्या हुआ । कितने दिन हो गये हैं दवा लेते ?"

"कहा था लोगों ने कि छः सप्ताह तक तो ट्रांसप्लांट स्थगित रहेगा।"

"कितने सप्ताह हुए अभी?"

"सात"

15 अप्रैल 1982, 417 एनेक्से

सी.एम.सी., बेल्लौर, डायरी के अंश

आज मुझे नींद नहीं आयी । मैं रात्रि के दो बजे उन तमाम कटुतिक्त हलाहल को पीकर जो कुछ घटा अब तक उसे केंद्र विंदु बनाकर सोच रहा हूं सत्यनारायण और

जगरदेव ने कहा, "घबरा मत भइया । जब हमार किडनी लगा के पी. के. जैन स्कूटर दौड़ा रहे है, त हमहन के बेटी भी दौड़ी, खेली, कूदी शादी-विवाह करी । आप जरा भी परेशान मत होख । आज पाडे जी क हुकुम आय गयल, बतावत रहे नरेंदर भइया कि काल्ह से जगरदेव भाई के भी यूरोलॉजी में भरती हो जाये के हौ।"

"यह सब नहीं चलेगा डॉ. सिंह, एक बनारसी आवाज बेल्लौर के रंग में डूबी गुंजित हुई—आप शभू प्रसाद सिंह की औरत को बुलाइए जब तक वह औरत लिखती नहीं कि ऑपरेशन के लिए मैं अपने पति के निर्णय से सहमत हूं, तब तक ऑपरेशन संभव नहीं ।

"क्यों नरेंद्र ।"

"बोलिए बाबूजी !"

"किस औरत को बुलाएं । जगरदेव की औरत एक गरीब मजदूरिन होगी, उसे देखकर पाडे जी कुछ और अहसास करेंगे क्योंकि सब कुछ जानते हुए भी वे हमें परेशान करने का कोई न कोई बहाना ढूंढ लेते हैं । जैन के ट्रांसप्लांट के समय भी वे इसी शैली का प्रदर्शन कर रहे थे और उन्होंने जैन को इतना परेशान किया कि रक्षा मंत्रालय से उसने उन पर प्रेशर डालने के लिए फरमान जारी कराया । ऑपरेशन इसी हफ्ते हो जाना चाहिए । यह सलाह नहीं, आदेश है । तब कहां गयी पाडे की हेकड़ी । कहां गयी उनकी जमीर । कहां गया उनका असभ्य आदर्श। सब जानते हैं कि नेफ्रोलाजी में रक्त संबंधी डोनर शायद ही एकाध हों । फिर बार-बार नाटक क्यों? या तो स्वीकार कीजिए या अस्वीकार, हम गरीब कब तक अधर में लटके रहेंगे ।

"क्या करूं बाबूजी?"

"तुम जाओ, शंभू की औरत को ले आओ या छक्कन की पत्नी को । वहां कुछ भी मत बताना कि क्यों बुलाया गया है और क्या करना होगा उसे ।"

नरेंद्र रात को ही मद्रास के लिए जाने वाली आखिरी बस से जा रहा था । मैं खुद उसे छोड़ने बस स्टैंड गया ।

मैं बहुत जल्दी लौट आऊंगा बाबूजी, जरूरत हुई तो पूरे खानदान को बटोरकर ले आऊंगा । पांडेय जी अगर नहीं मानते तो आप भी विश्वनाथ प्रताप

सिह् से या कमलापति जी को लिखिए । मामूली-मामूली बातों पर, हमें परेशान करने के लिए एक न एक अड़ंगा लगा देते हैं ।"

जगरदेव यूरोलॉजी वार्ड में भरती हो गये । उनके बेड के सिरहाने लिखा था शंभु प्रसाद सिंह । नाम तो मैं भूल गया हूं पर बिहार के एक जूनियर डॉ. थे और वे यूरोलाजी में कार्यरत थे । उन्होंने अलग-अलग वैतरणी पढ़ी तो मेरे मुरीद हो गये। आप चिंता न कीजिए प्रो. साहब, मैं सारी फार्मेलिटीज पूरी करके यथाशीघ्र ट्रांसप्लांट करा दूंगा ।

पांडेय जी ने बुलाया, "प्रो. साहब, ऑपरेशन असंभव है । क्योंकि डोनर के रक्त परीक्षण से पता चला है कि उसका एच. बी. बहुत 'लो' है यानी 9-5 । दस के ऊपर अगर नहीं हुआ तो सारा किया-कराया बेकार होगा । मैं उस स्थिति में ऑपरेशन नहीं करूंगा । उन्होंने बथुआ का साग, अंगूर का रस, संतरे और सेब की ऐसी लिस्ट बतायी कि हम हक्के-बक्के ताकते रहे । पिछले बीस वर्षों से यानी जब से बच्चे बड़े हुए, मैंने पत्नी के बार-बार कहने पर भी फलों का रस लेने से इनकार कर दिया । हम सब चाहे बच्चे हों या पति-पत्नी, कभी भी कोई ऐसी चीज नहीं ग्रहण करेंगे जो सबके लिए मंगायी न जाय ।

"बच्चे तो जिलेबी और दूध का नाश्ता लेते हैं । क्या आप वही चीज खुद नहीं ले सकते?" पत्नी ने पूछा था ।

"मैंने कहा न कि तुम गंवार और मूर्ख हो, मुझे दूध में भिगोई जिलेबी पसंद है पर मैं उसके बिना भी हासपिटल एनक्से में जीता रहूंगा ।"

21 अप्रैल 1982

रात के एक बज रहे थे । भीषण गर्मी थी उस दिन । रात में भी इस तरह कमरा जल रहा था कि नींद आना मुश्किल था । पंखा आग उगल रहा था । क्या वेल्लौर की चंद्रकार पहाड़ियां भी इस ताप को सोखने में असमर्थ हो गयी।"

तभी मेरे दरवाजे पर दस्तक सुनाई पड़ी । उठा और दरवाजा खोला तो श्रीमती मोहना यानी मेरे भतीजे छक्कन की पत्नी और नरेंद्र खड़े थे ।

उसने झुककर मेरे पांव छुये और बोली, "बाबूजी, कैसा देश है यह । न खाना मिलता है हमारे लायक न तो पान । आप तो पान के आदी हैं । कैसे-कैसे

कोल्हुओं में पेरे जा रहे है आप ।" वह सिसकने लगी ।

"छोड़ो वह सब ।"

"जो बाण चला रहा, वह बाण से विद्ध भी हो रहा है । यह तो युद्ध पर्व है । अर्जुन और अश्वत्थामा दोनों ही को मैं अपने अन्तर्मन में प्राणलेवा संग्राम में व्यस्त देख रहा हूं ।

अगले दिन शंभू सिंह की तथाकथित पत्नी को जगरदेव का हाल-चाल पूछने के लिए यूरोलॉजी वार्ड में ले गये नरेंद्र और श्रीकांत । वह सबके साथ टूरिस्ट होटल में ही रहना चाहती थी, वहां एक कमरा लिया गया ।

"भाई, पति से पत्नी लाख गुना आकर्षक है ।" मैं इस तीखे बाण को अपने आंजलिक से ध्वस्त कर सकता था, पर लाचार था । डॉ. सिंह ने कहा, "भाभी जी तो ऐसी लगती हैं, मानो भगाकर लायी गयी हों ।"

फल के रस, रक्त में हीमोग्लोबीन बढ़ाने वाले तमाम फल-फूल दस दिनों से दिये जा रहे थे, पर जगरदेव जी के रक्त में कोई परिवर्तन नहीं आया । मेरा छोटा भाई भरती है अस्पताल में तो व्यावहारिक यही था कि मैं रोज उसका हाल-चाल पूछने सुबह-शाम दो बार तो जाऊं ही । उधर पांडेय जी के हुक्म से नेफ्रोलाजी वालों ने सारा हिसाब-किताब कर-कराकर हमें मुक्ति दे दी । पांडेय जी ने बहुत आग्रह किया कि इतने अधिक भाड़े वाले कमरे की जगह उसे जेनरल वार्ड में ही ले लें । उन्होंने कहा, कोई बेड खाली नहीं है । लाचार 90 रुपये प्रतिदिन के हिसाब पर यूरोलॉजी का एक रूम मिला, उसमें उसने राहत की सांस ली । "इसका किराया कितना है बाबूजी ?" उसने पूछा ।

"कोई खास नहीं, सिर्फ नब्बे रुपये रोज ।"

वह मुसकरायी, "वह नाम तो याद नहीं है बाबूजी लेकिन बचपन में आपसे ही सुनी है वह कहानी, वही खून चूसक साइलाक, वह यहूदी था पर मुझे लगता है कि अपने मजहब की प्रतिष्ठा के नाम पर शेक्सपियर ने उसको यहूदी कह दिया । वह अपने कर्ज के बदले हर किसी का, जो समय पर सूद न जमा कर पाते थे, मांस कटवा लेता था । यह सी. एम. सी. वही साइलाक है । ठीक जोंक की तरह मेरे शरीर से चिपक गया है, वह बिना हमें भिखमंगा बनाये छोड़ेगा नहीं ।"

"जोंक सिर्फ खून ही नहीं चूसती । वे अपनी कुटिल गति से बीमार और उसके अभिभावक को मानसिक आघात भी पहुंचाती है । कुटिलता उनका स्वभाव है । ये सब बहुत पहले बाबा लिख गये हैं उनकी कुटिलता से बच पाना

आसान नहीं है । क्या तेरे सीने में दर्द हो रहा है ?"

"नहीं तो," फिर नेफ्रोलाजी वाला शास्त्री ई.सी.जी की मशीन क्यों ले आया यहां । इसीलिए न कि मरने के लिए पूरा संकल्प लेकर ऑपरेशान कक्ष में जाने से पहले मरीज से तीस-चालीस रुपये और चूस लें । यव सब वही कुटिलता है, जोंकों की लीलाएं हैं, जो वक्र गति से दहशत जगाती अपनी मंजिल की ओर जा रही हैं।"

चलें वक्र जिमि जोंक गति यद्यपि सलिल समान ।

अप्रैल 30, 1982

अस्पताल अनेक्से, सं. नं. 417

"मैने कल ही ट्रांसप्लांट की सूचना भेज दी थी नेफ्रोलॉजी वालों को । पर विवश होकर हमें यह तिथि टालनी पड़ रही है । नेफ्रोलॉजी के किसी, मरीज का नाम लिया डॉ. पांडेय ने और कहा कि एयरकंडीशंड रूम ट्रांसप्लांट के बाद रहने लायक नहीं है । उस मरीज को डायरिया हो गया और उल्टी करता रहा । उसे हटा दिया गया है । पर जब तक उसे पूर्णतः जांच कर कीटाणु-विहीन होने की रिपोर्ट न मिल जाय, तब तक सभी ट्रांसप्लांट की डेट्स बढ़ा दी गयी हैं ।

मई 5, 1982

आज रघुनाथ जाधव का ट्रांसप्लांट हुआ । किडनी दी थी उनके भाई, पुत्रविहीन बड़े जाधव ने । डोनर तो उसी दिन यूरोलाजी में लौट आये, किंतु रघुनाथ एयर कंडीशन्ड कमरे में बंद कर दिये गये ।

"क्यों जाधव जी, आप लंगड़ा क्यों रहे हैं ?" मैंने उनसे पूछा । यह महाराष्ट्री परिवार था । बड़े जाधव छोटे जाधव यानी रघुनाथ और उनकी पत्नी । ये लोग हमारे परिवार से अभिन्न रूप से जुड़ गये थे । रघुनाथ की पत्नी वोली,"काका, मंजु का ट्रांसप्लांट कब हो रहा है ।"

"वस वेटे एक सप्ताह और, 12 मई की तिथि दी गयी है ।"

"भगवान करें काका कि आपका सारा परिश्रम सफल हो ।"

"तुम्हारा आशीर्वाद है वेटी, तो वह सफल तो होगा ही ।"

मई 6, 1982

डॉ. पांडेय का फरमान जारी हुआ कि व्लड वैंक में आवश्यक रक्त यानी ओ

निगेटिव एकदम नहीं है । हमें कम से कम चार-पांच बोतल 'ओ निगेटिव' खून चाहिए ही । वर्ना ट्रांसप्लांट की डेट बदलनी पड़ेगी ।

सी. एम. सी रक्त के मामले में बहुत सख्त और दृढ़ थी । किसी भी तमिलियन का खून वर्जित था ।-कहीं और जगह से लाइए खून । यह फरमान मिला कि मैं बेबस होकर चौकी पर लेट गया । बनारस से रोटरी लायंस आदि ने मेरे बारे में जो कुछ लिखा था उसे टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दिया क्योंकि यह एकदम निरर्थक था। किसी रोटेरियन या लायंस क्लब वालो ने खून का इंतजाम तो दूर पत्र को देखने की जहमत भी नहीं उठायी ।

"मैने प्रदीप और विजयी को बुलाया, एकदम सुबह पांडिचेरी की बस पकड़ो और श्री अरविन्द आश्रम में आदरणीया अनुबेन से मिलो । यह अंतिम गोटी है, इसे बचाने के लिए आश्रम से गुहार करने के सिवा कोई विकल्प नहीं है मेरे पास । यह चिट्ठी देना अनु बहन को, और वे जो कहें आकर बताओ तुरत ।"

मै भीषण गर्मी से परेशान था । एक तो मानसिक उत्ताप, दूसरा वातावरण का निदाघ मैं गीली तौलिया से मुंह ढके सोच रहा था । क्यों दिया जा रहा है यह दंड। क्या अपराध है मेरा । मेरे इस अत्यंत छोटे परिवार से वह सब कुछ छीन लेती है नियति, जो चंद लमहों का सुख देने आते रहे है । 1953 में दो बच्चे मरे तब मैं कुछ क्षणों के लिए मूर्छित हो गया । उसे मैने अपना अपराध मान लिया क्योंकि मेरे पिता हैजा का नाम सुनकर ही इतने भयभीत हो गये कि उन्होंने मुझे सूचित करने की आवश्यकता नहीं समझी । मैं एक घंटे के अंदर डॉ. और सलाइन लगाने वाले किसी भी कंपाउंडर को लिये, दिये गांव आ गया होता । पर वे धर्मभीरु, बरम के भय से आतंकित एक ऐसे व्यक्ति थे कि किसी भी समस्या पर निर्णय लेने में असमर्थ थे । तब मैं चौबीस साल का युवक था । जाहिर है कि मैं अगर गांव दौड़ता तो, या गांव से टैक्सी में बिठाकर मरीजों को बनारस ले आया होता तो पता नहीं मेरे बच्चे बचते या नहीं पर मुझे यह मानसिक अपराध भावना से क्लेश तो न होता कि मैने इन्हें बचाने के लिए जो कुछ भी संभव था सब कुछ कर चुका । मैं इस दारुण आघात को खोखली और निराधार नियति के नाम रजिस्टरी करने वाला व्यक्ति नहीं हूं ।

रात के बारह बजे होंगे । जल में डूबी तौलिया शरीर के ताप और वातावरण के

ताप से कब तक लड़ती रहेगी । मैंने करवट बदली, तभी दरवाजे पर खट्-खट् की आवाज आयी । मैंने जब दरवाजा खोला तो मेरे सामने आकर्षक चेहरे वाला एक विदेशी तरुण खड़ा था ।

"आर यू प्रोफेसर सिंह ? माई गार्जियन अनुवेन हैज़ सेंट मी ।

"प्लीज कम इन ।"

मुझे पूछने का अवसर दिये बगैर वह तरुण बोला, मैं आस्ट्रेलियन हूं । मैं आरोविल में रहता हूं । मैंने कुल छः व्यक्तियों को चुना है । इसीलिए कि अगर किसी का ब्लड दूषित हो तो भी चार की जगह पांच तो ठीक रहेंगे ही ।" मुसकराते हुए मेरे आस्ट्रेलिटन बंधु ने कहा,—" यह खरबूजा आपके लिए अनुवेन ने भेजा है मदर की ब्लेसिंग के साथ । मैं बातें करता रहा उनसे । सारी स्थितियां मेरे भीतर कल्पवल्लियों का निर्माण कर रही थीं । श्री मां, एम. पी. पंडित, नलिनीकांत, नीरदवरण, रवींद्र जी, केशवमूर्ति और सबसे अलग अनुदी । मैं एक-एक के बारे में पूछता रहा, कुशल-क्षेम जानने की उत्सुकता ने मेरे और आगत तरुण के बीच एक अजीब तरह के सेतु का निर्माण कर दिया ।

तभी विजयी आये "गुरुजी " उन्होंने कहा "मंजु के लिए जिस ग्रुप के खून को रेयर कहकर कई दिनों से ताने देते रहे, डरवाते रहे डॉ. पांडेय, और उन्होंने यहां तक कह दिया कि मैं एक महीने तक ट्रांसप्लांट नहीं करूंगा, जब तक ब्लड का प्रबंध नहीं होता । गुरुजी, आदरणीया अनुवेन तो ममता की खान हैं । एक-एक बातें पूछती रहीं । मंजु के बारे में जब बात चली । तो उन्होंने कहा मैंने तो एक चिट्ठी भी लिखी बनारस के पते पर कि यहां आश्रम में केवल डाइट बदलकर एक महीने में किडनी को सक्रिय बनाने वाले हैं एक साधक । पर आपके गुरु तो सिंह हैं। वे धारा के साथ नहीं, भेड़ियाधंसान से अलग धारा के प्रतिकूल तैरते हैं, यही उनके मेरुदंड की शक्ति है और यही उनकी सफलता का कारण भी। श्री मां की यह ब्लेसिंग दे दीजियेगा उन्हें । बिना किसी भौतिक कामना के ललचाने वाली पदोन्नति के बिना किसी के रास्ते का अवरोध बने वे विरोधी शक्तियों से डटकर मुकाबला कर रहे हैं । उनपर मां की छत्रछाया है । कहियेगा कि विश्व की सर्वोच्च शक्ति के वे पुत्र हैं । अभय रहें ।"

"यह सब अनुवेन ने कहा था विजयी ? अनुवेन और रवीन्द्र जी का स्नेह तो मिला है, पर मैं जानता हूं कि वे दोनों भावुक नहीं हैं ।"

"कुछ उनके दर्शन के कारण जगी भावुकता भी हो सकती है पर निराधार नहीं है यह, शब्दावली में फर्क तो हो सकता है गुरुदेव, पर उनकी वार्ता से, आंखों की चमक से मुझे ऐसा ही लगा जो मैंने कहा ।"

प्रति रक्तदाता को एक शतक की दक्षिणा और टैक्सी से आने जाने का व्यय यानी कुल ग्यारह सौ रुपये खर्च करके, मैंने वह बाड़ा तोड़ दिया और डॉ. पांडेय से

कह दिया कि छः बोतलों में केवल एक में आस्ट्रेलियन एंटीजन मिला बाकी सब एकदम शुद्ध हैं, पाडेय जी अब कुछ कृपा करें इस जन पर । सी. एम. सी. से नार्थ आरकाट को जाने वाली सडक पर या कहिए उससे लगी पटरी पर कुष्ट रोगी, भिखारी और जूतों की मरम्मत करने वाले मोचियों की भीड़ लगी रहती थी । बहुत दिनों तक मैं उस पटरी पर जाना-आना बराता रहा अर्थात् बरजता रहा, किंतु एक दिन सैंडल की मरम्मत कराकर जब मैं आगे बढा तो देखा गंदे चिथड़ों और गूदड़ों में ढंका एक भिखारी रंगीन खड़िया से सीमेंटेड पटरी पर एक चित्र बना रहा था और लोग उसे घेर कर उसका चित्रांकन देख रहे थे । मैंने सडक से लगी एक खुरदरी पटरी पर सामान्य खड़िया से क्रूस पर लटके प्रभु यीशु का ऐसा चित्रांकन नहीं देखा । हमारे उत्तर भारत के भिखारी तो कभी भगवान् कृष्ण या राम का भी चित्र नहीं बनाते । मुझे पता नहीं कि इस तमिलियन ने भिखारी होने के बाद चित्रांकन सीखा अथवा वह चित्रकार था और अब भिखारी हो गया है । उसका चित्र पूरा हुआ और उसके चारों तरफ छोटे-छोटे सिक्कों को फेंककर उसकी कला पर लोग अपनी कृपा का प्रदर्शन कर रहे थे । मैं सोचता हूं कि चित्रकार के भीतर क्या कभी वह समझ भी जगेगी कि वह वेल्लौर फोर्ट से प्रेरणा लेकर टीपू की गजब ढाने वाली तलवार की धार के नीचे अंग्रेज सौदागरों के प्रवंचक सेनापतियों की झुकी हुई गर्दनों की भी तस्वीर बनायेगा ? क्या वह कभी आज के हिंदुस्तानी की नंगी तस्वीर नहीं बनायेगा ? क्या सचमुच इस तमिलनाडु में अब भोग-विलास के अतिवाद में मग्न द्रविड नहीं है । जिनका हरप्पा (हड़प्पा) अय्याशी के कारण आक्रांता आर्यों के पहले ही हमले का शिकार हुआ । वह इस तरह के चित्र नहीं बनायेगा । इसलिए नहीं कि हड़प्पा संस्कृति के ह्रास का कारण नहीं जानता बल्कि इसलिए कि यदि वह इस पटरी पर बैठकर ऐसे चित्र बनायेगा तो तमिलनाडु की सरकार इन धनलोलुप सी.एम. सी. को दी जाने वाली सहायता बंद कर देगी । सहायता की वैसे जरूरत भी नहीं है इस मौतघर को, क्योंकि उसके पास दुनिया भर के अय्याशी और कैसिनों-जिंदगी में डूबे, पाप म्यूजिक में कहकहे लगाते, शराब के प्याले में सुंदरियों के नंगे शरीरों को देखकर झूमते ईसाइयों की हजारों उतरनें दान के नाम पर यहां आती रहती है । चाहे नयी तकनीक के रूप में हों, चाहे मशीनों के रूप में । ये सब सामान जो उच्च-मध्य वर्गीय लोगों को ललचाते हैं । यहां भारी मिकदार में आते ही रहते है। इसलिए चित्रकार को जो क्रिश्चियन है, इतनी सहायता काफी है कि वह प्रभु ईशु के चित्र बनाकर पैसा पाये और इकट्ठा लोगों के भीतर अहिंसा के पुजारी के चित्र देखकर उसके प्रति दर्शकों में जिज्ञासा जगाये ताकि सुसमाचार पढने के लिए हिंदी भाषी लोग उन व्यक्तियों की ओर खिंचे जो रंगीन चिकने कवर वाली मनमोहक किताबों को मुफ्त बांटते रहते हैं चारों ओर इस सी. एम सी

में।

मैं बांबे रेस्टोरेंट की ओर जा रहा था । वह भी शर्मा की ही दुकान है जिनके ललित विहार में मैं और पत्नी दोपहर का भोजन साथ-साथ करते थे । शाम को चावल के प्रति थोड़ा वैराग्य होता है मेरे मन में । इसलिए वहां जाता हूं पूड़ी खाने। दो पूड़ी और एक कटोरे खीर । यही है रोज संध्या का भोजन । पत्नी साथ रहती हैं और उन्हें मीठी चीजों से कोई प्रेम नहीं है । वे बांबे रेस्टोरेंट में केवल डोसा, इडली और सांभर लेती हैं । उस दिन मैं अकेले था । बीच रास्ते में एक बहुत बड़ी दवा की दूकान है— स्वस्तिक फार्मेसी । पहले इस नाम से मैं समझता था कि यह उत्तर भारतीय किसी आस्थावान् हिंदू की दुकान होगी । बाद में पता चला कि वह भी क्रिश्चियन की ही दुकान थी । नाम इसलिए स्वस्तिक था कि वह भारत के अधिकतर भाषा-भाषी लोगों को जो ज्यादातर हिंदू होते हैं, अपनी ओर खींच सके ।

मैं थोड़ा आगे बढ़ा था कि एक सफेद कमीज पर काले मखमल की जरीदार बंडी पहने सज्जन से टकरा गया ।

मैंने कहा, क्षमा करियेगा" मैं आगे बढ़ा तो वे तुरंत मेरी दाहिनी ओर आकर बोले, "सेठ, इसमे माफी की क्या बात । तुम कितने दिनों से वेल्लौर आये हो?" उन्होंने पूछा ।

"बस यही तीन महीने हुए कुल ।" मैंने कहा और जल्दी से बढ़ा—

"सर, आप इतना अकेले कैसे रहते हैं ? मेरे ऊपर तरस खाते हुए वे बोले, "यू आर वेरी लोनली । वेरी लोनली । आप इतनी तन्हाई कैसे सहते हैं?"

मैं जानता था कि वह मुझसे अस्तित्ववाद पर वार्तालाप करने नहीं आया है । मैंने हल्के मुसकुराते हुए पूछा "क्यों फ्रेंड, क्या तुम अकेले नहीं हो ? माना कि तुम अकेलापन दूर करने की सेवा के बदले दो एक नेवाले अन्न के और एकाध प्याले शराब के भी पा जाते होगे । पर माई डियर फ्रेंड, यू हैव अप्रोच्ड ए रांग परसन । मैं सेठ नहीं हूं । तुम लोग हर धोती वाले को सेठ समझ लेते हो, यही गड़बड़ी है वेल्लौर के माहौल की । रही बात 'लोनली' होने की तो तुम्हारे पास भी वह दवा नहीं है"

"एक्सक्यूज मी सर, क्षमा करिए, इटस नाट कास्टली?" वह मेरी आंखों में मुसकुराकर झांकते हुए कहा "सर, आप पहली बार देख पायेंगे कि मालाबारी शोखी, तमिलियन नारी के बदन का कसाव, और एंग्लोइंडियन की अदाएं क्या होती हैं ?"

"आप बहुत अच्छी उर्दू बोलते हैं जानेमन । मैं अक्सर रहमान मियां के यहां फलों का रस लेता हूं और पान खाता हूं । दोस्त, मैं एक बूढ़ा आदमी हूं । तुम इस

तरह परेशान क्यों कर रहे हो ? सही आदमी खोजो । बेकार अपना वक्त जाया मत करो ।"

मैंने कहा और गिरह काटकर अलग हुआ तो वह बायें आकर खड़ा हो गया, "आप अपने को बूढ़ा समझते है सर? आप " वह ठठाकर हंसा और तालियां पीटते हुए बोला "आप बहुत भोला है । सर आपका रोगी किस वार्ड में भरती है?"

"नेफ्रोलाजी में ।"

"यू मीन किडनी ट्रांसप्लांट ?"

"यस ।"

"सर, क्या आप समझते है कि अगले आठ नौ महीनों में आप ऐसे ही चलते-फिरते रहेंगे । रास्ता टेढ़ा है सर । आप तनाव छोड़िए हमारे पर । हम ठीक करेंगे उसे ।"

"ह्वाट डु यू मीन ? तुम कहना क्या चाहते हो ?

"हम तो यही कहेंगे सर कि आप सोचना छोड़ दीजिए । घरबार छोड़कर यहां कब तक अकेले झेलते रहेंगे ? अपना ख्याल करिए । अभी तो ट्रांसप्लांट होगा, फिर छह महीने तक जाने क्या-क्या देखना पड़ेगा आपको ।"

"अच्छा, भागो । गेट आउट..." मैं चिल्लाया और हांफने लगा । "आप चीखते क्यों हैं? डोंट क्रिएट 'फस' फार नथिंग" वह जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाता चला गया ।

"ह्वाइ दिस फस फार नथिंग ।" मैं बाबे रेस्टोरेंट से खाना खाकर अनेक्से में अपने कमरे में लेट गया, ह्वाइ दिस फस फार नथिंग । "मैं मुसकराया, हां इतनी छोटी बात के लिए इतनी चिल्ल-पों क्यों ? मैं अंधेरे में तकिये के सहारे लेटा पता नहीं काली दीवार पर क्या देख रहा था—वाह रे भोलेनाथ ! आप बहुत भोले हैं । मूर्ख, तू नहीं जानता । मैं मुरगुन हूं । कन्या राशि में उत्पन्न हस्तनक्षत्र का (षडानन) नाम है मेरा । मैं तेरे जैसे बदतमीज को चाहता तो वहीं दो हाथ देता।

"पर क्या भोले नाथ की तरह अपनी चिता में सुलगती गृहस्थी को ढो सकेगा? बोल, ढो सकेगा ?"

> तोही कौन बुधि देल हो उमता
> ललित धाम तजि बसयि मसाने
> अमिय नहिं पियत करयि विषपाने
> पलग न सुतयि करयि भू-सयाने

मनइ विदापति विपरित काजे
अपने भिखारि, सेवक दिय राजे ।

वाह भोलेनाथ, गुरु तुम्हारा भी जवाब नहीं । किसने ऐसी मति दे दी तुम्हें कि सुंदर घर छोड़कर मुर्दघट्टी में बसते हो । अमृत नहीं पीते, गरल पीते हो, वाह रे 'उमता' कितना उन्मत्त है तू, नंगी जमीन पर सोता है, पलंग का तिरस्कार कर देता है । खुद भिखारी है और भक्तों को राज-पाट प्रदान करता है।

वह बहुत अंतर्मुख व्यक्ति था, वह मंजु के पास कभी-कभी 'क्यु वन वेस्ट' वाले वार्ड में भी आता था और बाद में कई बार यूरोलाजी वाले में भी दिखा । पता नहीं उसे किसने बताया कि मंजु यूरोलाजी वार्ड में आ गयी है । वह सीधे वहां पहुंचा। "सर, बेबी का 12 को ऑरपेशन है न ?"

"सर !". उस स्तुतिगायक ने कहा "मैं प्रतिदिन आपकी पुत्री की स्वास्थ्य-कामना के लिए प्रभु यीशु से प्रार्थना करता हूं ।"

उस व्यक्ति का चेहरा ऐसा मासूम था कि मैंने चाहकर भी उसे धोखेबाज नहीं माना । वह बिना कहे दोनों हथेलियों को अंजलि की तरह बनाकर कोई मंत्र गुनगुनाता रहा और फिर मंजु के शिर पर हाथ रखकर बोला, "प्रभु, यदि आप होते तो मेरा भाई नहीं मरता और मैं जानती हूं कि अब भी आप जो कुछ ईश्वर से मांगेगे, ईश्वर आप को देगा । चूंकि मारथा का विश्वास अटल और अविचल था अतः यीशु ने कहा, "तुम्हारा भाई फिर जी उठेगा ।" मारथा ने कहा मैं जानती हूं गुरुदेव कि अंतिम दिन के पुनरुत्थान में वह फिर जीवित होगा ।" और तब उस स्तुतिगायक ने मुझसे पूछा, इस असंदिग्ध भक्ति को देखकर जानते हैं सर, कि प्रभु ने क्या कहा ?"

"हां, मैं जानता हूं गायक !" प्रभु ने कहा था—पुनरुत्थान और जीवन मैं ही हूं। जो मुझ पर विश्वास करता है वह मर भी जाय तो जीयेगा और जो मुझ में जीता है वह कभी नहीं मरता है ।"

मैंने गायक को पांच रुपये का नोट दिया । मैंने पूछा, "नेफ्रोलाजी के वाहरी वइठके में जो प्रभु यीशु का चित्र है, क्या उसकी एक प्रति दिला सकते हो। ?"

वह अचंभे से मेरी ओर देखने लगा, "आप आप क्या ईसाई हैं सर ? ।" "नहीं वंधु, मैं कुछ नहीं हूं । न हिंदू, न मुसलमान, न सिक्ख, न ईसाई । मैं खुद चलती फिरती मशीन हूं । छोड़ो, बात यह है गायक कि जब मैं वाराणसी में कामा-कोठी में रहता था, मेरे पास कुल एक जोड़े चित्र लटकते थे— एक तो तिलक के गीता रहस्य वाले चित्र की प्रतिकृति थी, यानी ॐ में बना भगवान् कृष्ण का चित्र पर वृहद् । लोग कहते थे कि वह जर्मनी में छपा था । और दूसरा चित्र था प्रभु यीशु

का । इसे किसी हिंदुस्तानी ने पहली बार चित्र में अंकित किया था । स्याह स्वर्णिम चेहरा और सर पर काँटों का ताज था, जिसके कारण चेहरा खून की लकटों में रंगा था । दोनों का अंत इस तरह हुआ जिसे चाहो तो एक शब्द में कह सकते हो—अमानवीय । देखो ना, तुमने अभी-अभी जो सरमन सुनाया। उसी स्थिति में भगवान कृष्ण क्या कहते हैं :

> अविनाशितद्विद्धि येन सर्वमिद ततम्
> विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति

वे कहते हैं गायक कि "मृत्यु से अविच्छिन्न जिसका स्वभाव है, वह अविनाशी है क्योंकि मुझ अव्यय का वह अंश है जो कभी नहीं मरता । वह अमर हो जाता है।"

क्यों बंधु, प्रभु यीशु के अवतरण के चार हजार वर्ष पहले जो कहा गया और चार हजार वर्ष बाद उन्होंने जो कहा, वह अलग-अलग नहीं है । पर गायक, मैंने उसे कभी महसूस नहीं किया, जिस दिन उसके होने का साक्षात् भोगा हुआ प्रमाण मिलेगा तब मैं उसे 'समथिंग' कहना छोड़ दूंगा । मैं उसे सर्वनियंता ईश्वर मान लूंगा ।"

वह एक टक मेरी आंखों की ओर देखता रहा, "एक बात पूछूं सर ।?" उसमें अनुमति मांगने की क्या जरूरत थी गायक, तुम्हें जो पूछना हो पूछो," मैंने कहा।

"यह वक्र भौहें क्या आपको खानदान से रिक्थ के रूप में मिली, या आपको सीधे प्राप्त हुई ।"

"आई कुड नाट अंडरस्टैंड । आप क्या जानना चाहते हैं स्तुतिगायक, जरा स्पष्ट कहें ।"

"सर, मेरे फादर कहा करते थे कि जिस आदमी की भौहें मिहराब की तरह होती हैं, वह अध्यात्म की दृष्टि से बहुत ऊंचा होता है । आप अगर क्राइस्ट, बुद्ध, राम-कृष्ण, विवेकानन्द, सेंटपाल, श्री आरोविंदो आदि की भौहें देखेंगे तो आप जान जायेंगे कि मिहराबदार भौंहों का मतलब क्या है ।"

"ओह, आप तो सामुद्रिक बांच रहे हैं श्रीमन् । मेरी भौंहों की तरह का मिहराब आपको इस बीमार लड़की में दिखता है या नहीं ? ऐसे ही भौहें मेरे पुत्र की हैं । और एक गोपनीय बात बताऊं आपको ?"

"हां, सर, जरूर बताइए ।"

"तो जरा पास आओ, इस तरह की भौहों वालों को ऊटकमंड के कैट परम स्वार्थी और प्रवंचक बताया गया है । हैव यू रेड द कैटलाग

"नो सर ।"

"सारी, देन दिस इज योर मिसफारचून, अभाग्य है तुम्हारा कि तुमनें वह कैटलाग नहीं पढ़ा ।"

"आइ विश यू गुडलक, चाइल्ड !" उसने कहा और मंजु के कपोल पर एक थपकी लगाकर चला गया ।

वह लगभग बाईस-तेईस साल की युवती थी । आपसे कह रहा हूं, वह भी शायद जो लिख रहा हूं उसे कभी न कभी पढ़े या सुने तो मुझे फिर डांटेगी, "नो, नो प्लीज, डोंट काल मी बेबी । आप मुझे बच्ची मत कहिए ।" और उसका चेहरा लाल हो गया था । वह अनेक्से में चौथे तल्ले पर किसी कमरे में रहती थी, वह बहुत प्यारी युवती थी । वह हर कदम इस तरह से रखती थी मानो कराटे का अभ्यास कर रही हो । गजब की स्फूर्ति थी । बहुत शोख और चंचल लगती थी । वह अक्सर नहा धोकर अस्पताल जाती थी । और अक्सर हम दोनों अपरिचित की तरह लिफ्ट में मिलते थे और गेट तक साथ-साथ मौन चलते हुए एक-दूसरे से अलग हो जाते थे । मैं तो गेट से सटी दुकान पर बंद और चाय का नाश्ता करता था । वह पता नहीं क्या करती थी ।

एक दिन मौन बहुत अखर रहा होगा उसे, पूछ बैठी, "आर यू द फादर आफ मंजुश्री"

"यस बेबी, मैं मंजुश्री का पिता हूं ।"

"प्लीज मुझे बेबी मत कहिए सर !"

"अच्छा मिसेज रणसिंहे, जोजेफ कैसा है अब ?"

वह घबरा गयी, "तुम रणसिंहे को जानता सर ?"

"बिल्कुल बेबी, मैं उसे खूब जानता हूं । तुम बेबी कहने से नाराज क्यों होती हो । मैं सोचता हूं कि तुम्हारी उम्र मंजुश्री के बराबर ही होगी या हो सकता है कि तुम उससे दो-एक साल बड़ी होगी । मैं चौवन वर्ष का 'ओल्ड मैन' हूं, बूढ़ा आदमी।"

वह खिलखिलाकर हंसी, "इसलिए आप हमको बेबी कहता सर ?

"हां तुमको और मंजुश्री को क्या मैं माइ डीयर 'गर्ल' कहूं ? जैसे अमेरिकी बोलते है?"

वह खिलखिलाकर हंसी, "सर, आपने तो इस तरह "गार्ल" कहा कि मुझे एक अमेरिकी बुड्ढे की याद आ गयी । सुना कि बहुत पहले सेकेंड वर्ल्ड वार में यहां आया और एक सिंहली लड़की से शादी करके यहीं बस गया । उसकी उम्र चौवन साल की थी और उसकी पत्नी मारिया की उम्र बीस साल की थी । मारिया ने

उससे शादी क्यों की सर ? जानते हैं ?"

"नहीं, जानता तो नहीं, पर उस अमेरिकी के पास ढेर सारे डालर रहे होंगे

"बिल्कुल कर्रेक्ट ?" वह हंसी, "सर, अगर मैं मान लूं कि आपके पास ढेर सारे डालर्स हैं तो ?"

"देखो रोजी, मैं उस अमेरिकी की तरह नहीं हूं। हो भी नहीं सकता। इसलिए नहीं कि मेरे पास ढेर सारे अमेरिकी डालर्स नहीं हैं, बल्कि इसलिए कि मैं वैसे देश का आदमी नहीं हूं, जिसकी न कोई कल्चर है, न संस्कृति। वहां कभी बुद्ध या क्राइस्ट नहीं जन्मते। रोजी, बुद्ध ने महज इसलिए गृह-त्याग नहीं किया कि यह दुनिया दुःखों से भरी है। इससे मोह का मतलब है बार-बार 'बर्थ साइकिल' या जन्मचक्र या भवचक्र में घूमना। उन्होंने अपने लिए सिर्फ अपनी मुक्ति के लिए तपस्या नहीं की बल्कि उस मानवता को देख रहे थे जो आदमी को 'लक्जरी' में अय्याशी से जीने के लिए ललचा रही थी और यह लालच इतनी बेरहम होती जाती है रोजी कि इसके लिए एकदम मजलूम और दुखियारे गरीबों को लूटने के अलावा कोई चारा नहीं होता। अमेरिकी उसी अय्याशी के शिकार हैं जो हर सुंदर और गरीब लड़की को 'मारिया' बनने पर मजबूर करते हैं। तुम बहुत गर्मजोशी के साथ मुझ पर व्यंग्य कर रही हो और वह भी इस मूर्खता के साथ कि धनी लोगों पर जाल फेंकना किसी भी युवती के जीवन का मजेदार पहलू है। तुम एक क्रिश्चियन सिंहली औरत हो इसलिए तुम बुद्ध को ज्यादा करीब से जानती होगी, यही सोचा था मैंने इसीलिए तुम्हें और मंजुश्री को एक जैसा माना। मैं उस देश की उपज हूं रोजी, जिसका इतिहास पांच हजार साल पुराना है। मेरे पास डालर्स नहीं हैं। मंजुश्री को यहां इसलिए नहीं ले आया कि मैं यहां या डालर्स वाले अमेरिकी अस्पताल में अपने धन का प्रदर्शन करूं। मुझे पता नहीं रोजी कि तुम जोजेफ से किसलिए जुड़ी। इसलिए कि उसके पास ढेर सारे डालर्स थे या तुम उससे मुहब्बत करती थी। अगर डालर्स के कारण जुड़ी होगी तो उसकी मृत्यु पर हंसोगी, और अगर मुहब्बत के कारण, स्नेह के कारण जुड़ी होगी तो तुम्हें आग के भीतर चलकर अपनी मुहब्बत की शिनाख्त करानी होगी। गुड बाई माइ बेबी।"

"आप नाराज हो गये सर!" वह बहुत उदास हो गयी।

"नहीं रोजी, मैं अब नाराज नहीं होता, पहले होता था। तुम यह मत समझ लेना कि मैंने तुम्हारे शरीर को नहीं देखा। देखा रोजी और उसकी प्रशंसा करता हूं। सच बेबी, तुम्हें 'किस' करने के लिए, तुम्हें अपनी भुजाओं में बांध लेने के लिए तेज ललक उठती थी। तुम बहुत स्वीट, चुंबन लेने योग्य और शोख हो। इस तरह की स्वस्थ, खुशमिजाज खूबसूरती को अपना बनाने के लिए मेरे भीतर भी समुद्री तूफान उठते हैं, तुम्हें दो महीने से देख रहा हूं, तुम जापानी गुड़िया की

तरह खींचती हो मेरे बच्चे मन को। तुम वह खिलौना हो, जिससे खिलवाड़ करने में जाने कितनी खुशी मिलेगी, पर माइ डियर गर्ल, मैं उस आग से खूब वाकिफ हूं। इसे मेरे पूर्वज असद मियां ने कहा था—इश्क वह आतिश है असद जो लगाये न लगे और बुझाये न बने । बी हैपी माइ डियर बेबी ।"

रोजी की आंखें छलछला आयी । "मैंने अनजाने गलती कर दी अंकल, आप मुझे माफ कर दीजिए ।"

"कोई बात नहीं रोजी, इधर आओ । वह मेरे पास आयी । मैंने उसके ललाट को चूमा, "गुड बाई रोजी, बी पीसफुल एंड हैपी।"

मैं मंजु से मिलकर आ रहा था । मुझे रोजी ने कल ही बताया था कि आज जोजेफ का ट्रांसप्लांट होगा । उस वक्त करीब एक बज रहे थे । मैं आर्टिफिशल किडनी वार्ड से आपरेशन थियेटर के पास पहुंचा ! वहां रोजी नहीं थी । शायद ट्रांसप्लांट हो चुका हो । मैं मुड़ा । सी.एन.सी. के गेट की ओर चला ही था कि रोजी जोर-जोर से रोती, चिल्लाती हुई भागी आ रही थी । वह बिल्कुल बदहवाश थी ।

"क्या हुआ, रोजी ?"

शायद उसने सुना नहीं, मेरे पास से वह जब निकलने लगी तो मैंने उसकी कलाई पकड़ ली ।

"रोजी, क्या हुआ, क्या हुआ, रोजी ?"

उसने मेरी ओर देखा और लिपट गयी, "अंकल, नई किडनी को बॉडी ने टोटली रिजेक्ट कर दिया । वह बेहोश है ।" मैंने उसकी कलाई छोड़ दी, "घबराओ मत रोजी, यह तो होता रहता है । बी करेजियस माइ चाइल्ड, साहस से काम लो ।"

·

तीन-चार दिनों बाद जब मैं अनेक्से की लिफ्ट से उतर रहा था, रोजी दिख गयी । वह बहुत मौन थी । मुझे देखकर उसने गर्दन झुका ली । उसका मुख उसके नाम ही की तरह गुलाब जैसा लग रहा था । आज उसने अपनी नील आंखों को कमल पांखुरी जैसी पलकों से ढंक लिया था । लिफ्ट भरी हुई थी और वह बिना मेरी ओर देखे चुपचाप चली गयी ।

अचानक मैं सौंदर्य लहरी का अड़सठवां श्लोक गुनगुनाने लगा । उसे हिंदी में बांध पाना तो मुश्किल है फिर भी कोशिश कर रहा हूं ।

मुख प्रफुल्लित कमल जैसा
बहुत सुंदर हाय यह ग्रीवा तुम्हारी

आलिंगनोत्सुक परम शिव के
कंटकित भुज-बंध को यह
नाल जैसी मोहती है
और शिव के अंग के अति नीलवर्णी
अगरु से कुछ म्लान होती
मोतियों की श्वेत माला
पंकमित्र मृणाल जैसी सोहती है ।

दोनों भुजाओं को मोहित करने वाली अद्भुत सुघड़ ग्रीवा । रोमांच से कंटीले कमल नाल की तरह जिसे उन्होंने तुम्हारी गर्दन में डाल रक्खी है नहीं, यह सब उमा के लिए कहा गया है, तो क्या रोज़ी उमा नहीं है और तब तुम ? तुम परम शिव समझते हो अपने को । मैं पागलों जैसी तालियां बजाकर रोज़ी के सौंदर्य पर कृतज्ञता की वर्षा कर देता हूं । मुझे कुछ नहीं चाहिए, वह खुश रहे यही मेरी कामना है ।

शाम के तीन बज रहे हैं । आराम कर लेने के बाद मैं अपने कमरे को लाक करके लिफ्ट से उतरा तो नीचे रोज़ी खड़ी थी । सारा सामान बंधा हुआ था । वह चली, और अनेक्से के परिचारक उसके सामान को बाहर खड़ी कार की डिक्की में रख रहे थे ।

"क्यों रोज़ी, कहीं जा रही क्या ?" मैंने पूछा ।

"आप तो बहुत बड़े दार्शनिक हैं सर, कल जोजेफ की मृत्यु हो गयी । नफ़ोलाजी के कई लोग थे । सब उसके फ्यूनरल में शामिल थे । जिसके लिए आना 'मस्ट' था वही नहीं आया यानी आप । थैंक यू अंकल !"

मैंने आत्मघाती पागल की तरह अपनी सफाई देने के लिए कार का पीछा किया, पर वह अपनी जिद पर अड़ी रही और वह बिना रोके कार चलती गयी।

रोज़ी का व्यंग्य ठीक था । उसके उलाहने अपनी जगह सही थे । पर वह नहीं जानती थी कि जिस अंकल पर व्यंग्य किया है, वह मौत को इतनी बार देख चुका है कि मृत देह का फ्यूनरल या अंतिम संस्कार केवल एक दिखावा लगता है । यानी रस्मअदायगी ।

मैंने बहुत बाद में यह जाना कि मृत्यु का सबसे बड़ा परिणाम मानसिक धक्का नहीं होता । मौत की अनिवार्यता को स्वीकार कर हमें तो जश्न मनाना चाहिए । मेरी बातों को सुनकर रोज़ी होती तो कुछ न कुछ और व्यंग्य करती ।

मैंने अपने धर्म की बहुत-सी उपनिषदों को पढ़ा है । कठोपनिषद की चर्चा कर चुका हूं पहले । एक बार मैं गायकवाड़ केंद्रीय पुस्तकालय में 'टेन्टा:'

(आध्यात्मिक) की किताबें उलट-पुलट रहा था तो मेरे हाथ लगी "द टेकनीक आफ आस्ट्रल प्रोजेक्शन" यानी वह सही पद्धति जो मृत्यु के बात पराभौतिक शरीर को, कारण शरीर को किस तरह नियंत्रित करना चाहिए, बताती है । लेखक राबर्ट क्रुक वेल कहता है, "सारी सृष्टि में एक ही चेतना प्रवाहित है । इस बात का बोध यदि किया जाय कि तुम उसी पराचैतन्य के अंश हो तो यह सब करने का केवल एक रास्ता है यानी प्रेम । पृथ्वी के जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य है ईश्वर का उद्घाटन। प्रेम का अर्थ होता है, देना, सोचना । अपने से अलग, अपनी अंतरात्मा से अलग जो कुछ भी है उसकी एक चेतन धारा बाहर के सभी पदार्थों में शाश्वत रूप में प्रवाहित होती रहती है, जो एक से दूसरे को जोड़ती है । यदि हम दूसरों के प्रति प्रेम का बोध करते हैं तो उस धारा से जुड़ जाते हैं । यह सब यहां होता है । मृत्यु के बाद प्रेम एक अनुभूत वस्तु है जिसे कोई बिना प्रेम के जान भी नहीं सकता। बिना प्रेम के सभी आध्यात्मिक रूप से मृत होते जाते हैं । प्रेम के साथ हो तो तुम सृजन की दिव्य शक्ति के 'पार्टनर' हो जाते हो ।"

यह सब चीजें उन्हें आश्चर्यकारी लगेंगी जहां आत्मा और परमात्मा की समवेत रासलीला को देखने का यत्न आज तक नहीं हुआ । हमारे देश में सिर्फ कामोन्नयन (सेक्स सब्लिमेशन) सम्पूर्ण ज्ञान ही नहीं रहा बल्कि उसे अपने जीवन में उतारकर दिखा देने वाली विभूतियां अवतरित हुई हैं । 'कृष्णा कांससनेस' आज विश्वव्यापी आंदोलन का रूप ले चुका है । भक्ति वेदान्त प्रभुपाद के शिष्यों को अब रूस में अस्थायी रूप से बसने और अपनी पूजा-अर्चा करने की आज्ञा भी मिल गयी है । यहीं नहीं श्रीमद्भगवत गीता की पांच हजार प्रतियों को भारत से मंगाने की प्रार्थना भी स्वीकृत हो गयी है ।

इस काम या वासना के गंदे ईख-रस को तपा-तपाकर सितोपल यानी मिश्री बनाने की विद्या चैतन्य महाप्रभु ने करके दिखा दिया । यह सब ओलिवर वेंडेल होम्स की उपर्युक्त पुस्तक से भी बहुत पहले जाना जा चुका है । महाभारत में स्वयं भगवान कृष्ण अपने को धर्माविरुद्ध कामोस्मि भरतर्षभः — स्वयं कृष्ण काम हैं । काम यानी अप्राकृत मदन जो मदन मोहन कहा जाता है । संपूर्ण विश्व को मदन मोहित करता है पर प्रेम के सम्पूर्ण घन-विग्रह भगवान कृष्ण तो काम को भी, मदन को भी मोह लेते हैं । इसीलिए वे मदन मोहन हैं ।

अगर रोजी रुकती तो मैं बताता कि मैं प्रेम से घृणा नहीं करता बेबी, वासना से करता हूं । तुम हर रविवार को गिरजाघर में अपनी बाइबिल लेकर स्तुति-गायक-सद्धर्म-पिता के साथ-साथ कुछ अंश कोई विशिष्ट अंश दुहराती होगी, तल्लीन होकर गाती होगी और फिर ओलिवर वेंडेल होम्स तो ईसाई ही हैं बेबी । उनकी मशहूर कविता 'ओ मेरी आत्मा' तुमने देखी तो होगी—

बनाओ एक राजमहल ओ मेरी आत्म
जैसे-जैसे ऋतुएं बदलती हैं
अपने अतीत के रोशनी रहित
भुइघरे में झांको मत
स्वर्ग के लिए ललचो मत
और भी विस्तार करो मन का
प्रेम करो, जन से, जग से
जब तक असीम औ अनंत बन जाते नहीं
फेंक दो अपने जीर्ण कचुक को
उतार कर
जिंदगी के समुद्र में ।

ईश्वर-पुत्र ने ही तो प्रेम करना भी सिखाया तुम ईसाइयों को । हमारा कृष्ण तो ईश्वर-पुत्र नहीं है बेबी । कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् । वह तो खुद ईश्वर ही था। उन्होंने तुम्हारे ईश्वर के पुत्र से पांच हजार वर्ष पहले ही प्रेम की शक्ति, लिबिडो की अंधयात्रा की सीमा देख लिया था बेबी, क्योंकि जिसे आज 'काम' कहा जा रहा है 'लिबिडो' कह रहा है पश्चिम का मनोवैज्ञानिक, उसे ही गीता भक्ति कहती थी। लिबिडो, डीवोशन, प्रेयर्स ये सब भक्ति नहीं है बेबी, भक्ति है बिना वासना के प्रेमी और प्रिया के अंतकरणत. का एक-दूसरे में पिघलकर विलीन हो जाना । इसे हम समर्पण मात्र नहीं, आनंद सिंधु में सब कुछ के विसर्जन की रीति कहते हैं । हमारा आत्म-विसर्जन थोड़ा अलग है । इसलिए हिंदू अपनी व्यक्ति-आत्मा को पतित नहीं मानता । मानता तो बहुत बडी भूल कहलाती । हम न तो आत्म को परमात्म से अलग मानते हैं न तो अपनी आत्मा को पाप के भय से मुक्त होने के लिए 'कन्फेशन' यानी 'पाप स्वीकृति' को बहुत बड़ी न्यामत मानते है। यह तो प्रियतम में प्रिय के विलीन होने की बेला है । क्योंकि दोनों में अज्ञान के कारण अलगाव आ रहा है । तत्व के कारण नहीं । इसका मतलब यह मत समझना रोज़ी, कि मैं चैतन्य मार्ग का अंध समर्थन कर रहा हूं । नहीं बेबी, अंध तमस की तनावों भरी दुनिया में विरह पीडित होकर गिर पड़ना, पराचैतन्य से जुडकर विह्वल होकर नाचना, चैतन्य के लिए तो ठीक था । पर आज के भावुक यदि उनका अंधानुसरण करेंगे तो संभव है किसी गलत 'ओपेनिंग ऑफ द माइंड' यानी मस्तिष्क के अवाधित रास्ते के खुल जाने से सदा के लिए विक्षिप्त हो जायं।

गुड बाइ रोजी
गुड बाइ रोजी ।

13

फीयर नाट आइ एम विद यू ।

"डरो मत मैं तुम्हारे साथ हूं ।" ऑपरेशन थिएटर के द्वार पर लिखा था । वहां काफी भीड़ थी। उत्सुकता में बैठे लोगों के बीच एक खाली जगह देखकर बैठ गया । सिर्फ एक बार प्रार्थना की है, उस इच्छाशक्ति से कि वह हस्तक्षेप करे । कामा कोठी में रहता था । पत्नी के बारे में पहले ही कह चुका हूं जब तक स्थिति उनके हाथ से निकल नहीं जाती, झेलती रहती है सब कुछ ।

मैं वेंच पर बैठा था । पर मन तो मनाने से भी मानता नहीं । "देवि योगमाया" मैंने मुसलमानी अंदाज में मक्के की ओर नही विंध्याचल की ओर आंखें केंद्रित कीं । "मां, अगर कुछ भी पुण्य शेष हो, जो होगा नहीं, तो भी रिक्त हस्त मांग रहा हूं तुझसे—मंजु को बचा लो, बचालो मां !" मैं अपने को हमेशा भरमाता रहा हूं शायद । शाक्त, भैरव, कापालिकों के तामसिक आचरण से घृणा के बीच मैं वामाचारी नही, समयाचारी की तरह समूचे वाममार्गी कूड़े और कीड़ों को ठोकर के नीचे कुचल देनेवाले अक्षौम्य भैरव के रूप में खो जाता रहा हूं । अटल विश्वास था मेरा कि मैं मुर्दे की पीठ पर बैठकर श्मशान काली की आराधना को निकृष्ट आचरण मानता हूं । मैं यह मिशन लेकर आया हूं कि इन गंदे वासना भरे पिलुवों को जूते से रगड़ दूं । मैंने अपने 'दक्षिणेश्वर ने कहा' शीर्षक निवंधों में यह पहले ही लिख चुका हूं कि विश्व भर की मातृ देवताएं कैसे-कैसे विकसित हुई। कहीं वह आइसिस है, कहीं वह ईश्वरी है । दक्षिणेश्वर ने मुझे सबके रूप दिखाये है । अगर मातृपूजा में मन रमता है तो अबतक की सर्वोत्तम उपलब्धि को क्यों नहीं स्वीकार करते, मैं राजराजेश्वरी ललितांबा का उपासक था । शायद यह भी उन्माद था, अहंमन्यता थी, मैं न तो श्रीचक्र की पूजा करता था, न तो त्रिपुरोपनिषद् का पाठ करता था, न तो षोडशी, त्रिपुरसुन्दरी, मणिद्वीप निवासिनी का स्थूल ढंग से षोडषो पचार कर्म कांड और पूजा करता, न तो चारपाई से उठते ही पृथ्वी पर पैर टेकते

ही पृथ्वी के माहात्म्य का ध्यान करता हूं । न जप, न तप, न पूजा, न प्रणिपात । कुछ भी तो नहीं करता मैं । मैं तो सिर्फ सीमातीत 'कॉस्मिक पावर' की एक अणु बराबर ऊर्जा को ग्रहण करने का प्रयत्न जरूर करता हूं । उसी ऊर्जा को सबल करके मैंने पूरे आत्मबल के साथ कहा, 'मेरी भी शिवा, मायाकार गुहा में खुली हुई इन हथेलियों को थाम लो मां । मैं न शिवकी पत्नी का लोलुप हूं, न तो जगत् स्वामी बनने की कामना है । पर तुम्हारे पाणिग्रहण का तो फल ही है असंभव को संभव करना ।"
वह शिवा थी मैं शिव था, इसी भाव-भूमि पर मैंने शिवानी के सीने में लिखा दिया था—"देवी : मेरी प्राण वल्लभा"

मुझे लगा था, निहायत भ्रम या कल्पना कह लीजिए इसी पर मुझे लगा कि विद्युत की तरह चमकती एक स्वर्णरेखा बंगलौर के अस्पताल के ऑपरेशन थियेटर पर उतर गयी है । ठीक चार घंटे बाद स्ट्रेचर ट्रॉली पर लेटी मंजु कह रही थी, "बहुत गर्मी है डॉक्टर साहब, बहुत प्यास लगी है ।"

उसके यूरिनरी यानी मूत्रांग से जुड़े ट्यूब से पेशाब बोतल में स्वाभाविक ढंग से गिर रही थी ।

तभी डॉक्टर पांडेय बाहर आये, "बधाई डॉ. सिंह, शी इज़ परफेक्ट ऑलराइट।" वे चले गये ।

मैं पुन. उसी बेंच के पास आया और बैठ गया ।

"साथ नाहीं का ?" पत्नी ने पूछा, नरेंदर कहत रहल ह कि बहुत बढ़िया काम करत हो किडनी ।"

"हां, ठीक ही है । जा तू सोय जा, हमें भूख ना है आज ।"

"आप क त कुछ बतिये अइसन होवे कि बुझात नाहीं । अब किडनी बढ़िया काम करत हौ त डेढ़ साल लगवले के बढ़िया फल मिलल, मंजु बच गइली, त ए खुशी के मौका पर उपास काहे होत हौ ।"

"हम जात हई । दू टो पाव रोटी के टुकड़ा पर मक्खन लगा के खाइके आ दूध पी लेब, जा तू सोय ।

अकेले कमरे में रखा गया है । हम जरा-सा पैर भी नहीं हिला सकते । लेटे-लेटे समझ में नहीं आ रहा है क्या करें तो चिट्ठी लिख रहें हैं । इस समय हमारा यही काम है कि चिट्ठी लिख-लिखकर सिस्टर को देते हैं तो पापा, भइया को ले जाकर दे देती हैं । अभी इस अकेले कमरे में हमको 15 दिन रहना है । इतने दिन से रोज़ सोचते थे कि तुमको चिट्ठी लिखें, मगर समझ में ही नहीं आता था कि क्या लिखें। बनारस का क्या हाल चाल है ? कभी-कभी लगता है, पता नहीं अब बनारस जा भी पायेंगे या नहीं, यहां वेल्लौर बहुत गंदी जगह है । इतना गंदा शहर होगा हमने सोचा भी नहीं था । जितना गंदा शहर है उतना ही महंगा । हास्पिटल से लेकर शहर तक केवल पैसा चाहिए । इसके अलावा यहां दूसरी परेशानी भाषा की है, यहां पर तमिल या तेलुगु बोलते हैं । सिस्टर, डॉक्टर तमिल या इंगलिश । अगर बगल वाले पेशेंट चाहें भी तो एक दूसरे-से बातें नहीं कर सकते । ये तीन-चार महीने मैंने कैसे काटे हैं, यह हम ही जानते हैं । यहां पर 'आफ्टर ट्रांसप्लांट रूम' के दरवाजे पर एक शीशा लगा है । उसमें सब लोग हमको देखते हैं । कुछ बोलते हैं तो सुनाई नहीं देता । लगता है कि क्या पागल की तरह मुंह हिला रहे हैं । अब तक बहुत बकवास कर चुके हैं इसलिए बंद कर रहे हैं ।"

यह उसकी पिछले आठ महीनों की चुप्पी के बाद लिखा पहला पत्र था।

मंजु

वाराणसी
24.5.82

प्रिय मंजु,

तुम्हारी चिट्ठी मिली । यह पढ़कर बहुत खुशी हुई कि तुम्हारा ऑपरेशन अच्छी तरह से हो गया । अब तो भगवान् से यही प्रार्थना है कि तुम्हारी तबीयत बहुत जल्दी ठीक हो जाये । फिर तुम जल्दी बनारस आ जाओ । बहुत दिन हुए तुमको देखे । अब तुम्हारा ऑपरेशन वाली जगह का दर्द कैसा है ? भगवान तुम्हें हर तरह का कष्ट सहने की शक्ति दें । मन को कभी कमजोर न करना यदि हो सकें तो जल्दी-जल्दी चिट्ठी देना । हम भी तुमको जल्दी-जल्दी चिट्ठी देंगे।

---कनक

"क्यों सरदार जी, सत्तश्री अकाल, कहिए आपके बेटे का ट्रांसप्लांट कब हो रहा है ?"

"मैंने कहना तो मुश्किल है जी, न तो इसके मां की किडनी ही मेल खावे है

गयी । उसके साथ उसकी जवान औरत भी थी ।

मई 17, 1982

वावूजी

मैं कह नहीं पाऊंगी, शारीरिक की अपेक्षा मानसिक पीड़ा से मैं इस तरह व्यथित हूं कि कुछ कर नहीं सकती, कुछ कह भी नहीं सकती । डॉ. पांडेय जी ने जो दवाइयां लिखी थीं, उनमें एक थी अर्कामाइन, उनके आदेश से सिस्टर प्रातःकाल दवा खिलाकर चली गयी । तभी डॉ. पाणिग्रही आये, उन्होंने पांडेय जी को दो-तीन गालियां दीं कि उसने गलत दवा दी है, इससे ट्रांसप्लांट पर असर भी पड़ सकता है । अतः उन्होने ब्लाडर की सफाई की । बाबूजी, मैं यदि मर जाती तो यह सब नहीं झेलना पड़ता, नीचे का कागज़ आसुओं से इस तरह भींग गया था कि बांचना असंभव था । उसने 15 मई को एक पत्र लिखा था । पत्र तो वह मुझे ट्रांसप्लांट रूप से प्रतिदिन लिखती थी । पर उस दिन की चिट्ठी मुझे थमाती हुई सिस्टर ने ऐसा मुंह बनाया कि मैं बहुत देर तक सोचता रहा कि यह कौन-सी उलझन है । उसने एक नवयुवक डॉक्टर सिंह के खिलाफ एक पत्र लिखा था । वह उसे मेरे हाथों में दिलवाना चाहती थी, तभी डॉ. सिंह ने पत्र ले लिया । उसमें लिखा था, "बावूजी, अब आज से पत्रों द्वारा आपका समाचार जानने का कोई उपाय नहीं रहा । मेरा आपके नाम लिखा पहला पत्र डॉ. सिंह ने पढ़ लिया । उसमें लिखा था कि मैं रात भर तड़पती रही, मैंने कई बार घंटी बजायी पर सिस्टर नहीं आयी । मैने सोचा कि शायद बाथरूम में गयी है । मैंने घंटे भर बाद पुनः घंटी बजायी तो भी वह नहीं आयी । वह और डॉक्टर सिंह एक कमरे में बंद पड़े रहे रात भर । इस प्रेमालाप से मुझे कोई एतराज नहीं, पर मुझे दवा खिलाकर पानी देकर सिस्टर जा सकती थी । उसी कमरे में जहां सिंह बैठा था, ये लोग एक साथ रात की ड्यूटी पर रहेंगे तो कुछ हो या न हो, मेरा ब्रेन हैमरेज तो हो ही जायेगा ।"

उपरिलिखित पत्र को लेकर डॉ. सिंह गुस्से में पागल होकर मेरे पास आया- "यह कौन-सी भाषा है मंजु कुमारी । आपने तो हिंदी से एम.ए. किया है । आपको असभ्यता पूर्ण और निराधार वातें नहीं लिखनी चाहिए थीं । मैं जानता हूं आपके वाप बहुत बड़े साहित्यकार हैं, वे मेरे वारे में तुम्हारी वातों को आधार वनाकर, तुम्हारे पत्र का ब्लाक वनवाकर मुझे परेशानियों में डाल सकते हैं । पर वे इतने सभ्य हैं कि मुझे लगता नहीं कि तुम उनकी पुत्री हो । तुम्हारे और उनमें वहुत अंतर है मंजुश्री ।

मैं गुस्सा, क्षोभ, पीड़ा और ग्लानि से इस तरह विक्षिप्त हो गया कि लगता था कि मेरे मस्तिष्क की कोई नस फट गयी है । मंजु में एक गलती थी, स्वभावजनित आत्माभिमान था । जब वह नरेंद्र और मीरा को असभ्य भाषा में कुछ भी कहती थी तो मेरे डाटने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचता था । यानी यह सब ट्रांसप्लांट से स्वस्थ होकर लौट आने के बाद की बातें हैं । जब मैं इस घटना की पृष्ठभूमि में डॉ. सिंह और डॉ. पाणिग्रही को रखकर सोचता हूं, तो मुझे बुरा लगता है । मरीज के पत्रों को, जिसमें उसने अपनी व्यथा-कथा लिखी होगी, खुले-आम पढ़ना उचित था ? अगर सिंह सचमुच उस नर्स के साथ मरीज की अवहेलना करके प्रेम-प्रपंच में मग्न नहीं था तो दूसरे दिन की लिखी चिट्ठी को पढ़ना उसके लिए अनिवार्य क्यों हो गया ? सच्चा आदमी छिनगता नहीं है । उसे अपने चरित्र पर इतना विश्वास होता है कि वह बकवास भरे पत्रों को गंतव्य तक पहुंचने में बाधा नहीं डालता । उसने अपने पाप का भांडा फूटते देख जो दंड दिया मंजु को वह घृणित और अक्षम्य अपराध है । क्या है प्रतिशोध, क्या है जवाब । हमलोग कुल सात-आठ व्यक्ति तो थे ही वेल्लोर में । मैं उसकी दैहिक समीक्षा करा सकता था, पर उससे जो आंधी उठेगी, क्या मंजु के लिए हितकर होगी ? क्या एक डॉक्टर को अपमानित करने के दंडस्वरूप मंजु को अस्पताल से निकाल नहीं दिया जायेगा। डेढ़ लाख रुपयों से निर्मित यह नया भवन क्या भहरा नहीं जायेगा । मुझे रात भर नींद नहीं आयी । एक एक्कीस वर्षीया कुमारी कन्या के साथ यह व्यवहार मैं सह नहीं पाऊंगा ।"

मैं वेल्लौर के क्रिश्चियन अस्पताल में हूं । मैं यीशु के उस वाक्य को व्यर्थ और निरर्थक मानता हूं कि अगर कोई एक गाल पर तमाचा मारे तो दूसरा गाल उसकी ओर कर देना चाहिए ।

बस मेरे दिमाग में सिर्फ एक शब्द उठ रहा था रिवेंज, प्रतिशोध, प्रतिशोध [illegible]
हमारे विपदंत टूट चुके हैं । स्व. सुप्रकाश महाचार्य मेरे सबसे घनिष्ठ मित्र हैं [illegible]
उन दिनों हम कमच्छा में पढ़ाते थे । एक दिन चक्रवर्ती ने उन्हें [illegible]
तमतमाते हुए ऑफिस से बाहर आये और मुंह लटकाकर बैठ गये, [illegible]
क्या कहा साले ने?"

"कहता क्या, उसकी जीभ का ज़हर गया नहीं इसलिए कि [illegible]
खाता ।" जब से पान खाना शुरू किया मुंह का विष [illegible]
रोज पान खाते हैं । मैं तुम्हें डा. सिंह विषभरा [illegible]
दुर्गति की प्रतीक्षा कर रहा हूं, तुम्हें कोई भी [illegible]
नैष्ठिक बाप का शाप है, जो तुम्हें [illegible]

"ध्यान रखो" एक आवाज उठती है [illegible]
बदले के उत्ताप में मस्तिष्क को अनावश्यक [illegible]

फर्स्ट आने पर बहुत बहुत बधाई । हमारी मिठाई रखे रहना । अगर बनारस आये तो मिलनी चाहिए ।

तुम्हारी
मंजु
वाराणसी
4.7.82

प्रिय मंजु,

प्रसन्न रहो । कई दिनों से तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला । आशा है तुम स्वस्थ और प्रसन्न होगी । अस्पताल से मुक्त हो गयी होगी । इधर बीच एक टेलीग्राम मिला था बाबू जी का 'मनी रिसीव्ड डोंट वरी । एक पत्र भी था बाबू जी का । यहां जुलाई में तेज लू चल रही है । आकाश में बादलों का कहीं दूर-दूर तक नामोनिशान नहीं है । रात में आठ बजे से दस बजे तक आसमान एकदम लाल हो जाता है । इसे लेकर बनारस में तरह-तरह की चर्चाएं हैं, मसलन, यह भीषण अकाल का सूचक है, या महामारियों और बड़े-बड़े युद्ध का आदि-आदि ।

अम्मा जी को चरण-प्रणाम । उनसे कहना—मैं ठीक हूं चिंता न करें । बाबूजी की अनुपस्थिति में दवा आदि ठीक से लेना । परहेज बनाये रखना । खूब खाना एवं टहलना ।

नरेंद्र

गुरुधाम कालोनी
14.6.82

प्रिय मंजु

सदा प्रसन्न रहो । मैं सकुशल वाराणसी पहुंच गया हूं । अम्मा को मेरा चरण स्पर्श कहना । आशा है तुम शीघ्रता से सामान्य जीवन की तरफ बढ़ रही होगी एवं स्वास्थ्य लाभ कर रही होगी । तुम सभी ओर से निश्चिंत रहो । एक लाइन में भाव को लो तो "क्या तुम्हें आश्वासन देना पड़ेगा" । मैं संपूर्ण जिम्मेदारी से अपने कर्त्तव्यों का पालन करूंगा । मैं कभी तुम्हारे लिए कुछ न कर सका । आज यहां एकाकी पत्र लिखते हुए रुद्धकंठ सोच रहा हूं कि मैं कितना भाग्यशाली हूं कि मुझे ऐसे माता पिता मिले हैं जिनकी तुलना में ईश्वर भी कम है ।

सभी सावधानियों को मैं तुमसे स्वयं पूर्ण करने की अपेक्षा करता हूं । चिकित्सालय से मुक्त होने के पश्चात तुम्हें इसका विशेष ध्यान रखना होगा । यह तुम्हारी बौद्धिक, मानसिक और शारीरिक जिम्मेवारी होगी स्वयं के प्रति । तुम्हारे सफल ऑपरेशन की बात सुनकर गुरुधाम की जड़ता भंग हो गई है ।

—नरेंद्र

16.7.82
वेल्लौर

प्रिय कनक

तुम्हारी चिट्ठी मिली । लेकिन काफी लंबे इंतजार के बाद । वैसे हो सकता है कि इंतजार लंबा न भी रहा हो, लेकिन हम जिस मानसिकता में हैं इससे हमें एक-एक दिन दो दिन के बराबर लगते हैं । इस समय पापा और भइया दोनों बनारस में हैं। यहाँ हम और माता जी । दिन तो किसी तरह बीत जाता है लेकिन शाम को जरूर एक बार रोते हैं । सुबह से पोस्टमैन का इंतजार करते हैं कि किसी न किसी की चिट्ठी आयेगी । परंतु चिट्ठी में बनारस के बारे में पढ़कर मन और उदास हो जाता है। पापा नवंबर से यूनिवर्सिटी बंद होने तक यानी अप्रैल तक छुट्टी पर थे । अब तो उन्हें छुट्टी भी शायद न मिले ।

तुमने क्या तय किया । रिसर्च कर रही हो या बी. एड. ? वैसे तो दोनों का ही अपना-अपना महत्त्व है लेकिन आजकल टीचिंग लाइन में बी. एड. की बहुत माँग है । वैसे एम. ए. या एम. एस-सी. करने के बाद स्टुडेंट्स के दिमाग में रिसर्च का चार्म ज्यादा होता है । लेकिन हम लोग जब पढ़ ही रहे हैं तो एक उद्देश्य को लेकर ही चलना चाहिए । वैसे सब्जेक्ट का भी असर पड़ता है क्योंकि यदि हम इस बार एम. ए. पूरा करते तो निश्चय ही पी-एच.डी. करते । पापा की चिट्ठी आयी है कि जब वे इटारसी पहुँचे तो मौसम बदल गया । उन्होंने लिखा है कि बनारस में खूब लू चल रही है । भैया की चिट्ठी आयी थी कि बीच में रात को बनारस में आसमान लाल हो जाता था लेकिन हमको उसकी बात का विश्वास नहीं हुआ क्योंकि इस तरह की गप्प वह बहुत मारता है । हमने टी. वी. पर तीन फिल्में देखीं। इस दौरान तो बनारस में जाने कितनी पिक्चरें लगी होंगी । हम भी कई देखना चाहते थे, पर भाग्य साथ दे तब न ?

मंजु

नौ बजे थे । उसने ट्रांसजिस्टर पर विविध भारती मिला रखा था । बार आकाश [illegible]
था। पर इस दिन के महत्त्व का कोई पता भी आभास नहीं था । यह [illegible]
भारती है । लीजिए मुहम्मद खलील और पार्टी से सुना [illegible]

अबके सवनवाँ बाबुल भइया के भेजा
जियरा बड़ा अकुलाइ हो ।
संग कै सखी सब झूलत होइहैं
मोहैं कछुओ न सुहाइ हो

[illegible]

अंचरा बाबुल आज भीजत मोरा

असुंवन नीर बहाइ हो ।

"बाबू जी आज शायद राखी है" वह सिसक-सिसक कर रो पड़ी ।

मैंने कहा, "इसमें रोने की क्या जरूरत है । मुझे तो लगता है कि जैसे तुम यहां रो रही हो, वैसे ही वह वहां रो रहा होगा । यहां चमकती राखी न मिलती न सही । लाल कागज से गुलाब का फूल बनाकर तुम्हें तीन-चार दिन पहले ही भेज देना चाहिए था । देखें वह भी यही गलती करता है या नहीं । दोनों ओर की मंगल-कामनाएं जब टकराती हैं, क्रास करती हैं तो और भी मीठी हो जाती हैं । वेदों के यम-यमी संवाद से लेकर निरंतर भाई-बहन के बीच का रिश्ता पवित्र से पवित्रतर होता गया । इस रिश्ते ने न केवल हिंदू बहन-भाइयों के मन को बांधा। बल्कि बाहर से आये मुगलों तक को अपनी गिरफ्त में ले लिया । जब बहादुरशाह चित्तौड़ पर अधिकार करने वाला ही था, राजेश्वरी कर्णावती ने हुमायूं को राखी भेजी । बहादुरशाह और हुमायूं दोनों ही मुसलमान थे; पर राखी के सूत में बंधा हुमायूं अपनी सारी फौज के साथ चित्तौड़ पर चढ़ आया । घनघोर लड़ाई चलती रही । एक ओर थी बहन की रक्षा की शपथ दूसरी ओर थी बर्बर और लुटेरे के मन में धन लूटने की आकांक्षा । हुमायूं विजयी रहा । वह अंततः प्रासाद में घुसा । सीढ़ियां पार करके प्रासाद के आंगन में पहुंचा तो देखा कि विशाल अग्नि में जलकर रानी और अन्य नारियों ने जौहर कर लिया था । वह रानी की चिता के पास घुटने के बल बैठ गया । उसने चिता से एक मुट्ठी राख उठायी और सिर से लगा लिया । उसने अवरुद्ध कंठ से कहा, "बहन, माफ करना, तुम्हारे भाई को पहुंचने में थोड़ी देर हो गयी ।"

आप कहेंगे कि यह किंवदंतिया है । है तो है । किंवदंतिया कभी-कभी इतिहास से भी ज्यादा गहराई में डूबकर सत्य ढूंढ़ लेती है । इतिहासकार किसी प्रमाण के अभाव में यानी शिलालेख, ताम्रपत्र, भग्नावशेष से साक्ष्य न मिलने के कारण चुप हो जाता है पर किंवदंतिया जनता के मन में जौ के लंबे अंखुवें की तरह लहलहाती रहती है ।

7 अगस्त को हम ब्लड सेंपल देकर सी. एम. सी. से लौटे तो सामने एक अंतर्देशीय था ।

4 अगस्त 1982
वाराणसी

प्रिय मंजु,
प्रसन्न रहो ।

आशा है कि तुम बाबूजी एवं अम्माजी के साथ स्वस्थ और प्रसन्न होगी । मैं एक-एक करके कई पत्र लिख चुका हूं । किसी भी पत्र का कोई उत्तर नहीं मिला । यहां अकेले घर में बेहद अकेलापन महसूस होता है । यह पत्र लिखते समय बड़ा उदास-सा लग रहा है । आज रक्षा-बंधन का दिन है । मेरी ओर से तुम्हारे दीर्घायु एवं स्वस्थ रहने की समस्त शुभकामनाएं ।

—तुम्हारा भाई
नरेंद्र सिंह

उत्तर आ गया न? आखिर शुभकामनाएं टकरा गयीं न?

वह हंस पड़ी, "गलती मेरी है बाबूजी, पर गलती उसकी भी तो है?"

"क्यों?"

"उसे पहली अगस्त को ही यह अंर्देशीय भेज देना चाहिए था ।"

"पगली, अगर उसने पहले भेजा होता तो तुम्हें कैसे पता चलता कि वह रक्षा बंधन को अकेले घर में कितना रोया था ।" मैंने कहा ।

हम जब हाउसिंग बोर्ड में रहते थे तो प्रतिदिन हाउसिंग बोर्ड कालोनी की एक परिक्रमा जरूर करते थे । मंजु को डॉक्टरों की सख्त हिदायत थी कि प्रतिदिन उसे पांच किलोमीटर जरूर घूमना है । किडनी पेशेंट का 'ओवर-वेट' होना बहुत ही खतरनाक बात है । नरेंद्र अपने हर पत्र में लिखता था कि सावधानी के साथ खूब टहला करो । घूमा करो । बाबू जी तो है ही, उनके साथ टहला करो।

हमने एक दिन शाम की परिक्रमा में डूबते हुए सूरज की दिशा छोड़ दी और कमरे से निकलकर पूरब की ओर चले । वहां एक गड्ढा था । सामने एक बांध था। बांध के पश्चिम एक बहुत ही सुंदर पगोडे की तरह की कुटिया थी।

"बाबूजी वहां चलिए, कोई मंदिर लगता है । आरती हो रही है । घंटियों की आवाज सुन रहे हैं न?"

हम जब उस पर्णकुटी के द्वार पर पहुंचे तो आरती हो चुकी थी । भक्तगण जा चुके थे । सामने गणेश की मूर्ति थी । गणपति और वर्ण काला । मुझे उस समय यह रूप कुछ अजीब लगता था । क्योंकि प्रायः श्वेत-धवल मूर्तियां ही मैंने देखी थीं। मंजु बहुत उल्लसित हो गयी । वह जोर से बोली, "गणपति बप्पा मोरया,

अगले बरस जल्दी आ ।"

"क्यों, तुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है. क्या यहां आकर?"

"हां बाबू जी, घासी राम कोतवाल नाटक की याद आ गयी । मुझे गणपति बहुत अच्छे लगते हैं । पर यह मूर्ति काली क्यों है?" हम लोगों को भक्ति भाव से प्रणाम करते देखकर पुजारी ने पुनः कर्पूर आरती जला दी । मंजु मारे खुशी से नाच उठी—गणपति बप्पा मोरया ।

मैं उससे बताना नहीं चाहता था कि हाउसिंग बोर्ड की पर्णकुटी में स्थापित गणेश धूम्रवर्ण के हैं । जैसे महाकाली और भी ज्यादा भयानक होती है । तो श्मशान काली बनती है वैसे ही गणेश विघ्नेश भी होते हैं और विघ्नहर भी बनते हैं। रुष्टा काली 'सकलानभिष्टान्' को ध्वस्त कर देती है । वैसे ही गणेश की भी स्थिति है । गणेश तंत्रों में धूम्रवर्णी गणेश के माध्यम से शत्रुनाश का अभिचार होता है । मैं अब उस स्थिति में हूं कि मेरे लिए श्मशान काली और धूम्रवर्णी गणेश का कोई अर्थ नहीं बचा ।

नमोयोगिनं रुद्ररूपं त्रिनेत्रं जगद्धारकं तारकं ज्ञानहेतुम् ।
अनेकागमैः स्वजनं बोधयंतं सदा सर्वरूपं गणेशं नमामि ॥

14

कुमारी धनदानन्दा विमला मंगलावला
पद्मा चेति च विख्याता सप्तैता जीवमातृका

हाउसिंग बोर्ड
फ्लैट नं. 82, वेल्लौर

मेरी पत्नी जीवित पुत्रिका व्रत को उसी तरह त्याग देने को तैयार नहीं थीं जैसे उन्होंने तीज व्रत को त्याग दिया। तीज पति के लिए मगल-कामना का व्रत है, वह तो एक बार छोड़ा भी जा सकता था, पर जिउतिया छोड़ना किसी भी ग्रामीणा के लिए असंभव है।

एक दिन देवेंद्र आ पहुंचे। नरेंद्र ने उन्हें भेजा था, मेरी पत्नी को साथ ले जाने के लिए। मेरे मन में आया कि उन्हें थोड़ा चिढ़ाऊं। कहूं "अरे भाई ई जिउतिया व्रत तो तुम हमेशा करती रही, फिर तुम्हारी गोद से दो-दो बच्चे क्यों छिन गये? क्या तब पानी की सतह पर मंडराने वाली चील ने राजा रामचंद्र से कहा नहीं कि चिरौंजी की मां ने 'खर जिउतिया का व्रत किया है।' पर मेरी हिम्मत नहीं हुई। जो खुद मृतक की तरह जी रही है, उस पर बाण मारना घृणित होगा।

मुझे हिंदू संस्कारों में अनेक व्यर्थ के बोझ लगते हैं। किंतु दो व्रत मुझे हमेशा आकृष्ट करते रहे हैं। एक तो जीवत्पुत्रिका का व्रत जो आश्विन कृष्णपक्ष की महाष्टमी को होता है और ठीक दूसरे दिन मातृ नवमी का पर्व। हमारे शास्त्रों में पिता को किसी संस्कार योग्य नहीं माना गया। माता ही यानी सप्त मातृकाओं की ही पूजा होती रही, हर मंगल कार्य पर क्योंकि वही धनप्रदाता है, वे ही *आनंद की वर्षा करती है, वही मंगलदात्री है, शुभ्रा है, विमला है। पुत्र के जीवित रहने* का व्रत मां रखती है, पिता नहीं। क्योंकि वह शक्तिहीन शव है। पुत्र तो मां की कोख से आता है, इसलिए उसके प्रजनन की व्यथा मां ही जानती है और ऐसी दारुण व्यथा के बाद विमला, मंगला जो सौख्य लुटाती है, उनके प्रति धन्यवाद

माताएं ही देती हैं ।

ठीक दूसरे दिन मातृनवमी । क्या आयोजन है । यह पुत्र की ओर से अपनी जननी को अर्पित श्रद्धासुमनों की भेंट का दिन है । यह राष्ट्र की ओर से माताओं को अर्पित "थैंक्स गिविंगडे", यानी सम्पूर्ण प्रणति के साथ माता को समर्पित कृतज्ञता प्रकट करने का दिन है । रूस में अधिक से अधिक पुत्रों को जन्म देने वाली माताएं पुरस्कार पाती हैं । हमारे यहां 'हम दो हमारे दो' का बोलवाला है।

पर जिस औरत की चार संततियों में दो चली गयीं, तीसरी सामने है, वह रहेगी या वह भी जायेगी–इसे मैं कैसे समझाऊं उसे । क्या मैं तीसरी संतति हेतु जीवत्पुत्रिका पर बनारस जाना रोक दूं?

पत्नी जीवतपुत्रिका व्रत मनाने बनारस चली गयी थीं । हाउसिंग बोर्ड वाले फ्लैट में मैं था, श्रीकांत थे और मंजु थी । प्रत्येक दिन की तरह, पतझड़ के बाद वाला माहौल था । दक्षिण भारतीय मौसम में सब होते हैं सिर्फ बसंत नहीं आता। मेरे जीवन की मरुभूमि में बसंत आया भी कब ।

मैं प्रति बुधवार और शनिवार को मंजु के साथ सी. एम. सी. के नेफ्रोलाजी विभाग में जाता और प्रति शाम रिपोर्ट लेने तथा उन पर जाकोब की प्रतिक्रिया जानने के लिए क्षण विलम जाता । रिपोर्टें आ गयी थीं और वेटिंग रूप में कोई कुर्सी खाली नहीं थी ।

जब मंजु का नाम पुकारा गया तो मैं यहीं डूबा हुआ था ।

तभी राव जाधव बोले, "डाक्टर साहब, मंजु की रिपोर्ट के सिलसिले में आपको बुला रहे हैं जाकोब ।"

मैं डॉक्टरों के सामने खड़ा था ।

"हमें खेद है डॉ. सिंह !" जाकोब बोले, "मंजु की किडनी वर्क नहीं कर रही है।"

जाकोब का एक वाक्य इतना चुभ जायेगा मुझे, यह स्वप्न में भी नहीं सूझा । पर बरछी की कनी बहुत गहरे धंस गयी । चक्कर जैसा लगा और आंखों के सामने लुत्तियां नाचने लगीं । मै रिपोर्ट लेकर बाहर आया । मैं किसी बात पर कभी इतना उन्मिथित नहीं हुआ । आज सिर्फ एक वाक्य गूंज रहा था यानी किडनी ने वर्क करना छोड़ दिया है । किडनी, किडनी दरवाजे से सरसराती हवा आती और चिल्लाती–किडनी, किडनी । बाहर आकर रेलिंग से पीठ टिकाकर खड़ा रहा । सुदूर कौवों से लदे पीपल को देखा, सभी जगह सिर्फ एक ध्वनि–किडनी, किडनी। तभी श्री जाधव मेरे पास आ गये ।

"आप इस रिपोर्ट से इतना परेशान होंगे सर तो अभी पांच महीने और रूकना है, क्या हालत होगी आपकी.... धैर्य रखिये"

वे चले गये । मैं चुपचाप सी. एम. सी. के बाहर के निकसार तक पहुंचा "हाउसिंग बोर्ड, हाउसिंग बोर्ड... वह बेनाम सत्रह-अठारह की उम्र का रिक्शा वाला मेरे पास आ गया, "बैठिए सर... आपकी हेल्थ तो राइट है न ।"

"हां राइट है, चलो तुम"

मैं सुदूर धनुषाकार फैली बैल्लौर की पहाड़ियां देख रहा था । कभी मंजु ने ही बताया था, "बाबूजी, यह तीन-तीन नकारों से भरा हुआ शहर है... मैं समझ नहीं पाया । अतः पूछा "कौन-कौन नकार है ?"

सिस्टर रिशैल कहती थी कि तुम बेल्लोर का अर्थ जानता ।"यहां रीवर विदाउट वाटर, हिल विदाउट ट्रीज और टेंपुल विदाउट गॉड है ।" मैं ऑपरेशन ठीक होने की मनौती पूरा करने पत्नी के साथ टीपू सुल्तान के फोर्ट में बने शिव मंदिर में गया । वहां शिवलिंग उपस्थित था ।

मैंने एक आधुनिक जैसे लगने वाले पुजारी से पूछा, "यहां तो लार्ड शिवा का लिंग स्थापित है । फिर लोग इसे टेम्पल विदाउट गॉड क्यों कहते हैं?"

"मैं कुछ नहीं जानता, मैं यह सब बताने के लिए नहीं हूं यहां, इसे छिपाने के लिए हूं । मन हो पूजा करो, न मन हो तो यह सब नारियल, फूल, रोरी, भस्म फेंक कर चले जाओ..."

"आपने सब कुछ बता दिया श्रीमान पुजारी जी महाराज, अब जानने को कुछ बचा कहां । अब तो हम इस ईश्वरविहीन मंदिर में आ गये हैं । मनौती पूरी करने के लिए इस मंदिर को ही गॉड मानकर पूजन करेंगे । ये लीजिए, सब नारियल फूल और यह है पांच रुपये का नोट आपकी दक्षिणा के रूप में।"

रिक्शावाला बालक थक गया था । बेल्लौर से सत्वाचारी तक पहुंचने के लिए दुरूह चढ़ाई करनी पड़ती थी । सत्वाचारी के पहले ही एक लंबी रेत भरी नदी थी जिसे मैंने आठ महीनों में कभी जल से भरी नहीं देखा ।

"क्यों सर !"

"कहो ।"

एमसिया ने लगता है सर बहुत लांग बिल दे दिया आपको । ये स्साले तब तक आपको बिल थमाते रहेंगे जब तक डेथ...एक्सक्यूज सर, बीमार मर न जाये । आपका यह क्या है...उसने दिमाग को ठोंका, आप जो पहना है सर...सिलिक वाला...क्या कहते हैं सर ।

"कुर्ता ।"

"हां, कुर्ता और धोती उतरवा न लें..."

.आज सत्वाचारी की चढ़ान में पहाड़ियां तो दिखीं, वे वृक्षविहीन भी थीं, पर मुझे

निहायत बदसूरत लग रही थीं । आखिर सब प्रयत्न बेकार गया । यह जीवन भी हार गये । नियति सदा क्या विजयी होती रहेगी और मैं ईमानदारी से उसको हटाने के हर प्रयत्न में असफल ही होता रहूंगा ।

रिक्शावाले को चार रुपये दिये । बाहरी निकसार में पहुंचे तो अकेली मंजु थी। श्रीकांत को सुनसान जगह कभी रास नहीं आती । वे किसी बस में बैठकर कहीं चले गये होंगे मनसायन करने । हो सकता है बेल्लौर सिटी में ही हों । कहीं बैठकर गप्प कर रहे हों ।

मैंने धोती-कुर्त्ता उतारा और लुंगी पहनकर बैठ गया ।

"रिपोर्ट मिली बाबूजी ?" उसने पूछा ।

"आज आदित्यन था ही नहीं । रिपोर्ट तो डॉक्टर देते नहीं । एक रुपया लेकर सबकी ब्लडयूरिया और क्रिएटनिन तो वही लिखकर धीरे से थमाता है।"

"क्यों बाबूजी, जब खून देने गये थे सुबह तो आपने नहीं देखा?"

"क्या नहीं देखा?"

"वही आदित्यन् था वहां । वह डायलसिस के लिए भीतर जाने वाले पेशेंट्स का वजन ले रहा था । उनकी डायरियों में वजन रेकर्ड भी कर रहा था।

"कर रहा होगा, मैंने नहीं देखा" मैं गुस्से से बोला, "कह दिया कि रिपोर्ट नहीं मिली तो तुम खोद-खोदकर पूछ क्या रही हो?"

वह हक्का-बक्का मेरी ओर देखती रही ।

तभी श्रीकांत पांडेय आये ।

"गुरुदेव, चिन्ता की बात नहीं है ।"

"मतलब?"

मतलब यह कि क्रियेटिनन और ब्लडयूरिया घटती-बढ़ती रहती है । इसे ही रेगुलर बनाने के लिए तो ऑफ्टर ट्रांसप्लांट छः महीनों के लिए मरीज को रुकना पड़ता है यहां ।"

"अच्छा, अपना काम देखो ।"

मेरे गुस्से को देखकर श्रीकांत सहम गये । उन्होंने रियलाइज किया कि मंजु के सामने ऐसा नहीं कहना चाहिए था । वे लौट के भीतर चले गये । कपड़े वगैरह बदलने के लिए । वे आकर बोले, "बर्तन साफ करने में तो बहुत देर हो जायेगी, क्या आज भी खीर ही बना दूं?"

"जो इच्छा हो, बना दो"

हमने डेढ़ सौ रुपयों में एक फोल्डिंग चारपाई ली थी । मंजु उसी पर सोती थी । वह चारपाई हर शाम फ्लैट के सामने के लॉन में डाल दी जाती । वह इसी पर लेटे-लेटे ट्रांजिस्टर बजाती रहती । हाउसिंग बोर्ड के सामने की ऊंची पहाड़ी जब रात की अंधियारी में डूबने लगती तो मन मगन हो जाता । अगस्त में जैसी सर्दी गर्मी बेल्लौर में होती वैसी मैंने कहीं और नहीं देखी ।

अचानक ठंडी हवा का झकोरा आता और हम रात दस बजे तक उसी चारपाई पर लेटे आसमान देखा करते ।

"बाबूजी" उस रात वह भरभरायी आवाज में बोली, "आप को मैंने क्या दिया सिर्फ दुख । दुख ही तो देती रही । आप भैया को तार दिला दीजिए कि वह कनक को यहां आने के लिए कहें और जब तक माता जी यहां न आ जायं वह यहीं रहेगी ।

"क्या तुझे श्रीकांत का बनाया भोजन अच्छा नहीं लगता?"

"नहीं बाबूजी" वह अचानक हिचकियों में डूब गयी ।

"बात क्या है?"

"वह कहता है कि तुम बहुत खाती हो ।"

"तुम क्या श्रीकांत के बाप का दिया खाना खाती हो । मैं अभी पूछता हूं उससे ।"

"पूछना बेकार है, अब भइया को अरजेंट तार दीजिए । मैं इस पंडित के हाथ का खाना नहीं खाऊंगी ।"

मैं झल्लाकर बोला, "नहीं खाओगी तो मरो, मैं कुछ नहीं कर सकता । एक तो वह बर्तन मांजता है, खाना बनाता है और तुम उसे पंडित-पंडित कहकर अपमानित करती हो ।"

"मैं नहीं खाऊंगी, अनशन करूंगी ।"

"मारूंगा एक झापड़ कि होश ठिकाने हो जायेंगे ।" मेरी आवाज में निराशा और क्रोध का भाव था । किसी भी व्यक्ति को लड़कियों या युवतियों के खाने पर इस तरह कहना असभ्यता है । दूसरी ओर यह जिद्दी लड़की है कि 'अनशन अनशन' बके जा रही है, इसे क्या मालूम कि आज कि रिपोर्ट क्या थी, यह सब कुछ मेरे भीतर गड्मगड्ड हो रहा था ।

"क्यों करोगी अनशन?"

"मैं इमरान की दस गोली खाकर जान दे दूंगी ।"

मैंने उसकी बांह पकड़कर खींचा और झापड़ उठाकर मारने ही वाला था कि वह मेरे और करीब आ गयी, "बाबू जी, क्या मैंने जानकर नयी किडनी खराब की है,— अगर मुझे थप्पड़ मारने से आप को शांति मिलती हो तो मारिए ।" मैं और रोक न सका । आंख पर रूमाल रखकर बेतहाशा उमड़ते आंसुओं को छिपाने की

कोशिश की । पर हिचकियों को मैं संभाल न पाया ।

"चुप हो जाइए, बाबूजी" वह रोते हुए बोली, "मैने आप से कहा था न बाबूजी, आप इस चरखी में अपने को मत डालिए..."

मैं उसके सर को सहलाता रहा और हम दोनों रोते रहे ।

तीन दिन बाद हम यानी मंजु और मैं खून का सैंपूल देने पुनः नेफ्रोलाजी विभाग की ओर चले । हम जहां से बस पकड़ते थे वहां सामने ही चर्च था । क्रूस पर लटकती प्रभु यीशु की प्रतिमा श्वेत पत्थर से बनी थी । वह बरबस अपनी ओर खींच लेती थी । कभी-कभी उस बस-स्टाप पर बेल्लौर जाने वाली साध्वियां भी होतीं । अचानक अतिशय निराशा के कारण मैं अंतर्मुखी होने लगा, घंटे बजने लगे। वे चर्च की घंटियां भी हो सकती थीं । अथवा परम यातना के बीच अपने को अलग करने का आत्म-सम्मोहन भी कह सकते हैं इसे ।

कम आन टु मी । आल ई दैट लेवर एंड
आर हेवी लेडेन, एंड आई विल गिव यु रेस्ट

(मैथ्यु 11.2.87)

मेरे पास आओ, तुम जो भारी श्रम और बोझ से थके हो, मैं तुम्हें राहत और शांति दूंगा ।

बस में भीड़ थी, पर हिंदी क्षेत्रों की बसों जैसी अराजकता नहीं थी । पोह, पोह यानी आगे चलो, आगे चलो...कंडक्टर बोलता और लोग कतारबद्ध आगे बढ़ते जाते थे । बस अस्पताल के पास पहुंची कि कंडक्टर की आवाज आयी, 'सीयमसिया सीयमसिया ।'

हम बस से उतरे और खून का सैंपुल देकर लौट आये ।

शाम को जब रिपोर्ट लेने जाना था । दिल धड़क रहा था । मंजु का नाम पुकारा गया तो मैं मुश्किल से डॉक्टर्स रूप में पहुंचा । "मंजु बहुत 'लकी' है डॉ. सिंह जाकोब बोले !" उसकी किडनी काम कर रही है ।

"डॉ. जाकोब, मैं एक सवाल पूछना चाहता हूं आपसे, पूछूं ।"

"पूछिए ।" जाकोब और श्री निवास मुसकुराये ।

"मेक स्ट्रेट पाथ फार युवर फीट
लेस्ट दैट ह्विच इज लेम बी टर्न्ड आउट ऑफ द वे"

जनाब अपनी लिमिटेशन सबको जाननी चाहिए । विदेशी ट्रीटमेंट की जूठन खाकर आपने जो कुछ बटोरा है उसके लिए सीधा ठोस आधार चाहिए आप के

पैरों के नीचे । वरना लगड़े, जिन्हें सहारों की जरूरत है, रास्ते से छिटककर अलग गिर जायेंगे । आप का सैंपुल टेस्ट ब्रह्मलेख नहीं है । आप के एक वाक्य से कि बाडी ने किडनी रिजेक्ट कर दी, हम तारकोल की तरह पिघलती नदी में डूबते रहे है । *मुझे और कुछ नहीं कहना है डॉक्टर, सिर्फ यह कि आपकी चिकित्सा पद्धति* महान है, पर आप इंसान है या नहीं, मिहरबानी करके दो मिनट अपने भीतर भी झाकें । सर्वज्ञ होने के गर्व से आप निराधार निर्णय देते रहे तो कोई भी अभागा मौत के तूफ़ान में बिखर जायेगा । मेडिकल सर्टिफिकेट ग्रहण करते वक्त आप ने पवित्र कमस खायी होगी कि बीमार की चिकित्सा प्रथम धर्म है, पर आप जो दिखते हैं वह आप है नहीं ।"

मुझे देखकर वही किशोर रिक्शा वाला घंटी बजाता सामने आया, "सर, हाउसिंग बोर्ड ।"

"चलो ।"

"मैं इतना भावुक क्यों हूं" मनने मन से ही पूछा, "तीन दिन पहले का रुदन क्रोध, ग्लानि आज अचानक छूमंतर हो गयी और मुझे लगा कि कोई गुनगुना रहा है·

फरेबे नजर है सुकूनो सबात ।
तड़पता है हरजर्रए-ए-कायनात ॥
ठहरता नहीं कारवाने वजूद
कि हर लहजा है ताजा शाने वजूद
समझता है तू राज है जिंदगी
फकत जौक़ि परवाज है जिंदगी
बहुत इसने देखें हैं पस्तों-बुलंद ॥
सफर इसको मंजिल से बढ़कर पसंद

मैं इकबाल की इन पंक्तियों को गुनगुना रहा था, पर जिंदगी का यह रूप जहां एक ओर राहत दे रहा था, वहीं अपने मंजिल को लाघना पसंद करने [illegible] जिंदगी एक प्रश्न चिह्न भी लगा रही थी । शाति की बात धोका है, देखता नहीं [illegible] सृष्टि का हर कण तड़प रहा है । अस्तित्व का कारवां कभी विश्राम नहीं [illegible] इसका हर वाक्य गतिमय है । तू सोचता है कि जिंदगी रहस्य है । [illegible] मात्र ऊंची उड़ान है । इसने बार-बार असफलता देखी है पर [illegible] सफ़र से प्रेम है ।

मुझे यह स्वीकार नहीं । मुझे तो कण-कण में थर्राने वाली उस हथेली का इंतजार है, जो अपनी जलदागम मारुत से कंपित शीतल छाया से ढंक ले । हरज़र्रा मेरे साथ हंसे, मेरे साथ रोये, हम तो इतना ही चाहते हैं । इसे चाहे वेदांत कह लो, चाहे लोकायत । हरजर्रा लेखक के लिए अपना होता है, वह उसी में डूबकर हर स्थिति का अनुभव करता है और जब बाहर निकला है तो उसे तटस्थ होकर पाठकों तक पहुंचाना उसका धर्म है । इसलिए वह अद्वैत भी होता है और द्वैत भी।

जीवतपुत्रिका व्रत पूरा करके पत्नी लौट आयी और श्रीकांत पांडेय बनारस चले गये ।

हम लोग हाउसिंग बोर्ड के 82 नंबर के फ्लैट में रहने लगे थे । एक रात जब मैं उसकी चारपाई के पास जमीन पर लेटा था, उसने कहा, "बाबूजी, सो गये?

"नहीं तो ।"

"आप जरा यह कहानी पढ़िए ।"

कादंबिनी के अगस्त अंक में 'हरा तोता' शीर्षक कहानी या कहिए उपन्यास का एक अंक छपा था ।

मैं कहानी पढ़ता गया और रुक-रुक कर सोचता रहा कि कौन-सी बात है जिसने इसको इतना प्रश्नाकुल बना रखा है ।

विश्व-युद्ध में पराजित सैनिकों की मानसिकता का बहुत ही सूक्ष्म और गहरा विश्लेषण था । खंदक में रहने वाले एक जापानी सैनिक के बारे में मिचिया ताकियामा ने लिखा था, "बर्मा का आसमान दूधिया रंग के चकमक पत्थर जैसा था। बर्मा में अपने पड़ाव के प्रारंभिक दिनों में रातों में जगकर संगीत, नयी-पुरानी धुनों और गीतों का अभ्यास किया था । सैनिक कार्पोरल मिजुशिमा बहुत जल्दी बहुत कुछ सीख गया था । उसने एक वीणा भी बनायी जो बर्मी वीणा की नकल थी। धीरे-धीरे युद्ध का पासा पलटने लगा । हमारी हालत बद से बदतर होती गयी।

ऐसे वक्त में कार्पोलर मिजुशिमा की वीणा एक चमत्कार लगती थी । धीरे-धीरे हम निराशा में डूबते गये । मिजुशिमा खंदक में अपने हरे तोते के साथ रहता था । वह बहुत उदास, घर से दूर अपने घर के बारे में सोचता रहा । उसे बहुत गहरे मानसिक कष्ट में डूबा देखकर उसका हरा तोता बोला, हे मिजुशिमा चलो जापान साथ-साथ चलें" मैं ठहाका लगाकर हंसा, "हे मंजुशिमा, चलो बनारस साथ-साथ चलें ।"

"सच ।" मंजु बोली, और मुसकुराती रही ।

कितनी-कितनी छोटी नावें है, डोंगियां है । सब कहां से बच पायेंगी और फिर नाव कागज की सदा चलती नहीं । मंजु के इन पत्रों से लगता है कि ऑपरेशन के सफल होने से वह प्रसन्न है । मगर हर चिट्ठी में वह यही लिखती है—अगर बनारस आये तो । इस तो का क्या जवाब दूं मैं ।

वेल्लौर 9.8.82

प्रिय कनक,

तुम्हारी 26.7.82 की भेजी हुई चिट्ठी मिली, उससे वहां का समाचार ज्ञात हुआ । हमारी तबीयत ठीक ही चल रही है । हम लोग यहां अभी अक्टूबर तक रहेंगे । यहां आज तक जितने भी पेशेंट रहे, उन्हें ट्रांसप्लांट के बाद छः महीने तक रुकना पड़ा फिर हमीं कौन स्पेशल है । हमारे यहां नेफ्रोलाजी में एक डॉक्टर है जेकोब, मैंने एक दिन उनसे पूछा तो बोले, 'छः महीना से पहले नो छुट्टी ।' आशा है कि बी. एच. यू. खुल जाने से तुम्हारी बोरियत में कुछ कमी आयी होगी, मिताली की मम्मी की चिट्ठी मुझे मिल गयी थी । हमने उसका जबाव नहीं दिया क्योंकि हमको समझ में नहीं आया कि क्या लिखें । 'हमारी तबीयत ठीक है' के अलावा क्या लिखते?

15

शिव प्रसाद सब एक-से
कोउ काना कोउ अंध

यह बहुत ही मजेदार दोहा का एक चरण है जिसे राजा शिवप्रसाद के शिष्य हिंदी साहित्य के युग-निर्माता भारतेंदु ने लिखा । भारतेंदु ने ठीक ही लिखा है । मेरे मन का शिवप्रसाद सिर्फ काना या अंधा ही नहीं, बिल्कुल सपाट और बेबाक अंधा है । कभी उसके विमल विलोचन, न सही हियरा के सामान्य ज्ञान के, ही खुल पायेंगे, इसमें संदेह है ।

19 अगस्त में क्या ऐसी खासियत है । शिवप्रसाद कहे भी तो कौन मानेगा कि इस दिन जो आत्मीय मित्र आदि आकर जन्म-दिन की बधाई देते हैं, उससे वह प्रसन्न नहीं होता, अथवा प्रति वर्ष इस अवसर पर सही या नकली रूप में बधाई देने वालों का वह इंतजार नहीं करता । अब भी वाचस्पति गढ़वाल से या डॉ. प्रेमचंद्र जैन नजीबाबाद से बधाई का तार भेजते रहते हैं । अनेक हैं जो जन्म-दिन को थोड़ा गुलजार बना दिया करते थे । जन्म दिन पर जन्म दिन बीतते गये । कर्नाटकी तथा एक सर्वत्र, समर्पित किंतु कभी भी देह के स्तर पर न उतरने वाली, मेहराबदार हंसी से सिर्फ मौन अभिनंदन करने वाली कृष्णप्रिया, जिसने सूखे तालाब को 1960 से लेकर 1968 तक इस तरह लबालब भर दिया कि न कुछ प्राप्य रहा न अप्राप्य । वह चिट्ठी नहीं लिखती थी । एक मामूली चिट प्रियातिप्रिय, मंगलमय हो यह बत्तीसवां जन्म दिन । मुझे याद है नरेंद्र दो गुलदस्ते लाकर मेज पर सजा देते । उस वक्त सबसे पहले पूजा के फूल चढ़ते श्री अरविंद और श्री मां के चित्रों पर । माला पहनाने वाले के हाथ से माला छीनकर मैं उन्हीं चित्रों पर चढ़ा देता । प्रति वर्ष 15 अगस्त को विशेषतः 1969 के बाद से। श्री मां की ब्लेसिंग सार्वजनिक दर्शन के बाद शिष्यों को भेजी जाती । मेरे लिए इतना कष्ट श्री एम. पी. पंडित उठाते, और 15 की डाक से चलकर ठीक 19 की शाम तक ब्लेशिंग मेरे पास होती ।

फिर कुछ अन्य लोग जुड़े । अन्य कहना उनका अपमान होगा । वे बेटों से भी ज्यादा समर्पित, शिष्यों से भी ज्यादा ईमानदार, श्रद्धालुओं से बिल्कुल अलग सब कुछ को धरती से जोड़ने वाले, अगम को सुगम करने वाले थे पदम, राधे, रज्जू। रमापति भी होते कभी-कभी ।

आज यह पहला जन्म दिन है जब मैं हूं, मंजुशिमा है और उसकी मां है । जन्म-दिन का कोई मतलब था तो नरेंद्र और मंजु को । नरेंद्र का बधाई का तार मिल चुका था । 19 अगस्त की रात में मंजु को जाड़ा देकर बुखार आया । सुबह उठते ही मंजु के साथ डॉ. ए. पी. पांडेय से मिले । उन्होंने ससम्मान बैठाया । हाल-चाल मालूम किया ।

मैं एक चिट लिख रहा हूं किरुबाकरन को । आप बिना बिलंब इसे भरती कराइए ।

हम चिट लेकर 8 बजे नेफ्रोलाजी के लंबे-चौड़े कक्ष में बैठे रहे । 9 बजे अपने वार्ड का चक्कर लगाकर डॉ. किरुबाकरन आये । मैं उनके पीछे-पीछे उनके चैंबर में पहुंचा । और वह चिट्ठी दी ।

"बुलाइए मंजु श्री को ।"

उन्होंने बाकायदा जांच-पड़ताल की और उसे 'ओ' वार्ड के 48 नंबर कमरे में भरती कर लिया । कमरा बहुत साफ-सुथरा और आरामदेह था । बाथरूम में टाइल्स लगे थे ।

"कमरा तो बहुत ही अच्छा है" मैंने वार्ड ब्वाय से कहा । वह हंसते हुए बोला, "सर, यहां जो भी आरामदेह है, सुंदर है, साफ है, वह उतना ही महंगा भी है । इस कमरे का रोजाना किराया नाइनटी फाइव है ।"

बहरहाल, दवा शुरू हुई । जेंटामाइसिन की सुई और डेल्टाकार्टिल की दस दस एम. जी. की तीस गोलियां ।

मैं सुबह से बिना नाश्ता पानी के निकला था । बारह बज रहे थे । भूख लगी थी खूब । तभी पत्नी आयीं, "का हौ हाल ।"

"ठीक हौ, सात-आठ दिन रुके के परी ।"

"मजु के खाना आय गयल ।"

"आ रहा होगा । वह डाइट इन्चार्ज लड़की सब कुछ नोट करके तो चली गयी थी । मंजु ने चावल, सांभर और मछली मंगायी थी । टिफिन उसके कमरे के स्टूल पर रख दी गयी । जब खाना परोसकर बेड पर रखा गया तो पत्नी बोलीं, "ई सब त हम ना छुअब ।"

"का?"

"अरे उहै मछरी मांस, म्लेच्छ करैलैं सब ।"

क्रियेटनिन और ब्लड यूरिया पहले ही दिन गिरना शुरू हो गया । 38 की

जगह क्रियेटनिन 2.4 हो गयी । दूसरे दिन 2.1 और तीसरे दिन 2 चौथे दिन पुनः 1.5 यानी क्रियेटनिन अधिक नहीं गिरेगी ।

आशा लगाये थे कि पूरा कोर्स डेल्टाकार्टिल का हो जायेगा तो शायद कुछ और गिरे । ओ वार्ड के कमरा नं. 48 का पूरे दस दिनों का किराया देना था 950 रुपये । दवा-दारू को मिलाकर कुछ चार हजार का बिल था । सेंट्रल बैंक के एकाउंट में मुश्किल से तीन सौ रुपये होंगे । बीमार पड़ते ही भरती के साथ मैंने नरेंद्र को तार दे दिया था कि जो कुछ भी हमारे खाते में हो तुरंत भेजो । कुछ रुपये टी. एम. ओ. से भेजो । इसे क्राइसिस समझो ।

कई दिन हो गये रुपये नहीं आये ।

मैं दोपहर का खाना खाकर हाउसिंग बोर्ड वाले मकान में आ जाता था और पंखे के नीचे उधेड़-बुन में पड़ा रहता था ।

तभी किसी ने बाहर की कुंडी खटखटायी ।

मैंने दरवाजा खोला । मेहता साबह की पत्नी थीं और पोस्टमैन ।

तमिल डाकिया अंग्रेजी में बोला, "तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेहता जी की पत्नी बता चुकी होंगी कि मेरा नाम क्या है ।"

"रिप्लाई, शिवप्रसाद सिंह"

"हैव डू यू एनी आइडिया एबाउट टी. एम. ओ. ।" मैंने तो तार ही दिया था । इस महान देशभक्त तमिल डाकिये को विश्वास दिला रहा था । पर वह पूछता गया, "किसने भेजा है?"

"मेरे पुत्र नरेंद्र कुमार सिंह ने ।"

"कहां से आ रहा है यह टी. एम. ओ.?"

"वाराणसी से ।"

पोस्टमैन ने पंद्रह सौ रुपये दिये । वह बिना कुछ कहे सुने चला गया । एक होते हैं पोस्टमैन वाराणसी में । वे कभी नहीं पूछते कि रुपये भेजने वाला कौन है? आपका उससे रिश्ता क्या है? हां बस उनकी आंखें टिकी रहती हैं कि अगर बीस रुपये का भी मनीआर्डर हो तो कम से कम एक रुपया तो मिलना ही चाहिए उन्हें ।

"बिलिंग सेक्शन से यह बिल आयी है ।" सिस्टर बोली ।

"आर यू डॉ. एस. पी. सिंह?"

"यस !"

"कृपया पावना जमा करके यह बेड खाली करा दें । यह किसी दूसरे रोगी को दी जा चुकी है ।"

वह चली गयी । बिल कुल पांच हजार सैंतालीस रुपये का था ।

मैंने कुछ कहा नहीं मंजु के बगल की कुर्सी पर बैठ गया । कहां से लाऊं पांच हजार सैंतालीस रुपये ।

"कितने का बिल था बाबूजी?"

"कोई खास नहीं, चार-पांच सौ का था शायद ।"

"हूंह अभी भी आप मुझे एक कमजोर लड़की ही समझते हैं कि ढेर सारे रुपये हैं देने को, यह सब जानकर मैं बेहोश हो जाऊंगी । बाबूजी, आप यह सब कब तक करते रहेंगे । शुरू में लोगों ने कहा—सत्तर हजार । बाद में कहा—नब्बे हजार और अब कहते हैं—डेढ़ लाख । हो सकता है कि जब तक मैं जिंदा रहूंगी यह रकम अजदहे की तरह मुझे और आपको लीलती जायेगी ।"

उसने चद्दर से मुंह तोप लिया और करवट बदलकर धीरे-धीरे सिसकती रही।

मैं दोपहर का खाना खाने ललित बिहार गया । वही था एक मात्र नार्थ इंडियंस भोजनालय । वहां काउंटर पर बैठे थे बड़े शर्मा ।

खाना खाने के बाद मैं रुपये देने उनके पास पहुंचा । दस का नोट दिया, शेष पांच उन्होंने लौटा दिये ।

जब तक बिल भरा नहीं जाता, प्रतिदिन कमरे और भोजन तथा नास्ते वगैरह के डेढ़ सौ रुपये बढ़ते जायेंगे । क्या यह शर्मा कुछ इंतजाम कर सकेगा?

मैंने उनसे कहा, "क्या आप दो मिनट का समय देंगे?"

"दो मिनट क्या, दो घंटा कहिए ।" वे उठकर मेरे साथ भोजनालय के बाहर एक छज्जे के नीचे खड़ा हो गया ।

"कहिये सर !"

मैं पंद्रह मिनट चुप रहा ।

"क्या बात है सर, बोलते क्यों नहीं ।"

"मुझे कुछ रुपयों की जरूरत है ।" मैंने फुसफुसाते हुए कहा ।

"आपके पास कोई जेवर, आभूषण, यानी कुछ भी है?"

"देखिए, पत्नी के पास कुछ जेवर थे, उन्हें हमने बीमारी में लगा दिया । आभूषण के नाम पर ये दो अंगूठियां है । वैसे कोई भी पारखी जौहरी देखते ही कह देगा कि सिर्फ पुखराज तीन हजार का है । नीलम तेरह रत्ती का है और यह कम से कम छब्बीस सौ का है ।

"देखिए सर, हम लोग सोने के जेवर लेकर ही रुपयों का इंतजाम कर सकते है।"

"सुनिए, मैंने अपने बेटे को रुपयों के लिए लिखा है और वह चल चुका है रुपयों के साथ । सवाल सिर्फ यह है कि 19 जनवरी 1982 से लेकर 26 अगस्त 1982 तक लगातार बातचीत होती रही पर आपने मुझे पहचाना नहीं।"

"जो कहिए ।"

"आखिरी बात शर्मा जी, क्या आप पुखराज वाली अंगूठी के साथ किसी जौहरी के यहां चलने की तकलीफ करियेगा?"

"बहुत बड़े जौहरी की दुकान तो बगल में ही है । सामने से दायीं ओर मुड़ जाइए, सामने ही दुकान है ।"

"यानी मेरे साथ नहीं चल सकते आप?"

"क्षमा करें महाशय, यह हमारा ट्रेड सीक्रेट है । मैं उनके यहां नहीं जा सकता ।"

"अच्छा नमस्कार" मैंने कहा और धीरे-धीरे दिमाग में उठती आंधियों को बरजोरी रोकने की कोशिश करता मेन रोड पर आ गया । शर्मा ने ठीक कहा था । सामने तुंदिल जौहरी बैठा था और उसके ठीक पीछे तीन-चार मुनीम सींकिया पहलवानों की तरह बहीखाते को दुरुस्त करने में मशगूल थे ।

"आइए सेठ जी" मुझे देखकर वह असली सेठ बोला, "आप गुजराती?"

"बरोबर, आप को कैसे पता चला?"

"इस धंधे में हमारी दस पीढ़ियां लगी रही हैं अब तक । यह ट्रेड सीक्रेट है । ग्राहक को देखकर उसका नाम तो नहीं बता सकते, पर वह किस काम से आया है और कहां का रहने वाला है, खुल्लम-खुल्ला बता सकता हूं ।"

"तो बताइए क्यों आया हूं मैं?"

"आपके चेहरे से लगता है महाशय कि आप कुछ खरीदने नहीं आये हैं, बेचने आये हैं ।"

"और आपको यह भी मालूम होगा मिस्टर चेट्टी कि वह बिक्री का माल पुखराज की अंगूठी है । आप लोगों का एक गिरोह है वह बहुत चुस्त और दुरुस्त है । उत्तर भारत के लोगों को नंगा नचाने के लिएआप सब गिद्धों का हुलिया समान है ।"

"हें-हें-हें-हें" जौहरी बोला, "क्या आप अंगूठी दिखायेंगे ।"

मैंने अंगूठी निकालकर उसके हाथ में दे दी

"यह तो सात रत्ती से जरा भी कम नहीं होगी । प्रेशस स्टोंस को समझने वाला मेरा आदमी है नहीं यहां । अभी बुलवाता हूं ।"

"हां, यह सात रत्ती है और यह नीलम तेरह रत्ती ।"

"आपको सब याद है सर ।"

"बरोबर ।"

"खैर, आप क्या लेंगे सर? मतलब कि ठंडा या गरम?"

"मैं तो खाना खाकर आ रहा हूं सेठ, इसलिए सरद-गरम का तो सवाल ही नहीं है। हां, उस सामने वाली दुकान से एक पान मंगवा दो। एकदम सादा यानी चूना, कत्था, सुपारी के अलावा कुछ भी नहीं। एक सौ बीस मार्का जाफरानी सुरती जरूर पड़नी चाहिए।"

"आप खाना खाने तो ललित बिहार ही जाते होंगे।"

"और जगह कौन-सी है। इतनी खातिरदारी कौन करेगा यहां। शर्मा जी बेचारे बेहद सज्जन हैं, सबको अपना समझने वाले भोले-भाले इंसान हैं। ऐसा तो कर्ण के समान दानी मैंने देखा ही नहीं।"

"सर, आप उस कबाड़ी शर्मा की तारीफ कर रहे हैं। उत्तर भारत वाले पेशेंट्स और उनकी देख-रेख करने वालों से उसका भोजनालय भरा रहता है। वह आधे सूद यानी रुपया पीछे अट्ठनी तय करके पंद्रह दिनों के लिए उधार देता है। रुपया देने के पहले औरत के गले का नेलकैश, मंगलसूत्र, चूड़ियां सब उतरवा लेता है। उस साले को आप दानवीर कर्ण कहते हैं।"

"जरूरत के समय जो काम आये, उसे कर्ण नहीं तो क्या कंजूस कहा जायेगा।"

"शर्मा जी हमारे देश के हिंदीभाषी हैं सेठ। उन्होंने कहा कि अगर आपको पुखराज बेचना ही हो तो सड़क की बगल वाली दुकान पर मत जाइयेगा। वह अंग्रेजी में बोलता है। हाट या कोल्ड। और फिर बड़ी शराफत के साथ लोगों की जेब कतर लेता है।"

"अइय्यो, आइयो, सुना तुमने, वह स्साला शड़मा क्या बकता मेरे पर।"

"हम सब जानता सेठ", एक मुसलमान कारीगर ने पूछा, "कहां के रहने वाले हैं सर।"

"आपका नाम क्या है बिरादर?"

"सुलेमान।"

मैं अचानक गंभीर हो गया। मेरे कुर्ते, बच्चों के स्कूली ड्रेस, पत्नी के ब्लाउज ऐरू-गैरू दरजी तो नहीं सी पायेंगे जैसा सुलेमान मियां सीते थे।

"कुछ लग गया क्या सर, मैंने तो कोई उल्टी बात की नहीं।"

"आपके नाम के ही एक दरजी हैं सुलेमान मियां बनारस में, इन कुर्तों की सिलाई उन्होंने की है। जिसे देखकर तुम्हारा सेठ मुझे सेठ कहता है। यह मुझे गधा समझता है। शर्मा इस पर लानत भेजता है, जेबकतरा कहता है और तुम्हारा सेठ उसे गले से नेकलस और मंगलसूत्र छीन लेने वाला नीच आदमी कहता है। क्यों रे सेठ तेरी और शर्मा की राय बात कितने परसेंट कमीशन पर तय

होती है ।"

"देखो सेठ मुझे गाली मत दो, तुम अपना पुखराज लो और चलो यहां से।"

तभी रत्नों के पारखी दुकान में आकर बैठ गये । उन लोगों ने आपस में कुछ गुफ्तगूं की । पारखी जी बोले, "लाइए तो अपना पुखराज" वे उसे देखते हुए बिगड़े, "आपको ऐसे रत्नों को रखना भी नहीं आता । नायडू बच्चा । चल इसे साबुन में बरौंछी भिगो करके खूब साफ करके ले आ उन्होंने मखमल के कपड़े से पोंछकर देखा, "वाह, मुद्दत बाद असली पुखराज देख रहा हूं । अरे, सेठ जरा खुर्दबीन तो उठाना ।" मेरा मन दहशत में पड़ गया, "ठीक है, ठीक है । ई स्साले नायडू के बच्चे ने ऐसी बरौंछी रगड़ी कि एक बारीक बाल सटा दिया । मुझे शक हुआ कि कहीं क्रैकड तो नहीं है । उन्होंने खुर्दबीन से अंगूठी को अलग किया । स्टोन तो अच्छा है । नाउ टेल प्लीज ह्वाट इज योर डिमांड । यू वांट टू सेल इटआउट राइट आर यू विश टु मार्टगेज इट ।" (पूरी बिक्री या रेहन, क्या चाहते हैं आप?)

"आप आउट राइट सेल में कितना देंगे?"

"आप कहां के रहने वाले हैं सर?"

"मैं वहां का हूं श्रीमान, जहां मार्टगेज और सेल में बहुत फर्क नहीं पड़ता । मैं खांटी बनारसी हूं । बोलिए, सात रत्ती के पांच सौ वर्ष पुराने इस टोपाज की कीमत कितनी देंगे?"

"अधिक से अधिक सात सौ रुपया ।"

"यानी सौ रुपये रत्ती ।"

"जी हां ।"

"थैंक यू सेठ, एंड थैंक यू मिस्टर एक्सपर्ट । (ऐ सेठ तुम्हें नमस्कार है और इस विशेषज्ञ को नमस्कार है ।")

"रुकिए हमारा अंतिम आफर तो सुनते जाइए ।"

"बताइए तो आपका अंतिम आफर क्या है?"

"चौदह सौ"

"इसे रख लो और मुझे पंद्रह सौ रुपये दे दो ।"

"आउट राइट सेल या रेहन?"

"रेहन यानी मार्टगेज । एक छपी रसीद दो कि सोने की रिंग और 7 रत्ती का पुखराज रेहन रखा गया है ।"

"नमस्कार", मैंने कहा और चला आया ।

"कुछ बोले नहीं हुजूर, तबीयत नासाज तो नहीं है?" हयात ने कहा, "उस दिन तो चित्राजगजीत के गजल ऐसे सुन रहे थे जैसे कोई न्यामत मिल गयी हो।"

"नहीं यार गाना यह भी वैसा ही है, आज तोडा मूड दूसरा है। वैसे भी मैं राही की कद्र करना जानता हूं।"

तब तक शर्बत आ गया। हयात ने पूरी कलाकारी के साथ पेश किया गिलास। "जीओ प्यारे क्या बन गयी है चीज।"

"डॉ. साहब, आप अफसाना निगार है, जुबान पर कब्जा है आपका। आप गाली भी देंगे तो इत्र के फाहे मे बंद करके कि ना करते बनता है न हां करते।"

"यार हमसे ज्यादा तो कब्जा जुबान पर तुम्हारा है। ससाले इत्र का नाम लिया तो विश्वनाथ मंदिर की गली से सरस्वती फाटक की ओर चलने पर बायीं ओर के इत्र दुकानदार की याद आ गयी जो इत्रों का काकटेल (मिश्रण) बना र करता था।"

तभी रहमान मियां आये।

"आदाबर्ज!"

"नमस्करा, रहमान साहब।"

"कहिए डॉ. साहब, आज आप बहुत गमगीन लगते है। सब खैर तो है?"

"हैं, मगर मैं आपसे एक डिमांड के सिलसिले में मिलना चाहता हूं।"

"बाहर चलना होगा।"

"ठीक रहेगा, बाहर ही।"

सूरज की कडी धूप के अलावा सी. एम. सी के बाहर कहीं छाया नहीं थी। बेल्लौर की धूप अपना जवाब नहीं रखती। ऐसी चुभन होती है बदन में कि आंखों के आगे लुत्ती चमकने लगती है। मैं इस धूप से बहुत डरता हूं। जब सायटिका थी और मैं प्रेमचंद पुरस्कार ग्रहण करने लखनऊ गया था तो बेहोश हो गया। ब्लडप्रेशर, हार्ट बीट्स, सब कुछ सामान्य यानी नार्मल। गवर्नर के निजी डॉक्टर ने कहा, "हीट स्ट्रोक"

"खैर, रहमान मियां से वे तमाम बातें हुईं जो शर्मा और तुंदिल जौहरी से हुई थी।"

"देखिए डॉ. साहब, आप दिल के बहुत सेंसटिव आदमी है। जब एक्सपर्ट चौदह सौ दे रहा था तो आपको अंगूठी बंधक रख देनी चाहिए थी। आपने खुद ही कहा था शर्मा से कि नरेंद्र बाबू रुपये लेकर चल चुके है। रहमान को माफ करिए साहब, हम लाचार है।" शर्मा से मैंने नरेंद्र का नाम नहीं लिया था। रहमान

मिया को कैसे पता कि मैंने शर्मा से बात की । मैं चुपचाप सी. एम. सी. के ओ वार्ड में चला गया । 48 नं. के कमरे में मंजु लेटी थी । उसने चेहरा देखते ही कहा, "नहीं हुआ न इंतजाम?"

मैं कुछ नहीं बोला, "जरा दायीं हथेली तो दिखाइए ।"

"क्यों?"

"ऐसे ही । वह पुखराज की अंगूठी क्या हुई?"

मैं कुछ नहीं बोला ।

"एक अहमक लड़की को बचाने के लिए आप हरिश्चंद्र की तरह खूसट डोमों के यहां दौड़ते रहेंगे ।"

वह इस बार सिसक सिसक कर नहीं, भोजपुरिया में कहूं तो फैंकर फैंकर कर-रोने लगी ।

"मैंने वेचा नहीं है, रेहन रखकर रुपये ले आया हूं । वह भी कम नहीं, दाम से कुछ ज्यादा ही ।"

"आप इस तरह कब तक जूझते रहेंगे । मैंने आपको मना किया कि आप इस चक्रव्यूह में मत घुसिए । सच तो यह है कि मैं उस समय यह कल्पना भी नहीं करती थी कि बदनीयती और मक्कारी का नाम है धर्म । क्रिश्चियन, हिंदू और मुसलमान धर्म के नाम पर पोशाकें अलग-अलग ढंग की भले ही पहन लें, खून चूसने में सब एक जैसे हैं ।"

"अब का होई सौ रुपया रोज केराया बढ़त रही ।" पत्नी बोली ।

मैं चिड़चिड़ा हो गया था, "का करीं, अपने के बेचीं भी त कोई ना खरीदी । जवन दाम बकरा-बकरी क होला ऊहो त नाहीं मिली ये देंह क ।"

मंजु सिसकने लगी ।

मैं चुपचाप उठा और डॉ. ए. पी. पांडेय के पास पहुंचा । सारी स्थिति का ब्यान किया । उन्होंने कहा, "बकाया चार हजार तो भरना ही पड़ेगा । मैंने आपसे साफ-साफ कह दिया था कि यहां सब कुछ मन का एक छलावा है । यह सब होने पर भी कोई गारंटी नहीं कि वह छः महीना ठीक रहेगी या पांच साल, इससे ऊपर एकाध लोग ही चल पाते हैं । उनकी भी सीमा है सात साल।"

उन्होंने एक चिट निकाली । उस पर कुछ लिखा और बोले, "अगर मेरे पास रुपये होते तो मैं कुछ कर सकता था । ऑपरेशन की फीस में से जो अंश मुझे मिलता वह मैंने छोड़ दिया है । अब कागज लेकर किरुबाकरन से मिलिए । जो कुछ हो सकता है वही करेंगे ।"

मैंने कागज लिया और यूरोलाजी से निकलकर नेफ्रोलाजी की ओर चल पड़ा । दोनों विभाग अलग-अलग बिल्डिंगों में थे । पर कोई दूर नहीं थे ।

'प्रो. किरुबारकन,

अब यह पार्टी पहले की तरह 'सालिड' नहीं है। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि ओ-वार्ड के बिल को फिर से देखें, अंग्रेजी में ए दो वाक्य थे।

सिस्टर्स, वार्ड ब्याय सब हमें या तो इस नजर से देख रहे थे जैसे दुःशासन को द्रौपदी का चीर-हरण करते समय परिजन देख रहे थे। पांडवों ने तो गर्दन भी नहीं उठायी।

"ह्वेन यू आर लीविंग द रूम।"

"वेट एंड सी।"

मेरा चेहरा देखकर वह कुछ और नहीं बोली। तभी नेफ्रोलाजी से एक चपरासी आया और उसने मंजु की फाइल मांगी। फाइल लेकर वह बिलिंग सेक्शन में गया। करीब आधे घंटे बाद वह चपरासी लौटा। नये बिल के साथ। पता नहीं आपको यकीन होगा या नहीं। पांच हजार सैंतालीस के बिल की जगह 1525 रुपये की बिल आयी। सेंट्रल बैंक के एकाउंट में तीन सौ रुपये शेष थे। पंद्रह सौ का मनीआर्डर आ चुका था।

मैंने ओ वार्ड का बिल 'पे' किया और हाउसिंग बोर्ड में लौट आया।

अंधेरी रात बहुत गहरा गयी थी। मैं एकटक क्या खोज रहा हूं इसमें। तभी विडंबना की एक मुसकुराहट होंठों पर आ गयी, ह्वाइ दिस फस फार नथिंग। तुम न अगेहानन्द हो और न तो अनिकेतन संन्यासी। उसने पूछने में कोई गलती नहीं की थी। तुम उसको हंसकर टाल सकते थे। क्या सचमुच नंगी जमीन पर सोना बुरा लगता है तुम्हें? क्या तुम्हारी शय्या का परिचय देते हुए डॉ. विवेकी राय ने नहीं लिखा कि लम्बी-चौड़ी काठ की चौकी। उसके ऊपर दरी। उसके ऊपर गलीचा उसके ऊपर तोशक और सबसे ऊपर रेशमी खादी का लम्बा-चौड़ा चादर—

> पलग नहिं सुतयि करयि मुसयाने
> अमिय नहि पियथि करथि विषपाने
>
> पीलो गरल, बिना गरल-पान के अमृत नहीं मिलता।
> तुम्हें नंगी पृथ्वी पर सोना सीखना चाहिए।

16

घर की तुलसी मुझसे इतनी दूर
ज्यों मरुक्षेत्रों से नदियों का पूर
दूर देस से मैं निर्वासित हूं
किसी विदेशी दंड विधानाबद्ध

(मुक्तिबोध रच. 2/51)

मैंने बार-बार सोचा है । एक वर्ष तक प्रवासी की तरह रहने वाले खानाबदोशों का डेरा-डंडा उठा । मेरी आंखों में शारदीय पवन की धीमी गति से झूलते पारिजात के फूलों को जो किरण स्पर्श से ही वृंतच्युत नीचे गिर रहे होंगे, सुधर्मा तो बिना पारिजात के सूना ही सूना है । हां, आंगन के उस तुलसी चौरे पर पूरे एक वर्ष तक घी का दीपक नहीं जला । मैं भी दंडविधानाबद्ध हूं पर विदेशी नहीं, हिंदुस्तानी हूं। हिंदुस्तान का एक जिंदा रेशा, ही था वेलौर पर क्या उसने कभी स्वदेशी रहने दिया?

श्रीकांत जब थे तो वे रत्नागिरि के मौनी बाबा के यहां गये । आकर बोले, "गुरुदेव, आज मन बहुत शांत है । सारा भार जो कमर तोड़ रहा था, हट गया है सीने पर से । मौनी बाबा तो चमत्कारों की खान हैं । जाते ही मैंने कागज पर मंजु का नाम लिखकर उन्हें दिया । मेरा प्रश्न था, "क्या वह बच जायेगी?"

उन्होंने सुदूर पूर्वी आकाश को एक क्षण देखा और लिखा कि देयर इज नो इनसर्टिंचूड । इनसर्टिंचूड का मतलब तो निःस्देह ही होता है न, गुरुदेव?"

"हां, होता तो है ।"

सप्ताह भर पहले तमिलनाडु में और आंध्रा में जोरदार बारिश हुई थी अतः कई गाड़ियां कैंसल हो गयी थीं । आज गंगा-कावेरी पहली बार वाराणसी के लिए चल पड़ी । पूरा परिवार—मैं पत्नी और पुत्र-पुत्री ।

"क्या सोच रहे हैं बाबूजी?" गाड़ी जब काजीपेठ पहुंची तो मंजु अचानक बोल पड़ी ।

"कुछ नहीं, नरेंद्र डब्बे के ठीक सामने आमलेट बन रहा है वहां । मंजु ने अब तक कुछ भी नहीं खाया । तुम भी खा लो । दो आमलेट ।"

"नहीं, बाबूजी ?"

"फिर?"

"तीन आमलेट, एक आपके लिए ।"

"क्यों का आपो अंडा खायेंगे?" पत्नी ने घृणा से मुझे देखा । राम-राम, सारी जिंदगी साधू जी कहात रहीं, अब अंडा खाने के मन ललचात हो ।

मैं और मंजु ठठाकर हंसे ।

"एम्मा हंसे क बात का हो?"

"इहे अम्मा जी कि बाबूजी, आमलेट ही नहीं, मांस-मछली, जाने के सु मलेच्छ लोग करेले कहत रहीं, ऊ सब तौर आल बनाके खात रहीं ।"

"सच्ची ।" उन्होंने घूरते हुए देखा ।

"अरे ई जैसे-जैसे बिढ़ा रहल है तू वैसे-वैसे लाल कपड़ा देखके सांड़ के नाईं नथुना फुलवत हो । गुस्सा की तरह तू सोच रही हो ।" नरेंद्र तब गरमा-गरम तीन आमलेट, थर्मस में चार काफी और अपनी माता जी के लिए समोसे लाये, तो उन्होंने पहले समोसे वाले कागज को माताजी के हाथ में दिया और काफी का थर्मस भी उन्हें ही सौंपा । मैं मुसकुरा रहा था । उसे डर था कि अगर आमलेट वाले दोने को पहले छूआ और मंजु को थमाया तो दूसरे समोसे को उसी हाथ से अम्मा की ओर बढ़ाने का मतलब था—छूत आचार और निरा युद्ध ।

"ले, बहुत बढ़िया हौ ।"

"हो त ओही दुकान के ।"

"पूरी रेल गाड़ी में जो लोग यात्रा कर रहे हैं वे सब ब्राह्मण और क्षत्रिय ही हैं, अरे तुमें साल भर हो गया अपनी परछाईं से लड़ते पर कुछ सीख नहीं पायीं । नदि से गंदे बाथरूम में कैन्दस्त धोने वाली जगह पर भंगिनी से टकराती रहीं, पर लाचारी कहकर उसे सहने के अलावा रास्ता क्या था । जमाने के हिसाब से चलना सीख ।" नरेंद्र ने अम्मा को प्रबोधा ।

23 नवंबर को रात बारह बजे के बाद हम जब वाराणसी उतरे तो मंजु खिलखिलाई, "हाय बनारस !"

वाराणसी आते ही जोरदार गरमजोशी के साथ स्वागत करने पहुंचे डॉ. रामनारायण शुक्ल, श्रीकांत, ओम प्रकाश द्विवेदी आदि । सारी जनताई सेना।

जब हम गुरुधाम पहुंचे तो मैं मुंह हाथ धोकर, कपड़ा बदलकर अपने कमरे की चौकी पर लेट गया ।

"बाबूजी !" मंजु बोली, "जरा बाहर चलिए ।"

मैं वाहर आया तो देखा ऊपरी बरामदे पर दर्जनों मोमबत्तियां जल रही थीं। रात्रि के दो वज रहे थे। श्रीकांत को छोड़कर शेष लोग जा चुके थे। मैं वैसे ही अन्यमनस्क भाव से लेटा हुआ था।

वैद्ययत्न परिभाविनं गदं
न प्रदीप इव वायुमत्यगात् रघु. 19/53

पता नहीं क्यों सब कुछ कर-करा कर लौटने के वाद भी मेरा मन स्थिर नहीं था। जव कालिदास की पंक्ति मन में कौंधी तो मैं अंतर्मुखी होने लगा। वैद्य रोग को दूर करने में असफल होते हैं, जैसे वायु के आगे प्रदीप का कोई वश नहीं चलता।

डॉ. ए. पी. पांडेय का कहना ठीक था कि प्रति मास, जव तक रोगी जीवित रहेगा, आपको पांच सौ के करीव दवा में खर्च करना पड़ेगा। सारी परेशानी 'इमरान' के कारण थी जो वेल्लौर के डॉक्टरों के अनुसार लेना ही लेना था। यानी मस्ट। वह काशी में दुर्लभ हो जाता था उसे लंदन से मंगवाना पड़ता था। इस तरह दाम भी वढ़ जाता था। यद्यपि तपेदिक वाली दवा की जरूरत नहीं थी तो भी, इन्ड्राल, अर्कामाइन, डेलटाकार्टिल और इन सबकी ज्वाला को संभालने के लिए आलूफ्राक्स अथवा डाइजिनजेल चाहिए ही चाहिए था। अभी दो दिन भी नहीं वीते थे कि वह बोली, "वावूजी, आप भूल गये क्या ? आज शनिवार है, हमें व्लड टेस्ट के लिए चलना है कि नहीं?"

"हां, मुझे सचमुच याद नहीं रहा। कपड़े पहन लिये हैं तुमने। मैं जरा धोती वदल लूं।"

कुल वासठ रुपये। व्लड टेस्ट करने वाले तो दर्जनों थे, पर हमें लगभग यानी एप्राक्समेटली नहीं, राई-रत्ती ठीक पता चलना चाहिए था। इसलिए अपने अस्पताल को भी छोड़कर निदान केंद्र जाना पड़ता। पहले टेस्ट की रिपोर्ट देखकर संतोष हुआ कि यद्यपि क्रियेटनिन एक दशमलव पांच से एक दशमलव छः थी पर इतनी मार्जिन तो वेल्लौर में भी चलती रहती थी। दो टेस्ट प्रति सप्ताह के स्थान पर मैंने कहा कि अव हफ्तेवार टेस्ट चलना चाहिए।

इस वीच अचानक इस शिशिर शीर्ण सुधर्मा में मधुमास वाली वेला उतर आयी। टीरो ग्रामवासी उदयी सिंह दो दिन वाद अपनी पुत्री को वगल के मानस मंदिर में ले आने वाले थे। वे यद्यपि मंजु की डायलसिस के दिनों में नेफ्रोलाजी के वाहरी

बैठके में आते रहे। पर मैं मौन रहा। उस वक्त उन लोगों ने मुझे बहुत प्रेशराइज्ड किया कि काशी के प्रसिद्ध नागरिक श्री रामनारायण सिंह की कन्या से नरेंद्र की शादी हो जाय।

मैंने डांट दिया, "आप लोग इंसान है या भुक्खड़ तेंदुआ। यह समय है शादी के बारे में चर्चा करने का?"

अब पहले वाली शर्त को अजमाने आये ये दोनों जन। और कुंडली वगैरह ठीक-ठाक देखकर लड़की दिखलाने की बात सामने आयी। मैंने नरेंद्र से पूछा कि तुम्हारी राय क्या है?

"आप जब पांच हजार का रत्नहार और आठ सौ की वाराणसी साड़ी ले आये है तो मुझसे राय पूछने की क्या जरूरत थी?"

"तो क्या हर चीज का निर्णय बाबूजी तुमसे पूछ-पूछ कर करेंगे। जाने दीजिए बाबूजी, यह साड़ी और यह नेकलेस दोनो लौटा दीजिए। आपने जब कहा कि तेरे साथ बोलने-बतियाने वाली एक सुंदर-सी लडकी आ जायेगी तो मैं न चाहते हुए भी मान गयी थी कि शायद आपही की बात सच हो। मैंने जिंदगी भर आधे से भी अधिक समय एकांत में ही तो काटे है, पर भइया ठीक कह रहा है।"

तब तक पत्नी आ गयी। सारी बात सुनकर बोली, "अगर नरेंद्र के लड़की पसंद ना आई तब हम उसे नेकलेस और साड़ी क्यों देंगे?"

नरेंद्र कुछ नहीं बोला। शाम को अपनी जीप पर अपनी लड़की और अन्य लोगों को लादे हुए बाबू उदयनारायण सिंह आये और सबको मानस मंदिर छोड़कर हमारे मकान पर पहुंचे।

हम चार जन तथा कनक और उसकी माता सुजाता जी मानस मंदिर पहुंचे, लड़की से बातचीत अभी तक सुजाता जी, मेरी पत्नी जी, मेरी दाई जी आदि ने की। तभी कनक और मंजु लौटीं। वे दोनों मेरे पास पहुंचकर बोलीं, "हमें तो पसंद है भाई, अब भइया को पसंद आयेगी कि नहीं, हम नहीं जानते। वे दोनों चली गयीं। मैंने नरेंद्र से कहा, "क्या राय है, उसे देखने जाओगे या नहीं— इसमें शर्माने की बात क्या है। हां, अगर तुम्हारे मन में कोई और हो तो तुम साफ-साफ कह दो मुझे। मैं जोर नहीं डालूंगा बल्कि तुम्हारी पसंद लड़की को मैं अपनी बहू बनाकर घर ले आऊंगा।

वह एक क्षण मेरी आंखों में झांकता रहा, "ठीक है बाबूजी, मैं उसे देखने जा रहा हूं।"

"सुनो, सोच लो, अगर देखने गये और अस्वीकार किया तो यह एक परिवार का अपमान माना जायेगा। इससे फंसकर निकल जाने का एक ही रास्ता है, वह

यह कि तुम लड़की देखने मत जाओ ।"

उसका कंठ अवरुद्ध हो गया । मैंने तुरंत विचार बदल दिये । मैंने कहा, "उपेंद्र, अब दोनों पार्टी बैरंग रवाना होगी ।"

"क्या कह रहे हैं मौसा, कौन-सा मुंह दिखायेंगे बाबू उदयनारायण सिंह । ई सब तो पहले ही सोच लेना चाहिए था । फोटो भी भेज दिया था आपके पास, ई सब तो केवल ऊपरी बातों की औपचारिकता निभाने के लिए किया जा रहा था । लड़की क्या काली है? चेहरा ठीक-ठाक है कि नहीं? कहीं लड़की लंगड़ी तो नहीं है, गूंगी तो नहीं है, हमें फंसाया तो नही जा रहा है? मौसा, क्या चमड़ी का रंग-रोगन खराब है? कोई गड़बड़ी हो तो बोलिए ।"

नरेंद्र ने कहा, "बाबूजी मैं भी औपचारिकता निभाने जा रहा हूं ।" मुझे उसके चेहरे से लगा कि एक मतवाले हाथी पर मैंने अंकुश मार दिया है । एक दिन मैं लाइब्रेरी से लौट रहा था कि सामने तीन जन दिखे और तीनों इस तरह गर्दन लटकाये खड़े हो गये कि बिना उन्हें देखे चला जाऊँ । दो तो थे उमेश और नरेंद्र लेकिन तीसरी कोई छात्रा थी जिसे मैं पहचान नहीं सका । मैंने कहा, "पान खाने में गर्दन झुकाने की कौन-सी जरूरत है ।" रिक्शा आगे बढ़ गया ।

आज वह उपेंद्र की बात से तिलमिला गया और कुमारी मीरा सिंह के पास पहुंचा । उसने लड़की का इंटरव्यू लेना शुरू कर दिया । मंजु, कनक, मीरा और नरेंद्र मंदिर के पिछवाड़े कें पास मंदिर की सीढ़ियों पर बैठ गये । क्या हुआ, क्या नहीं, यह तो मैं जान न पाया । बीस मिनट में वह लौटा । "ठीक है बाबूजी।"

"चलिए मौसा" उपेंद्र अकाल कुसुम की तरह खिल गये । आप 'अकाल कुसुम' जान जायेंगे तो उसका मतलब भी जान जाइयेगा । मैं, नरेंद्र और उपेंद्र लड़की के पास पहुंचे, "मौसा के पांव छुओ मीरा ।" मैंने उसकी गर्दन में नेकलेस डाल दी और बनारसी रेशम की साड़ी उसके कंधे पर रख दी ।

फिर तमाम चीजें, जो औपचारिकता से शुरू हुई और औपचारिकता में समा गयीं । दोनों पार्टियों के साथ आये नाई, बारी, दाई सबको दक्षिणा देकर और उदयी सिंह के रसगुल्ले खाकर हम लौट आये ।

नरेंद्र की शादी होगी इस साल, यह समाचार चौखंड देहात में फैल गया था। अतः जिसका मुझ पर दबाव पड़ सकता था उसे लेकर मेरे पास भीड़ लगने लगी । मैं गणेश सिंह नहीं हूं ।

हमारे मुल्क में शादियों के पीछे जाने कितने खुले-अनखुले दांव-पेंच चलते हैं, इसे सब नहीं जानते । अधिक से अधिक दहेज का मसला उभरकर सतह पर आया

है, पर दहेज-लोलुप [illegible]
गणेश सिंह कई बार [illegible]
सीर जमीन है मेरे पास । [illegible]
नाती का रिश्ता तय करूं? [illegible]
तिलकहरुओं को [illegible]
रोटी और आलू का चोखा खाते थे । [illegible]
लड़के देखने में तिलकहरू [illegible]
थे, चक्कर खाकिर होती थी । [illegible]
पावन-शक्ति अद्भुत होती [illegible]
जानी वाली धन-राशि को [illegible]
अतिथि देवोभव" [illegible] नहीं [illegible] । [illegible]
गोटियां हमेशा पिट जाती थीं । [illegible]
था।

मंजु को इतनी प्रसन्न मैंने कभी नहीं देखा । उसने आकस्मिक आवश्यकताओं पर लदे बोझ को उठाने में अपनी सारी शक्ति लगा दी । आनुष्ठानिक रीतियों के बारे में मेरी जानकारी बिल्कुल शून्य के बराबर थी । वही हालत अच्छी साड़ियों के बारे में भी लागू होती है । यह सब मंजु कर रही थी, मैं तो पैसे देने वाला एक दाता मात्र था जिसे बाजार में कोई भी ठग सकता था । यानी पिछले पैंतीस वर्ष मैंने इस तरह से जिया था कि जिसे 'पद्मपत्रमिवाम्भसा' कह सकते हैं । आकाशीय पानी में नहीं बस दुनियादारी के मामले में ।

तिलक का भोज, शादी, आशीर्वाद गोष्ठी-इन सबके पीछे केवल मंजु थी । हालांकि उसे बिल्कुल अनुभव नहीं था इनका । न शादी की पेचिदगियों को सुलझाने का भार कभी उसके सामने आया । तो भी वह हरक्षण अपने को इस तरह मशगूल रखने लगी कि मैंने राहत की सांस ली । कैसे हर बिगड़ती बात को नया मोड़ दे देती और बोझिल बातों का दबाव खत्म हो जाता था । यह उसका एक नया रूप था । मैं सब कुछ देखकर मुसकुराना चाहता था, दिखाता भी रहा, पर क्या एक लंबे समय के लिए इस तरह की उन्मुक्तता उसे मिलेगी । क्या घड़ी की सूई इसी तरह अबाध चलती रहेगी, यह मेरे मन का चोर बोल रहा था । वह बार-बार झनझना उठता । कर्ज के बोझ, हरमास पांच सौ रुपयों की दवाएं, चार-चार टेस्ट्स यानी दो सौ चालीस रुपये और मैं इसे सह रहा था और मन की अंतर्तम निष्ठा के साथ, इसे सहते रहने के लिए तैयार था । मैं जानता था कि मैं बिरला, टाटा अथवा इन्हीं तरह के दूसरे महानुभावों का एजेंट या सर्वसम्पन्न

यह कि तुम लड़की देखने मत जाओ ।"

उसका कंठ अवरुद्ध हो गया । मैंने तुरंत विचार बदल दिये । मैंने कहा, "उपेंद्र, अब दोनों पार्टी बैरंग रवाना होगी ।"

"क्या कह रहे हैं मौसा, कौन-सा मुंह दिखायेंगे बाबू उदयनारायण सिंह । ई सब तो पहले ही सोच लेना चाहिए था । फोटो भी भेज दिया था आपके पास, ई सब तो केवल ऊपरी बातों की औपचारिकता निभाने के लिए किया जा रहा था । लड़की क्या काली है? चेहरा ठीक-ठाक है कि नहीं? कहीं लड़की लंगड़ी तो नहीं है, गूंगी तो नहीं है, हमें फंसाया तो नही जा रहा है? मौसा, क्या चमड़ी का रंग-रोगन खराब है? कोई गड़बड़ी हो तो बोलिए ।"

नरेंद्र ने कहा, "बाबूजी मैं भी औपचारिकता निभाने जा रहा हूं ।" मुझे उसके चेहरे से लगा कि एक मतवाले हाथी पर मैंने अंकुश मार दिया है । एक दिन मैं लाइब्रेरी से लौट रहा था कि सामने तीन जन दिखे और तीनों इस तरह गर्दन लटकाये खड़े हो गये कि बिना उन्हें देखे चला जाऊँ । दो तो थे उमेश और नरेंद्र लेकिन तीसरी कोई छात्रा थी जिसे मैं पहचान नहीं सका । मैंने कहा, "पान खाने में गर्दन झुकाने की कौन-सी जरूरत है ।" रिक्शा आगे बढ़ गया ।

आज वह उपेंद्र की बात से तिलमिला गया और कुमारी मीरा सिंह के पास पहुंचा । उसने लड़की का इंटरव्यू लेना शुरू कर दिया । मंजु, कनक, मीरा और नरेंद्र मंदिर के पिछवाड़े के पास मंदिर की सीढ़ियों पर बैठ गये । क्या हुआ, क्या नहीं, यह तो मैं जान न पाया । बीस मिनट में वह लौटा । "ठीक है बाबूजी।"

"चलिए मौसा" उपेंद्र अकाल कुसुम की तरह खिल गये । आप 'अकाल कुसुम' जान जायेंगे तो उसका मतलब भी जान जाइयेगा । मैं, नरेंद्र और उपेंद्र लड़की के पास पहुंचे, "मौसा के पांव छुओ मीरा ।" मैंने उसकी गर्दन में नेकलेस डाल दी और बनारसी रेशम की साड़ी उसके कंधे पर रख दी ।

फिर तमाम चीजें, जो औपचारिकता से शुरू हुई और औपचारिकता में समा गयीं । दोनों पार्टियों के साथ आये नाई, बारी, दाई सबको दक्षिणा देकर और उदयी सिंह के रसगुल्ले खाकर हम लौट आये ।

नरेंद्र की शादी होगी इस साल, यह समाचार चौखंड देहात में फैल गया था। अतः जिसका मुझ पर दबाव पड़ सकता था उसे लेकर मेरे पास भीड़ लगने लगी । मैं गणेश सिंह नहीं हूं ।

हमारे मुल्क में शादियों के पीछे जाने कितने खुले-अनखुले दांव-पेंच चलते हैं, इसे सब नहीं जानते । अधिक से अधिक दहेज का मसला उभरकर सतह पर आया

है, पर दहेज-लोलुप लोगों के क्रिया-कलाप अजीब होते हैं । मसलन मेरे पितामह गणेश सिंह कई बार खुलेआम कहते थे कि बीस हल चलते हैं मेरे, एक हजार बीघे सीर जमीन है मेरे पास । मैं क्यों किसी टुटपुंजिये की लडकी से अपने लड़के या नाती का रिश्ता तय करूं ? गणेश सिंह जो कहते थे वह सब उपरफट्दू बातें थीं । तिलकहरुओं को शुद्ध देसी घी में किसमिस पडा हलुवा खिलाते थे । अपने खुद रोटी और आलू का चोखा खाते थे । जाहिर है, तपती गरमी की धूप में दूसरे गांव लड़के देखने में तिलकहरू इतनी जल्दी क्यों मचाएं, जहां उन्हें नाऊ-बारी नहलाते थे, छककर खातिर होती थी । मैं कभी-कभी सोचता हूं कि ऐसे लोगों की पाचन-शक्ति अद्भुत होती होगी जो इस अतिति-सत्कार में दहेज के रूप में दी जानी वाली धन-राशि को एकदम दूनी कर देते थे । लगे जो लगना हो । "ऐसा अतिथि देवोभव" ढूंढे नहीं मिलेगा । गणेश सिंह के सामने तिलकहरुओं की गोटियां हमेशा पिट जाती थीं । यह ज्ञान पीढ़ियों से उन्हें विरासत में मिला था।

मंजु को इतनी प्रसन्न मैंने कभी नहीं देखा । उसने बाकायदा 'बाबूजी' पर लदे बोझ को उठाने में अपनी सारी शक्ति लगा दी । आभूषणों के बारे में मेरी जानकारी बिल्कुल शून्य के बराबर थी । वही हालत अच्छी साडियों के बारे में भी लागू होती है । यह सब मंजु कर रही थी, मैं तो पैसे देने वाला एक यात्री मात्र था जिसे बाजार में कोई भी ठग सकता था । यानी पिछले पैंतीस वर्ष मैने इस तरह से जिया था कि जिसे 'पद्मपत्रमिवाम्भसा' कह सकते हैं । आकाशीय पानी में नहीं बस दुनियादारी के मामले में ।

तिलक का भोज, शादी, आशीर्वाद गोष्ठी-इन सबके पीछे केवल मंजु थी । हालांकि उसे बिल्कुल अनुभव नहीं था इनका । न शादी की पेचिदगियों को सुलझाने का भार कभी उसके सामने आया । तो भी वह हरक्षण अपने को इस तरह मशगूल रखने लगी कि मैंने राहत की सांस ली । कैसे हर बिगडती बात को नया मोड दे देती और बोझिल बातों का दबाव खत्म हो जाता था । यह उसका एक नया रूप था । मैं सब कुछ देखकर मुसकुराना चाहता था, दिखावा [illegible] पर क्या एक लंबे समय के लिए इस तरह की उन्मुक्तता उसे मिलेगी । [illegible] की सूई इसी तरह अबाध चलती रहेगी, यह मेरे मन का चोर [illegible] । [illegible] बार-बार झनझना उठता । कर्ज के बोझ, हरमास पांच [illegible] चार-चार टेस्ट्स यानी दो सौ चालीस रुपये और मैं इसे सह [illegible] अंतर्तम निष्ठा के साथ, इसे सहते रहने के लिए तैयार था । [illegible] बिरला, टाटा अथवा इन्हीं तरह के दूसरे महानुभावों का [illegible]

चाटुकार न बना, न बन पाऊंगा । पर यह लड़ाई जिस तरह जीती थी हमारे परिवार और हृदय के निकटतम रहने वाले मेरे शिष्यों ने, वह खुद में एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी । पर इसी तरह गाड़ी कब तक चलती रहेगी, इसे मैं अपने भीतर के अंतर्यामी से पूछ रहा था । उत्तर मिला,

बशर्ते तय करो तुम
किस ओर हो तुम अब
सुनहले ऊर्ध्व आसन के
निपीडक पद्म में, अथवा
कहीं उससे लुटी टूटी
अंधेरी निम्न कक्षा में तुम्हारा
मन

मैं बार-बार सोचता हूं उन लोगों के बारे में जो सर्वहारा की बात करते हुए बारीक से बारीक खादी की धोती और कतान सिल्क के कुर्ते पहनते हैं । कहीं भी जाने के लिए आपको वायुयान का प्रबंध न हो तो आप तुनक जायेंगे । अपनी उन्नति के लिए कामरेड डांगे के आने पर आप इंतजार में रहते थे कि कैसे कार का निकसार खुले और सबसे पहले उनके चरण छूने का आपको अवसर मिले । मैं कामरेड डांगे, कामरेड ए. बी. सी. यानी ढेरों लोगों को देख चुका हूं जो सुनहले ऊर्ध्व आसन में ऐय्यासी में डूबे रहते हैं, अपने चमचों को भी उसी दर्जे की थोड़ी जूठन चटाते रहते हैं । मैं न तो कभी उस निपीडक पद्म में आसन ग्रहण करने के लिए ललचाया न तो मुझे किसी विकल्प की खोज करनी पड़ी, मैं तो लुटी टूटी अंधेरी निम्न कक्षा में ही रहा, और वही मेरे लिएअन्ततः मरण का केंद्र भी बनेगी । मैं पूर्णकाम हूं, पूर्ण संतुष्ट हूं, लुट गया कैसा लगा, निहाल हुआ । टूटा कैसा लगा । कभी गर्दन नहीं लटकायी । बोझ लदा, क्या किया । पंचकोसी यात्रा में बने बोझ टेक का सहारा नहीं लिया, बस चरैवेति, चरैवेति...

शादी के छह महीने बाद मंजु की हालत बिगड़ने लगी । मैंने सारी बातें जब प्रो. कमलाकर त्रिपाठी को बतायीं तो वे बोले, "डॉक्टर साहब, किडनी का क्रानिक रिजेक्शन शुरू हो गया है । साल भर, डेढ़ साल में जो धीमे-धीमे चल रही है, वह भी बंद हो जायेगी ।"

शाम को मंजु की कुछ सहेलियां आयीं । एक ने कहा, "मंजु, तुम्हारे चेहरे की सूजन नहीं गयी । तुम एक बार वेल्लौर क्यों नहीं हो आती । उन लोगों ने तो छह

महीने के बाद तुम्हें बुलाया था ।"

"क्या सोचा?" दूसरी बोली, "कब जाओगी?"

"जब बाबूजी की मिहरबानी हो जाय ।"

मैंने यह वाक्य सुना तो अचानक मन आघात से तिलमिला उठा । मैंने पुनः सात हजार बतौर ऋण लिया भविष्य-निधि से और नरेंद्र, मीरा, मंजु और मैं चल पड़े पुनः उसी जगह जहां न चाहते हुए भी जाना पड़ा ।

तीन-चार दिनों तक सब टेस्ट होते रहे । स्कैनिंग मशीन ने घोषणा कर दी—क्रानिक रिजेक्शन ।

तीसरे दिन की बात है । वह ब्लड टेस्ट के लिए नेफ्रोलाजी में जा रही थी, ब्लड दे दिया और कमरे में चारपाई पर गिरकर रोने लगी ।

"क्यों, क्या हुआ? कोई बात हुई?"

"नहीं ।"

"फिर?"

"बाबूजी, मैं जीना नहीं चाहती । मेरे चेहरे को देखकर लोग हंसते हैं । मैं अगर एक-दो साल जी भी लूं तो हंसते लोगों का चेहरा मैं नहीं झेल पाऊंगी । बाबूजी, अब लौटना है ही, मुझे तिरुपति में वेंकटेश्वर भगवान का दर्शन करा दीजिए । पैसा तो है न?"

"उसकी चिन्ता मत कर, हम कल ही दर्शन के लिए जायेंगे । उसने दर्शन किया, उछलती-कूदती रही । मैं सोचता था कि इस उछल-कूद को क्या समझूं । मृत्यु को यथाशीघ्र बुलाने के लिए ही वह तिरुपति आयी है । अब उसे किसी का डर नहीं, वेंकटेश्वर ने अभय वरदान दे दिया है, मा भैषी ।

शादी के डेढ साल बाद यीशु का जन्म हुआ । यीशु यानी ईशिता यानी अष्ट सिद्धियों में एक अथवा भगवान शिव के चरणों में अर्पित एक श्रद्धा-सुमन । मैं प्राइवेट वार्ड में पहुंचा तो देखा इंदु खन्ना और मंजु दोनों मेरी पुत्रवधू मीरा के केशों को सुलझाने में मग्न हैं ।

"बाबूजी ।"

"हां, जरा इसे भी देख लीजिए ।"

"मैं बाहर इसलिए नहीं जा रहा हूं बेटे कि उसे देखना नहीं चाहता, सिर्फ इसलिए कि तुम लोग केश सवार लो तो आऊं ।"

"बैठिए, यहां बाहर का कौन है ।"

मैंने मीरा की बेड से सटे पालने में सोई एक गुड़िया जैसी लड़की देखी । बहुत कमजोर, बहुत कोमल । मैंने जब उसे उठाया तो लगा कि कोई छोटी-सी मैना है जिसके दिल की धड़कन का बोध हरक्षण होता रहता । मैंने उसे पुन. पालने में रख दिया क्योंकि वह इतनी गिजगिजी लग रही थी कि उसे पकड़ने में भी डर लगता

था कि कहीं वह हाथ से छूट न जाय ।
मंजु ने पुनः चारपाई पकड़ ली । टेस्ट से पता चला कि क्रियेटनिन करीब दो दशमलव पांच से बढ़कर दो दशमलव नौ हो गयी है । और ब्लड यूरिया 116 । मैंने अत्यंत सुहृद और कला-प्रेमी डॉ. कमलाकर जी को बुलवाया । वे नरेंद्र के साथ आये । उन्होंने सोच-विचार कर कहा, "घबराने की जरूरत नहीं है । यह सब तो होता ही रहता है । मैं आज डेल्टाकार्टिल की टेन एम. जी. वाली दस गोलियां दे रहा हूं । कल रविवार है और रिपोर्ट शाम को निदान केंद्र से नरेंद्र जी ले आयेंगे । उस पर विचार करके हम आगे के उपचार के बारे में सोचेंगे ।"

17

जिंदगी का सफ़र है यह कैसा सफ़र
कोई समझा नहीं कोई जाना नहीं
जिंदगी को बहुत प्यार हमने दिया
मौत से भी मोहब्बत निभायेंगे हम
रोते-रोते जमाने में आये मगर
हंसते-हंसते जमाने से जायेंगे हम

हल्की सिसकारियां । आंखों के आंसुओं को आंखों से ही पी जाने की कोशिश । क्या करूं मैं, क्या करूं, कहां ले जाऊं । मुझे यूनिवर्सिटी जाना था । मन मारे चला गया।

मैं यूनिवर्सिटी से लोटा तो पत्नी ने बताया कि यह लिफाफा बगल वाले डॉ. देशपांडे साहब ने दिया है । हाथ मुंह धोकर, कपड़ा बदलकर मैंने वह पैकेट उठाया तो उसमें एक मैगजिन दिखी । वह रोटैरियन पत्रिका थी जुलाई 1984 की । मैं सोचता रहा कि डॉ. देशपांडे साहब ने भेजी है तो कोई खास बात होगी । खास बात थी । उस पत्रिका में किडनी ट्रांसप्लांट के बारे में एक ऐसे व्यक्ति ने लिखा था जो 45 वर्ष तक मर-मरकर जीता रहा । वह है शेल्डेन मिल्के । रोटरी-क्लब फोर्ट अटकिन्सन, विस कानसिन, यू. एस. ए. । पिता पत्नी और पुत्री के त्रिभुज को अचानक 'समथिंग' छू गयी । शेल्डेन बीमार हुआ और सिद्ध हो गया कि उसके दोनों गुर्दे एकदम नष्ट हो चुके हैं । वह सधे हुए उद्योगपति की तरह हीमो डायलसिस पर निर्भर हो गया । रात भर डायलसिस और दिन भर आफिस। उसने इस दरम्यान दो किडनी ट्रांसप्लांट भी कराये पर वे सब एकाध वर्ष तक चले और शरीर ने उन्हें रिजेक्ट कर दिया ।

इतनी बातें तो हम वेल्लौर से ही जान चुके थे इसलिए मैंने आगे पढ़ना शुरू किया । "निकट अतीत में किडनी ट्रांसप्लांट का मतलब था शुभ समाचार, अशुभ समाचार । शुभ समाचार यह कि प्रति वर्ष पांच हजार मरीजों का किडनी

ट्रांसप्लांट हो रहा है । बुरा समाचार यह कि प्रतिवर्ष 5000 मरीज ट्रांसप्लांट की प्रतीक्षा करते-करते मर जाते हैं । हमारे पास अस्पताल हैं, सर्जन हैं, ट्रांसप्लांट की सारी चीजें हैं, सिर्फ अभाव है एक चीज का कि मरीजों को किडनी नहीं मिलती।"

10 मरीजों में जो किडनी की प्रतीक्षा कर रहे हैं, सात ऐसे हैं जो रक्त संबंध से जुड़ी किडनी से वंचित हैं । कभी-कभी दो-दो वर्ष डायलसिस पर जीना पड़ता है। इंतजार चलता रहता है कि शायद किसी दुर्घटना में उसके ब्लड ग्रुप की किडनी मिल जाये ।

अब पढ़िए जरा ध्यान से उस पद्धति के बारे में । "परिवार बाहर से या परिवार भीतर से प्राप्त किडनी का ट्रांसप्लांट कैसे होता है? नवीन तरीकों ने किडनी प्रत्यारोपण को पहले की अपेक्षा अब ज्यादा सफल बना दिया है । वे दो तरीके हैं :

1. मरीज और डोनर के खून को अदला बदली से इस तरह मिलाया जाता है कि डोनर और मरीज का खून लगभग एक जैसा हो जाता है।
2. तथा नवीन दवा साइक्लो स्प्रोरिन शरीर को इस तरह एम्यून कर देती है कि वह किडनी रिजेक्ट होने नहीं देती ।" अभी 12 अप्रैल 1988 को टाइम्स आफ इंडया में 'जीवन बचाने वाली दवा' शीर्षक के अंतर्गत साइक्लोस्प्रोरिन के लिए भारतीय वैज्ञानिकों की प्रशंसा की गयी है कि उन्होंने पांडिचेरी में ऐसे तत्वों को खोज निकाला है, जिनसे साइक्लोस्प्रोरिन बनती है । इस खोज के कारण भारत अब अमेरिका और योरोपीय बाजार में पहली बार दवा के उत्पादक और विक्रेता के रूप में नयी स्पर्धा के साथ सामने आया है ।

सारी श्रद्धा के बावजूद कहना चाहता हूं कि अद्‌भुत प्रतिभा के लिए पद्‌मश्री के अलंकार के योग्य होते हुए भी डा. ए. पी. पांडेय सिर्फ विश्व के ट्रांसप्लांट केन्द्रों से लगभग दो दशक पीछे हैं । उनकी अहंकार भरी बातों और चेहरे पर सभ्यता के नकाब को मैं नहीं उतारूंगा । उन्होंने गुस्से में पूछा था डोनर के बारे में । इसे धीरे-धीरे समझाने पर वे निगलने में सफल हुए तभी उन्होंने अंतिम बाण छोड़ा, जरा यह बताइए कि मरीज को डोनर का रक्त तो नहीं चढ़ाया गया है ।" अगर चढ़ाया गया होगा तो वह 'एंटीबाडी' हो जायेगा और दो मिनट में किडनी काली पड़ जायेगी । टीसू टाइपिंग में ऐसे ही झलक रहा है कि पंचपन प्रतिशत से अधिक नहीं मिलता । कहां टीसू टाइपिंग और कहां रक्त का ट्रांसफ्यूजन ।

मैने कहा, "नहीं पांडेय जी, यह सब चेतावनी हमें डॉ. आर. जी. सिंह ने बहुत पहले दे दी थी ।" उन्होंने हम लोगों को जिस तरह चलते बैल की जांघों में मैने से मारकर दंवरी में जोता है वह हमारे लिए साठ वर्ष की उम्र की बहुत महान उपलब्धि है । जब मंजु का ऑपरेशन होना था तो डॉक्टर हुजूर ने कहा कि चार-पांच बोतलें ओ-निगेटिव चाहिए और अगर नहीं मिली तो गया ट्रांसप्लांट महीने भर बाद । महीने भर का मतलब था बेल्लौर में बीस हजार । कैसे-कैसे ब्लड लाया गया आप देख चुके हैं । जब ट्रांसप्लांट से निकालकर उसे एम. वार्ड में रखा गया तो सात दिन के बाद कुल 26571 रुपये का बिल मिला । मैं बहुत ध्यान से उस बिल और डॉक्टर की रिपोर्ट को देखता रहा । अंतिम पंक्ति के ऊपर लिखा था। "नो ब्लड वाज यूज्ड" वाह, बंधु ! हर वाक्य पर बनारस वालों को फ्राड आपने कहा । शायद यह पांडेय जी की शैली है, हमें अपना समझकर डांट रहे हैं । पर आपके फरमान में जरा-सी भी मानवीयता होती तो मुझे ओ-निगेटिव के लिए अपने गुरु को पुकारना न पड़ता । श्री अरविंद आश्रम मेरा दूसरा घर है । खैर, आप इसे क्यों सुनना चाहेंगे कि टैक्सी से जाने-आने और छह व्यक्तियों को जिन्होंने ब्लड दिया, हमने दक्षिणा देकर वापस लौटाया । आप नाटकीय जीव हैं आपको मालूम था कि डोनर मेरे सब संबंधी नहीं हैं तो भी उसकी पत्नी को बुलाइए और हस्ताक्षर कराइए नहीं तो नो ट्रान्सप्लांट आपने ऐसी हौल दिली पैदा कर दी कि जो चीजें आराम के साथ पांच हजार में हो जाती उनपर मुझे दस हजार खर्च करने पड़े । आप वरेण्य हैं, आप नमस्य हैं ।

हम फ्राड हो सकते हैं पांडे जी, पर कठोर और निर्मम नहीं । एक साहित्यकार की हैसियत से आप के मन के भीतर कांटे-सी चुभने वाली पीड़ा का ज्ञान था । आप संतानविहीन हैं इसलिए डिप्रेशन में डूबे रहते हैं । आप के हाथ में भगवान भी था प्रभु यीशु ने यश इसलिए दिया कि अपना व्यक्तिगत दुख भूलकर समष्टि को देखें। मैं जानता हूं ग्रामीण संस्कारों को । निरवंशी का मुंह देखने पर किसी भी ग्रामीण को यात्रा स्थगन अनिवार्य हो जाता है । शुभ कार्य के उद्घाटन का सारा मुहूर्त बदलना पड़ता है । आप क्या उसी कीचड़ में धंसे हैं जहां हमारा पूर्वांचल [illegible] में डूबा है । भारत के हर कोने से दुखी बाप, भाई, अभिभावक नित- प्रतिदिन आपको गालियां देते हैं । वे आप से सहानुभूति और सलाह लेने आते हैं, फिर एक दुरदुराये हुए कुत्ते की तरह यूरोलाजी वार्ड में पहुंचकर जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, उन्हें आप कभी न सुनें, यही ईश्वर से मेरी प्रार्थना है ।

साहित्य अकादमी की ओर से आचार्य शुक्ल जन्मशती समारोह का आयोजन था । तिथियां थीं उनतीस, तीस और इकतीस यानी अक्टूबर अंत । उन दिनों मैं वैसे भी वाचाहीन व्यक्ति की तरह सिर्फ सुनने में मशगूल रहता था । बोलना, चालना वाकपटुता आदि से मैं ऊब चुका था । इकतीस को शामवाली गोष्ठी में मैं मुख्य अतिथि था । मेरा जब नाम बुलाया डॉ. परमानंद श्रीवास्तव ने तो मैं मंच पर तो गया पर एक शब्द भी नहीं निकला । विष्णुकांत शास्त्री बोले, "क्या बात है अध्यक्ष महोदय, आप लोगों ने शिवप्रसाद जी की आवर्जना की है । बोलने दीजिए।" मैं उस समय राजेंद्र के साथ दरियागंज चला गया था और पेट्रियाट के सामने नीले विद्युताक्षरों में जल रहे एक वाक्य या वाक्यांश कहिए, प्रधान मंत्री की मृत्यु, प्राइम मिनिस्टर नो मोर" देख चुका था । मैं इस वाक्यांश को पढ़कर इतने गहरे उन्मथन में डूब जाऊँगा, ऐसा सोचा भी नहीं था । उलटे सत्य तो यह था कि इधर कुछ महीनों से प्रधानमंत्री इंदिरा जी को मैंने जब-जब मौका मिला तब तब गालियों से नवाजता रहा । अब वह मेरे लिए लेह के कुहरे में डूबे हेलिकाप्टर से उतरे नेहरू जी की उंगली पकड़े चलने वाली प्रेरणा केंद्र नहीं थी । अब बोमदिला पर शत्रु का कब्जा होने से असमिया लोगों को भगदड़ से रोकने वाली साहस की मूर्ति नहीं थी । वह मेरी मृत्युशय्या पर पड़ी बेटी की व्यथा को बिना जाने पचीस सौ रुपयों में बेटी के बाप को बंधुवा मजदूर बनाने वाली ठीकेदार थी । हजारों बंधुवा मंजूर हैं इस औरत के राजनीति में तो रुपये के लिए बिक जाने वाले सैकड़ों सांसद है पर साहित्यकार, वह भी मेरे जैसे को खरीदना इस औरत के वशीकरण-सीमा के बाहर था । फिर इतनी घुमड़न क्यों? इतनी घनीभूत पीड़ा का उद्वेलन क्यों?

मेरे मंच से उतरते ही साहित्य अकादमी के सचिव डॉ. चौधरी ने कहा, "प्रधानमंत्री की असमय मृत्यु के कारण कार्यक्रम कैंसल किया जा रहा है ।" तब शायद कुछेक समझ सके होंगे कि मैं चुप क्यों रहा? मैं बोलता भी तो कितने मिनट? महज चार या पांच ।

मैंने और वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी ने एक मिनट के अंदर निर्णय लिया कि तुरंत नयी दिल्ली स्टेशन पहुंचना है और मगध एक्सप्रेस से चल देना है।

पूरा स्टेशन रहस्यात्मक चुप्पी में डूबा था । कुछेक सरदार दिखे, पर बेहद घबराये-घबराये से । एक के ललाट पर पसीने की बूंदें भरी-भरी झुक आयी थीं।

"आइए सरदार जी, घबराइए मत, हम दो बनारसी पूरी दिल्ली के सरगर्म माहौल को चीरकर आ रहे है । हम धोखेबाज भी नहीं हैं ।"

"हमें तो उद्र जाणां नहीं है जी हम तो अमृतस एक्सप्रेस ढूंढने निकल्यां है

जी।"

"अच्छा सरदार जी, जो रब की मर्जी, सत्त श्री अकाल ।"

मुगलसराय में ट्रेन से उतरकर जब हम बनारस के लिए बस का पता लगाने के लिए निकले तो यह देखकर कि मुगलसराय में एक भी दुकान साबुत नहीं बची जिसका मालिक सरदार हो। मैं जीवन की अंध-नियति के आगे झुक गया । बस बढ़ती गयी । गोदौलिया पर झुंड के झुंड पी. ए. सी. के जवानों ने रास्ता बंद कर दिया था । हमारे साथ एक वरिष्ठ प्रोफेसर भी अपनी लंबी-चौडी पेटिकाओं को एक के ऊपर एक रखकर कुली के माथे पर पिरामिड की तरह रखवाये, बदहवाश कुली पर झल्लाते उसी बस में आकर बैठ गये । कंडक्टर ने जब पूछा कि माल किसका है, रखवाइए इसे ऊपर । इतनी भीड़ में किसने पेटियों से रास्ता रोक दिया है ।"

"ऐसा है कंडक्टर साहब कि यह सामान हम तीनों जनों का है जो एक साथ बैठे हैं, हम चोर-उचक्के नहीं है, बस आधा घंटे की बात है ।" प्रोफेसर ने कहा।

"इनमें है क्या?"

"कोई खास चीज नहीं, बस कपड़े-वपड़े हैं ।"

"यह तो आपकी पेटी के सामान हैं, मैं तो आपके इन दोनों साथियों की पेटिकाओं के बारे में पूछ रहा हूं ।

"उनमें भी वही है यानी कपड़े लत्ते ।"

बस चेतगंज तक आयी ही थी कि जलती लुकाठिया लिये सैकड़ों लोगों ने बस घेर ली । "उतर जाओ, यहां हमें यह बस फूंकनी है ।"

इनसे दलील करने का वक्त नहीं था । हमने अपनी-अपनी अटैचियां हाथ में ली और बिना सहयात्री के चल पड़े ।

"रुकिए भाई" हमारे वरिष्ठ प्रोफेसर ने कहा, "इन तीन पेटिकाओं को मैं अकेले कैसे ले जाऊंगा?"

"आगे कोई सवारी नहीं है श्रीमान्, हम खुद इस माहौल से निकल जायं तो भगवान विश्वनाथ की कृपा कहेंगे, आपकी तीन पेटिकाओं के लिए हम दोनों लाचारी व्यक्त करने के अलावा और कर भी क्या सकते हैं ।"

सोनारपुरा के सामने एक रिक्शावाला मिला । उसने मुझे गुरुधाम कालोनी के चौराहे पर उतारा और वशिष्ठ के साथ यूनिवर्सिटी के लिए चल पड़ा ।

घर आये तो आशंका के बादल नहीं दिखे । मंजु ने कहा, "बाबूजी नहा, धो लीजिए । हम लोगों की ब्लैक ह्वाइट टी.वी. से दस गुना आकर्षक ढंग से डॉ. देश पांडे जी की रंगीन टी. वी. पर आंखों देखा हाल आ रहा है ।

"बाबूजी, अगर मै आपके साथ गयी होती तो इंदिरा जी को दुर्लभ ओ-निगेटिव ब्लड देती ।" आप तो उन्हें बुआ कहते थे । जब पंडित जी ने कहा कि वह मेरी बहन हैं और तुम्हारी अम्मा उसे ननद कहती हैं ।

ठीक है मै हंसने का नाटक कर रहा हूं । कब रोऊंगा पता नहीं । "अच्छा-अच्छा, चल घर मुझे भूख लगी है ।"

इंदिरा जी को दुलर्भ ब्लड देने वाली मंजु को शायद लगा होगा कि उसके ब्लड का अब कोई महत्त्व नहीं है ।

वह ठीक 18 नवंबर को बीमार पड़ी । रोग वही यानी खाना खाते ही उलटी, सांस की रुकावट । उसका ब्लड सेम्पुल घर आकर निदान केंद्र का टेकनिशियन ले गया था । मै रिक्शा के लिए चला ही था कि कामेश्वर उपाध्याय आ गये । बोले, "गुरू जी कैसी तबीयत है मंजु जी की?"

"चलो रिपोर्ट लेने निदान केंद्र जा रहे हैं ।"

रिपोर्ट देखी तो आंखे भरभरायी, पर आंसू छलके नहीं ।

"ठीक है न, गुरुदेव !"

"अब सब नियति के अधीन है । आखिर ब्लड क्रियेटनिन ने 13 को छू ही लिया ।"

डॉ. कमलाकर त्रिपाठी के बहुत कहने पर वह पैरिटोनियल डायलसिस के लिए तैयार हुई । पैरिटोनियल डायलसिस शांति के साथ हो रही थी, इसलिए नरेंद्र को सब दायित्व सौंपकर मै घर आ गया । मै सोया नहीं था । बाहरी दरवाजे पर हथेलियों की थपथपाहट से मै चिंतत हुआ । तुरत दरवाजा खोला । नरेंद्र थे । आप वहां नहीं रहियेगा तो डायलसिस असंभव है । वह बार-बार गाय की तरह डेकर रही है—बाबूजी, बाबूजी चलिए मै रिक्शा ले आया हू ।"

मै जब नेफ्रोलाजी कक्ष में पहुंचा तो देखा कि उसके हाथ-पैर बंधे हुए हैं । "किस गधे ने कहा था हाथ-पैर बांधने को । छोड़ो तुरंत ।"

"हम बिना डॉ. आर. जी. सिंह की आज्ञा के हाथ-पैर की रस्सिया नही खोल

सकते ।"

"गेट आउट ब्लडी फूल, रास्कल्स ।"

"देखिए साहब, हम भी जूनियर डॉक्टर्स हैं । हमें आप कृपा करके गालियां देना बंद करें और खुद जो करना हो, करें ।"

मैंने उसके हाथ-पैर खोल दिये । "हटाइए यह सब नली वगैरह ।"

"यह तो हम नहीं करेंगे ।"

"मैंने नरेंद्र को बुलाया और कहा कि किसी को भेजकर तुरंत आर. जी. सिंह अथवा त्रिपाठी जी को बुलाओ ।"

खैर त्रिपाठी जी आये । अब सुबह हो गयी थी,मंजु हिचकियों में डूबी थी, "क्या है बेटे, नली और उससे पानी चढ़ाने में दर्द हो रहा है ।"

"बहुत ज्यादा, इसे आप निकलवाइए डॉक्टर साहब, तुरन्त"

डॉ. त्रिपाठी ने सब कुछ निकलवा दिया । उन्होंने मुझसे कहा, "इसे छुट्टी तो डॉ. आर. जी. सिंह ही देंगे । आप से यह लिखवा कर कि मैं रोगी को अपनी इच्छा से ले रहा हूं ।"

आर. जी. सिंह आये । और उनके साथ दो विशिष्ट सज्जन भी नमूदार हुए।

"जब डॉ. आर. जी. सिंह कह रहे हैं कि डायलसिस रोकना खतरनाक होगा तो आप इसे ले क्यों जा रहे हैं?"

"डॉ. आर. जी सिंह कहते हैं कि रेनल फेल्योर के कारण इस बार मस्तिष्क प्रभावित हो रहा है । इसलिए उसके हाथ-पैर बांध कर पैरीटोनियल डायलसिस होनी चाहिए" दोनों उल्लू एक ढंग से बोले, "आप रिस्क क्यों ले रहे हैं । आपको रुपयों के लिए परेशान नहीं होना चाहिए । यह भार हमें सौंप दीजिए और डायलसिस शुरू कराइए ।"

"शुक्रिया, आप कितने अटूट हैं मेरे जिस्म से, मैं जानता हूं । आप घंटे भरके बाद यह नाटक करके जायेंगे और जब तक वह पुनः वेल्लौर जायेगी, ट्रांसप्लांट होगा, फिर मरेगी, तब वह पुन: इसी डायलसिस रूम में भरती होगी । आपने तो हुजूर उसकी बीमारी की हालत में जब वह बी. एच. यू. के हृदय रोग कक्ष में 15 दिनों तक थी, कभी अपनी शक्ल नहीं दिखायी, दूसरे सज्जन शायद मंजु के नाम पर चंदा मांगने का मनसूबा बनाकर आये हैं, कृपया आप लोग मेरे सामने से हट जाइए ।"

वह एंबुलेंस से पुन: सुधर्मा आ गयी ।

मैं न झुकूंगी आगे तेरे
अरे मृत्यु के महामुखौटे

रजनी के काले झूठ
मनुज पर छाने वाले
ओ चीजों के नकली ध्वंस जताने वाले
अमर आत्मा से हारा तू
करता रहता छेड़-छाड़ नित
मैं अपने आत्म तत्त्व की सहज
अमरता से परिचित हूं
और जान कर ही आयी हूं क्षमता अपनी
विजयी जैसी
मैं तेरे द्वारे याचक बनकर नहीं खड़ी हूं ।

(सावित्री, पार्ट 2. पृ. 222)

बाबा, आपकी सावित्री में शक्ति थी, वह मृत्यु के मुखौटे को उतारकर कूड़े मे फेंक सकती थी, यह स्थिति तो उस समय भी थी जब महाभारत की, पुराणों की सावित्री, कल्पना लोक की दुर्विजेय नारी अपने सतीत्व से यमराज को पराजित करके सत्यवान को पुनर्जीवित करने में सफल हुई, पर न तो मंजु में वह ताकत है न तो उसके बाप में कि हम मृत्यु-मुख से इस लड़की को छीन सकें । वह भी इस दुर्निवार्य के घटने की प्रतीक्षा कर रही है, और मै भी ।

"डॉक्टर साहब ।"

"अरे विजय जी ! आइए, आइए ।"

विजय त्रिवेद कलाकार हैं, पर उनका परिवार भी है । वे मेरे जैसे मन के मालिक नहीं हैं जो हर चमत्कार को ढोंग कहकर उस पर लात मार देता है । मेरे शिष्य डॉ. रामनारायण शुक्ल, श्री गिरिजा सिंह और एक अपरिचित सज्जन थे । मैने सबका स्वागत किया और हम बाहरी कमरे में बैठ गये ।

"गुरुदेव" शुक्ल ने कहा, "कैसी तबीयत है...?"

उनके पूछने के अंदाज से मै समझ चुका था कि वे मेरी ही तरह अथाह वैतरणी में नाक बराबर पानी में खड़े है । "अगला पैर बढ़ाना तो है , हम न बढ़ाएं तो भी क्या मृत्यु का अपार ठाठें भरता सागर शांत हो जायेगा?"

"गिरिजा कह रहे थे" उन्होंने संकेततः बगल में बैठे व्यक्ति की ओर इशारा करते हुए कहा, "इनके पास कुछ ऐसी चीजें है जिन पर पूर्णतः विश्वास किया जा सकता है । शुक्ल ने एक वार्तालाप के टुकड़े का अंश बताया । मैं पूर्णतः समझ नहीं पाया । किंतु वार्ता का सारांश था कि कुछ पत्थर होते है ऐसे जिनके स्पर्श से जल बहुत चमत्कारिक बन जाता है । वह असंभव को संभव कर देता है । उन पत्थरों को तारा कहते हैं । मैंने तारा पत्थरों के बारे में न तो कुछ सुना था न पढ़ा

था । श्री गिरिजा को श्री जितेंद्र कुमार सिंह अपने नागा गुरु के पास ले गये थे । उनसे गिरिजा बहुत प्रभावित थे । गिरिजा एक विलक्षण युवक है । वे अपने को मेरा शिष्य मानते है । वे मेरे यहां अनेक बार आये, मिलते-जुलते रहे । उन्हें आप आध्यात्मिक चीजों में रुचि रखने वाला व्यक्ति कह सकते हैं । पर विजय त्रिवेद और गिरिजा की विशेषत. गिरिजा की लगन है कि वे हर विज्ञप्त योगी की थाह जानने के लिए लंबी से लंबी यात्रा, लंबे से लंबे इंतजार और उसके द्वारा लिखित सामग्री का पूरा परायण करके यदि ठीक लगा तो उसके शिविर में रहकर उसके द्वारा बताए हुए साधना मार्ग का विश्लेषण करने तथा दो-तीन हफ्ते तक हर तरह की परिस्थिति में शांत और एकनिष्ठ रहकर कुछ पाने की आशा लेकर जाते रहते है । इसलिए उनकी बात मैं ध्यानपूर्वक सुनता रहा ।

"कहां से पायेंगे ऐसे पत्थर?"

गिरिजा बोले "श्री जितेंद्र सिंह एक साधक योगी है । इनके गुरु के पास है ऐसे पत्थर ।"

"अगर ऐसा है तो आपके गुरु द्वारा बताए प्रयोग करना मुझे स्वीकार्य है । क्योंकि जो उबला हुआ जल वह पीती है, उसी जल में उस पत्थर को डालकर रात में रख दूंगा, सुबह वही जल पिलाना है । अत उसमे तो कोई हर्ज नही, लाइए वह तारा पत्थर । उसे लाने के लिए चाहे जो भी शर्त हो, मैं उन्हें पूरी करूंगा,

कई दिन बीत गये । इस बीच बहुत सारा जल गगा मे आया और वह गया । मैं जानता था कि जिस प्रवाह में मै डुबकी लगाये हूं, वह नही लौटेगा पुन, पर मन की कातरता की कौन-सी दवा है ।"

ऐसी स्थिति मे मैं करीब-करीब स्थितप्रज्ञ बनने की मूर्खता कर रहा था । स्थितप्रज्ञ क्या है? कैसे रहता है? कैसे अनुभव करता है ? मै जब कुरुक्षेत्र युद्ध के पार्थसारथी से पूछता हूं तो एक लंबी सूची बना देते हैं । मै कैसे अपने को ससार के चुबकीय तत्त्वों से विलगा लूं ? क्या दोनों ध्रुव एक-दूसरे को निरन्तर अपनी ओर नहीं खींच रहे हैं । निगेटिव और पाजटिव के चुबकीय आकर्षण बिना यह दुनिया रहेगी ही नही । स्थितप्रज्ञ का मतलब है मृत्यु के बाद शून्य मे विलय । इसके अलावा जो भी विकल्प बताए जाते है सब व्यर्थ है, झूठ है । कौन है युद्धरत गृहस्थ जो कहेगा कि हां मैं अपने सबसे प्रिय खिलौने को टूटने या ठीक-ठाक सुरक्षित रहने मे अतर नहीं करूंगा । अपनी आत्मा ही है पुत्र में, पुत्री मे । आत्मा वै जायतें पुत्र को गर्धभ स्वर में चिल्लाते ऋषियों को मै थप्पड मारता हू, मैं अपनी ही आत्मा के अंश को छूरे से रेते जाते, खून से रंगते देखता रहू और आपके हुक्म को मानकर सुख और दुख में समान स्थिति बनाए रहूं, यह सभव है? ऐसी स्थितियां आयी है आपके जीवन में ? एक नही तीन बार? यदि हां तो कृपया

"नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः" का आलाप बंद कर दीजिए । पता नही इन ऋषियो को क्या हो जाता था । अपने अनुभव से सत्य देख रहे थे, देख रहे थे । एक ऋषि कहते हैं, यह प्रसिद्ध है कि मृत्यु से डरते हुए देवताओ ने ऋक्, यजुः और सामवेद रूप तीन वेदों में प्रवेश किया । उनका आश्रय लिया । उन्होने गायत्री आदि भिन्न-भिन्न छंदो के मंत्रो से अपने को ढंक लिया, उन्हें अपना कवच बनाया । उन्होने जो भिन्न-भिन्न छंदों से युक्त मंत्रों द्वारा अपने को आच्छादित कर लिया, उसी से वे 'छंदस' का आवरण बनाकर छिपे किंतु जिस प्रकार मछली पकड़ने वाला धीवर जल के भीतर भी मछली को देख लेता है उसी प्रकार देवताओं को मृत्यु ने उन ऋक्, साम एवं यजुर्वेद के मंत्रो की ओट मे भी देख लिया । वहां भी इसने उनका पिंड नही छोड़ा, वे देवतालोग भी इस बात को जान गये, " यहां चुप हो जाना चाहिए था ऋषिवर, आपको झूठ नहीं बोलना चाहिए । सत्य की अगारक वाणी मे कहना चाहिए था कि मृत्यु देवों को भी अमर नहीं मानती, उन्हें खा जाती है, पर आपने अंत मे दुर्गंध उगल दी, कर दिया वमन, "अतः वे ऋक, साम, और यजुर्वेद के मत्रों से ऊपर उठकर स्वर मे अर्थात् ओंकार में प्रविष्ट हो गये । (छादोग्य, चतुर्थ खंड-2-3)

इतना अशात मत बनो । शांत हो जाओ । अपने ही चैतन्य पुरुष की शरण जाओ वहां कुछ नही है, न शीत है न उष्ण, न वहां मृत्यु है न अमरता । वहां बस स्नेह है । नील ज्योति है सो जाओ कुछ देर । लेट जाओ मेरी गोद मे । देखो मैंने तुम्हारे जलते माथे पर अपनी शीतल उगलियां रख दी हैं । तुम्हें अनुभव नहीं होता ? क्या तुम स्पर्श का अनुभव नही कर रहे हो । बी पीसफुल माई चाइल्ड, बी पीसफुल ।

दरवाजे पर किसी ने खट-खट किया । "आइये द्विवेदी जी, महाराज !" मेरे सहयोगी सूर्यनारायण द्विवेदी थे । "बड़े उदास हैं, बहुत भार मत ढोइए" सूर्यनारायण द्विवेदी जी बोले । सूर्यनारायण जी को मै सज्जन और शीलवलान कहता हू, लोग उन्हे जो समझें, समझें । मै कभी-कभी बड़ा परेशान हो जाता हूं । लोगो को कोई व्यक्ति पसद नहीं है तो नही है । उसकी निराधार बातो के आधार पर छवि खराब करना तो ईमानदारी नहीं है । ऐसे लोग अपने गिरहबान में झांककर कभी नही देखते । दुनिया भी साली धनचकर में भरम रही है । आज की दुनिया में सही होना, भद्र होना, ईमानदार होना खालिस मूर्खता है । अगर ऐसे लोगो के अवसरवादी नाटकों को देखते हुए आप इनकी हजार बार मदद करें तो भी इनसे कभी आशा मत रखिए कि ये कुछ ऐसा करेंगे जो आपके फायदे का होगा। बस चुप बैठिए । कभी प्रतिदान में आशा की झूठी किरण भी पाने की उम्मीद मत रखिए इनसे । खैर, बात आयी गयी । मैने कहा, "सूर्यनारायण जी, आपने ठीक ही कहा कि मै बहुत उदास हूं । उदास तो एक अरसे से हूं ।

सायटिका, पंडित जी का निधन, मंजु की बीमारी, खानाबदोशों का जीवन, झूठी आशा कि ट्रांसप्लांट के बाद पुन मेरी गृहस्थी पूर्ववत् चमन बन जायेगी—हजारों गम हैं । उदास होने के अलावा कर भी क्या सकता हूं । हां, आज अगर पंडित जी होते तो वे गम के कारणों को तो दूर नहीं कर पाते, वैसे दूर तो कोई भी व्यक्ति नहीं कर सकता, पर थोड़ी सहानुभूति और ढेर सारा आत्मबल जगाने की कोशिश जरूर करते । जब मैं सायटिका से निहायत पीड़ित होकर अंधकूप में गिर गया था तो गुरुदेव आये थे । उन्होंने कमरे में अंधेरा देखा अथवा बाबा अरविंद की भाषा में कहूं तो एच. एफ. का आधिपत्य देखा था, अत. वे ललकारते हुए बोले, "लो सुनो,

> जयति दशकंठ घटकर्ण वारिदनाद,
> कदन कारन कालिनेमि हंता
> अघटघटना-सुघट-सुघट-विघटन विकट
> भूमि पाताल जल गगन गंता
> जयति मूलन्दिनी शोच-मोचन,
> विपिन-दलन घननादवश-विगतशंका
> लूमलीलाऽनल ज्वालमालाकुलित
> होलिका-करण लंकेश लंका ॥

"फूंक दो इस रोग की लंका को, उठ जाओ, कंपाओ गगन पुन अपने अट्टहास से।" वे दोनों हाथ ऊपर करके चिल्लाये ।

"आपका आशीर्वाद सफल होगा पंडित जी" मैंने उठकर उन्हें विदा किया । मैं सोच रहा था कि रावण और लंका ही तो है श्री अरविंद द्वारा संकेतित एच. एफ. यानी होस्टाइल फोर्सेज है । वही नहौम का निनेवे है ।

"देखिये बंधु" मैंने सूर्यनारायण जी से कहा, "मैं कोई भार नहीं ढो रहा हूं । ऐसा है कि वह जब से जगी है सिर्फ एक रट लगाए है कि 'बाबूजी मैंने रात को एक सपना देखा कि अपने आंगन में दुर्गाजी की पूजा हो रही है । ओड़हुल के लाल-लाल फूल बहुत चटक थे ।' द्विवेदी जी पूजा करा रहे थे । मैं आ ही रहा था। मैंने निश्चय कर लिया था कि आज संध्या बेला को वह पूजा हो जाय ।

"ठीक है, यह तो मेरे लिए बहुत आह्लादक है कि उसने सपने में मुझे पूजा कराते देखा । आप सामग्री मंगा लीजिए । आप तो सारी चीजें जानते ही हैं । मैं शाम को पहुंच जाऊंगा । दिसंबर में चटक ओड़हुल के फूल जरूर ढूंढने

होंगे।"

"नहीं, वे अप्राप्य नहीं है। अपने यहां तो हैं कुछ और बाकी विश्वविद्यालय से इस तरह के फूल मैं मंगा लूंगा। वांछित पुष्प का अभाव नहीं होगा। क्योंकि मैं राम नहीं हूं कि मेरे द्वारा आयोजित पूजा के लिए एक सौ आठ में एक नील कमल चुरायेगी। वे बड़े लोग थे। उन्होनें ही तो कहा था,

धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध
जानकी! हाय उद्धार प्रिया का हो न सका
वह एक और मन रहा राम का जो न थका

काश, वह एक और मन होता! होगा जरूर होता होगा! वरना राम इस तरह का दृढ़ निश्चय करते ही नहीं। पर किया। नील कमलों में एक चोरी हो गया तो क्या? पूजा असफल नहीं होगी,

राम बोले,

दो नील कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण
पूरा करता हूं देकर मातः एक नयन ॥

आज द्विवेदी जी मेरे पास कुछ नहीं है, पर कभी इन आंखों से चटक फूल अक्सर विंध जाते थे। अहंकारी से अहंकारी रूपगर्विताए भी मेरे त्राटक को सह नहीं पायीं। वे नेत्र भी थक गये। काश, वह एक ओड़हुल का फूल चुराती तो मैं अपने रक्त से भींगी गुलदावदी के श्वेत पुष्प को लाल बना कर चढ़ा देता, पर जानता हूं वह मेरे ओड़हुल नहीं चुरायेगी।

शाम को पूजा की सामग्री रख दी गयी। सुधर्मा के इस आंगन को ब्रह्म गायत्री से कीलित किया गया है ताकि इसमें कभी भी एच. एफ. प्रवेश न कर पाये।

पर एच. एफ. जो पहले से ही दखल कर चुका है, मेरी पत्नी का दिमाग। वह तो ब्रह्मराक्षस को नष्ट करने या शमित करने का लगातार आग्रह करती ही रहेगी। मैंने हजार बार कहा कि यह साला ब्रह्मराक्षस मुझसे क्यो नहीं लड़ता। मैं तो इसके सामने हें-हें करके रुदन नहीं करता। इसलिए वह भी जानता है कि इस ठूंठ पेड़ को हिलाने की कोशिश बेकार है।

आ तू, आ तू,
अविद्या के उन्मत्त महिष
आ तो सामने ?
मैं भी देखूं तेरे तमस में रंगे अभिचार को ,
मैंने तोड़ कर रख दिये
हर बार तेरे जहरीले जबड़ों को
रक्त-लोलुप भेड़िए तुम को मैंने हर बार पछाड़ा है ।
पर तू चाहता ही है रक्त तो ले मेरा
पचा सके तो चाट इसको
यह तेरे उदर को विदीर्ण कर
बाहर आ जायेगा ।
इस सूर्य को कोई भी राहु निगल नहीं
सकता ।
हमेशा तमस हारता रहा है
मेरे हाथ से । पुनः हारेगा ।

क्षमा कीजियेगा । मैं कवि नहीं हूं । पर ये लाइनें गद्य के भीतर ही अचानक इसी रूप में प्रकट हुईं तो मैंने इन्हें ज्यों का त्यों रहने दिया ।

पूजन शुरू होने के पहले मैं उसके पास गया, "मंजु, चल, पूजा हो रही है। तुझे खुद पूजा करनी चाहिए ।"

"पर बाबूजी, मैं बैठ नहीं पाऊंगी, आप मेरे हाथ से संकल्प करा कर खुद बैठिए, मैं आंगन वाली चारपाई पर लेटे-लेटे देखूंगी ।"

"ठीक है, आ चल, मैंने मीरा से वह बंसखट दक्खिनी दीवार से सटाकर बिछा देने को कहा ।"

उसने चारपाई पर रजाई ओढ़े हथेली बाहर की और संकल्प का जल अक्षत लेकर द्विवेदी जी के अनुसार संस्कृत में कहे गये मंत्र को दुहाराया । द्विवेदी जी ने कहा, "रख दो नीचे ।"

"नहीं, आप इसे अपने हाथ में लीजिए । मुझसे श्रेयोदान करायेंगे न ?" द्विवेदी जी मेरे चेहरे पर देखते रहे । मैंने पलक झपकायी और उन्होंने कहा, "हां, हां, बिना श्रेयोदान की पूजा कैसी !" उन्होंने संकल के अक्षत पुष्प ले लिये । मेरे परिवार के सभी सदस्य इस शब्द से परिचित हैं । क्योंकि मैंने कभी व्यंग्य से कहा था, अगर पाठ करना है तो स्वयं करो अपने विश्वास के अनुसार । और अगर खुद न कर पाओ तो सुविज्ञ, शुद्ध पाठ करने में समर्थ ब्राह्मण से पाठ कराओ पर सावधान आज के ब्राह्मण दक्षिणा तो लेते हैं, किंतु श्रेयोदान का नाम भी नहीं

जानते । उनसे दक्षिणा देकर करायी गयी पूजा का श्रेय, पूजा का फल अगर तुम्हें नहीं मिला तो दक्षिणा बेकार ।"

"वह द्विवेदी जी को हिचकते देख पूछ बैठी, श्रेयोदान कराइयेगा न?" सूर्यनारायण जी, कामेश्वर उपाध्याय आदि दो-एक लोगों को छोड़कर कोई जल्दी किसी ब्राह्मण वटु को लेकर मेरे यहां शारदीय अथवा वासंतिक नवरात्र में पाठ बांचने के लिए नहीं आता । नरेंद्र अपना पाठ स्वयं करते हैं । कामेश्वर उपलब्ध हुए तो वे भी नरेंद्र के साथ बैठते हैं ।

मैं आसन पर बैठा । पूजा शुरू हो गयी सूर्यनारायण जी अपने साथ मोटे, ताम्र पत्र पर खचित नवार्ण चक्र लेकर आये थे । उसे पीढ़े पर बिछे लाल रंग के कपड़े पर किसी वस्तु से टिका कर रखना था । द्विवेदी जी ने अपनी छोटी-सी लुटिया रख दी । बोले, "डॉ. साहब इसी के सहारे...." ठीक है, मैंने गंगा जल में यंत्र को धोकर पंचामृत में स्नान कराकर पुनः धोकर जब लुटिया से सटाया तो वह फिसलकर गिर पड़ा । द्विवेदी जी ने मेरी ओर देखा । मैं मुसकराया । मैं जानता हूं कि हमारे मन में बैठी शंका, बुद्धिजीवियों के भीतर का संशय हमेशा इन कर्मकांडों की उपयोगिता पर प्रश्नचिह्न उछालता है और वे इस तरह की साधारण-सी बात को जो बिल्कुल स्वाभाविक सहज समझने योग्य होती है, देवता का अस्वीकार समझ कर उदास हो जाते हैं । देवता और इच्छा शक्ति के बीच दरार पड़ जाती है, वैसी स्थिति में एच. एफ. के सामने वे बेबस बनकर अपने घुटने टेक देते हैं।

पूजा समाप्त हुई । उसने कर्पूर-आरती पर दोनो हाथो को रखा और सिर से लगा लिया ।

"श्रेयोदान लो, मंजु !" सूर्यनारायण जी ने कहा । वह मुसकुरायी थी । वह मुसकुराहट ऐसी ही बनी रहेगी मातः? क्या ज्योति किरण पुंछ जायेगी लाल किसलय पर गिरी, या कोई आलोक बनेगी? मुझे कुछ भी पता नहीं ।

16 दिसंबर 1984

करीब 3 बज रहे थे अपराह्न के । दरवाजे पर खट-खट हुई । मैंने देखा सामने ठाकुर भाई हैं । "आइए बंधु, मैं इंतजार कर रहा था ।"

"इंतजार न भी करते तो भी आता ही, क्या हाल-चाल हैं मंजु के?"

हम बैठ गये । चाय पी रहे थे । सूरज ढल रहा था । डॉ. रामनारायण शुक्ला आये। गुरुदेव गिरिजा बहुत ही लज्जित थे । उनका साहस टूट गया था । पता चला कि श्री जितेंद्र कुमार सिंह अपने गुरु के यहां गये थे । उन्होंने तारा पत्थर देना अस्वीकार कर दिया ।"

"तो इसमें शरमाने जैसी क्या बात है" मैंने शुक्ला से कहा । एक और व्यक्ति है गुरुदेव, जो बहुत चर्चित है विश्वविद्यालय परिसर में । मैं नाम तो नहीं जानता उनका, पर लोग बहुत प्रशंसा करते हैं । वे प्रतिदिन गायकवाड पुस्तकालय के चौतल्ले पर चढ़कर सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक सूर्य पर आंखें टिकाये रखने की साधना करते हैं । लोग कहते है कि उनमें दैवी शक्ति है । अगर हम लोग अभी चलें तो वे मिल जायेंगे ।"

"क्यों ठाकुर भाई, चला जाय?"

"चला यार, तनिक देख लिया जाय ।"

हमने चौमुहानी पर रिक्शा पकड़ा और शुक्ला से कहा, "आप चलिए सुकुल जी, अगर विलंब हो तो उन्हें वहीं रोकियेगा, हम आ रहे हैं ।"

"वह टकटकी बांधे सूरज को देखने वाले साधक हैं, तोहें कैसे लग रहे हैं?"

"जैसे आपको" हम दोनों हंस पड़े, "ठाकुर भाई, वे जो साधना कर रहे हैं, वह त्राटक-सिद्धि के लिए होती है । इससे मन को केंद्रित करने में सहायता मिलती है। यह शक्ति योगियों के लिए ही नहीं तमाम बौद्धिकों को आनी चाहिए । मैं भी त्राटक जानता हूं । इसके कुछ ऐसे प्रयोग हैं जिनसे हमें भौतिक से अलग हटकर चेतन क्षेत्र में जाने की क्षमता मिलती है । पर गुर्दे के फेल हो जाने से जो दूषित पदार्थ रक्त में आ रहा है, उसे त्राटक रोक देगा, यह निस्सार है । फिर भी जब तक सांस तब तक आस, देख लें इन्हें भी ।"

हम जब गायकवाड पुस्तकालय पहुंचे तो शुक्ल ने कहा कि वे अभी-अभी गये। चलिए उनके आश्रम ।

आश्रम, इनका कोई आश्रम भी है । अगर ऐसा है तो लगता है कि इन्होंने त्राटक-साधना से मूर्ख बुद्धिवादियों से काफी कुछ पाया है और "कंकड़-पत्थर जोड़ के आश्रम लियो बनाई ।"

हम और ठाकुर हंसे, "चलो भई रिक्शा, इस स्कूटर के पीछे-पीछे ।" हम नरिया गेट पार करके मड़ुवाडीह जाने वाली सड़क से होते हुए उनके आश्रम पहुंचे।

उनका आश्रम निर्माण की प्रक्रिया में था । अभी प्लास्टर वगैरह नहीं हुआ था। वहां एक व्यक्ति खड़ा था । बहुत परिचित पर बहुत ही धूर्त और मूर्ख । वह बाबाजी के पीछे अंगरक्षक की तरह खड़ा था । उसे जानते हुए भी मैं चुप रहा । हमने बाबाजी को प्रणाम किया तो वह टर्र-टर्र करने वाले मेढक की तरह उछला, और बाबाजी के सामने आकर बोला, "चरण छूकर प्रणाम कीजिए । बिना चरण छुये आप लोग सिर्फ गर्दन झुकाकर प्रणाम नहीं कर रहे हैं एक योगी को, अपमान कर रहे हैं ।"

मैंने और ठाकुर ने एक-दूसरे की ओर ईषत् मुसकराहट के साथ देखा, "चलो बंधु, आपकी आज्ञा शिरोधार्य है ।" ठाकुर बोले और हम दोनों ने उन्हें चरण छूकर प्रणाम किया । मेरे साथ एक दिक्कत आती है, ऐसे अवसरों पर । मेरे ऊपर भी दुर्गा चढ़ जाती हैं । बच्चा सिंह वाली नहीं । कालभैरव वाली जो कहती है फाड़ दे इसके चेहरे की नकाब बस बोल दे कि तेरी आंखें उल्लू की तरह चौंधिया रही हैं और अपने को तू योगी कहने में शर्माता भी नहीं । आश्रम । हुं हु । धत्त।"

पर मैं चुप रहा । योगिराज बोले, "क्या-क्या भोजन देते हैं उस कन्या को?"

"जो वह पसंद करती है । वह हर उबली हुई चीज खा सकती है । यहां तक कि उसे उबला हुआ पानी ही पीने की हिदायत की गयी है ।

"आप उसे टमाटर देते हैं?"

मैंने सोचा कि कहूं कि टमाटर तो नहीं देता पर टमाटर का 'सूप' जरूर देता हूं । पर मैने कहा, "हां देता हूं । महाराज उसका भोजन रहन-सहन, सब तीन साल से ऐसा है जिसको पूरा करने में योगी भी शायद ही सफल हों । हम आपसे भोजन का 'मीनू' नहीं पूछने आये हैं । आपकी कृपा चाहते हैं । आपकी शक्ति उसे जिला सके तो कहिए । आप चलेंगे उसे देखने ?"

"हां, मैं 23 दिसंबर को आऊंगा ।"

"आज 16 है महाराज, 23 तो सात दिन बाद आयेगा । तब तक क्या वह...?"

"आप क्या कह रहे हैं, जब योगिराज ने कह दिया कि 23 को आयेंगे, तो 23 तक तो उसे छूने की हिम्मत यमराज भी नहीं कर सकता ।" वही मेढक टर्राया ।

"अच्छा, अच्छा मैने नम्रता के साथ कहा - ऐसा है श्रीमान जी कि आरतजन - हूं। तुलसी बाबा ने कहा है न—

> आरत के बस रहे न चेतू
> पुनि पुनि कहे आपनो हेतू

अब विश्वास हो गया श्रीमान । हमें आज्ञा दें आप लोग ।" मैंने कहा और लौट पड़े । ठाकुर भाई, हम और शुक्ला नरिया वाली सड़क पर लंका की ओर चले। शुक्ल ने कहा, "रुकिए मैं अभी रिक्शा लेकर आ रहा हूं ।"

"का हो" ठाकुर ने पूछा, "कइसन लगल... ।"

"अब छोड़िए ठाकुर भाई । मैंने एक त्राटक सिद्ध योगी को देखा है । वह हमारे गांव अक्सर आते थे । औघड़ थे । कीनाराम बाबा के शिष्य । भुड़कुड़ा गद्दी

के महंत । वे कहते थे, "का रे चेलवा, तनिक एहर त आ । हूं तोरे ललाट में तीसरी आंख क निशान बहुत उठल बा, ओके हम त्राटक से छेद सकीला । पर बचवा ई सब एतना छोट उमिर में ना होखे के चाही । जो, मस्त रहल कर ।" मैंने टार्च की तरह चमकने वाली वैसी आंखें नहीं देखी ठाकुर भाई । उससे कई गुना ज्यादा प्रज्जवलित और वेधक एक नेत्र युग्म भी देखा है मैने । छुआ है उसने मेरे ललाट को । उसी जगह पर । आज याद वे बहुत आते हैं । शीतल उंगलियों का स्पर्श । सरसराती हवा के साथ सिर्फ चार शब्द बहते चले आते हैं लगातार । निर्झर की तरह । "बी पीसफुल माई चाइल्ड बी पीसफुल ।"

कैसे शांत रहूं । कहां से लाऊं वह 'हारमनी' । कैसे मिलेगी वैसी संतुलन-शक्ति कि मैं स्थितप्रज्ञ बन सकूं । मेरे शरीर के रोम-रोम को केवल एक चीज हिला रही है मात., शायद दो या तीन दिनों के अंदर मुझे व्यथा का प्रलयंकर थपेड़ा लड़खड़ा कर धारा में खींच लेगा । मुझमें उस बर्बर नियति सिंधु से लड़ने की शक्ति दो मात', एक सिंधु और तिर जाऊं, वैसे ही जैसे इसके पहले के समुद्रों के थपेड़े के बीच तैर सका । पर नहीं, उस समय इतना थका नहीं था मैं । कोई परीक्षा ले रहा है, इसका ज्ञान भी नहीं था । ऐसी परीक्षाएं आती हैं, तुम्हें कसने के लिए । नहीं, मैं तब अल्हड यौवन मद में उन्मत्त था । तब भी दुख ने हिला दिया । पर मैं उसे सहकर तिर गया । आज मैं पहले से बहुत ज्यादा शक्ति से भरा हूं । मैं निरंतर देख रहा हूं मातः, मेरी समूची प्रज्ञा, जिसने यथाशक्ति भरपूर भाव से जोड़ लिया है अपने को वैश्विक चेतना से, मैं आज पहले की अपेक्षा बहुत ठोस हो गया हूं, द्रवणशील जड़पुंज नहीं हूं, फिर वेदना का ताप इस तरह अंधकार में क्यों डूब रहा है मात. ।

> शत शुद्धिबोध-सूक्ष्माति सूक्ष्म मन का विवेक
> जिनमें है क्षात्र-धर्म का धृत पूर्णाभिषेक
> जो हुए प्रजापतियों के संयम से रक्षित
> वे शर हो गये आज रण में श्रीहत-खंडित

मैंने 1953 में सब सह लिया अपने को दोषी मानकर । मुझे पिताजी पर क्रोध आया था । मैं रूठा रहा उनसे । क्योंकि वह समय पर ठीक निर्णय ले नहीं पाये । लिया होता और आज की तरह सब कुछ लुटा करके भी मुझे विवशता सहनी पड़ती तो मलाल न होता । पर आज बैठा मैं सोच रहा हूं मात. कि मैंने अरविंद की तरह नील नेत्र नहीं दिये तेरी पूजा में पर, मैंने सम्पूर्ण पूर्वांचल की अमानवीय प्रक्रिया को तोड़ दिया है, ठोकर मार दिया है उनके गंदे सिर पर । मैं जो पुत्र के लिए नहीं कर सका, वह सब पुत्री के लिए किया । मैंने सब कुछ दांव पर लगा

दिया । यदि आज मुझे काशी के डोम-राजा के हाथ बिकना भी पड़े तो तैयार हूं । कोई भी विकल्प नहीं । जब इस विकल्प की खोज में सम्पूर्ण विश्व की चेतना हार कर थम गयी है, बड़े से बड़े प्रभावशील और धनाढ्य सब कुछ दांव पर लगाकर भी हार रहे हैं, पराजित हो चुके हैं, तो मेरे जैसे अदने मुदर्रिस की हैसियत ही क्या है । पर जो थी उसे होम में पूर्णाहुति की तरह डाल दिया । मुझे श्रेयोदान कौन देगा? बोलो, बोलो, मातः बोलो ना ।

श्रेयोदान कहीं बाहर से नहीं मिलता, श्रेयोदान पार्थिव को बदलने का चमत्कार लेकर नहीं आता । तू देखेगा कि श्रेयोदन तुझे माता दे चुकी है- भविष्य पर सब कुछ छोड़कर "बी पीसफुल माई चाइल्ड बी पीसफुल" उस श्रेयोदान को संभालने के लिए तत्पर बनो । बी पीसफुल । इस हृदय-विदारक गीत को मैं सह नहीं पाऊंगा । मैने अपने दोनों कान मूंद लिये, वह सिसक रही थी कैसेट बजता रहा,

देख लो आज मुझको जी भर के
कोई आता नहीं है फिर मर के

पराजय की पीड़ा से एकदम मुझे उन्मथित करके रख दिया । सब कुछ बकवास है। गटर की तरह बदबू गरती गंगा के घाट रक्त से नहाते रहे हैं गरीबों के, मूर्खों के, अपढ़ गंवारों के । धर्म सिर्फ बेवकूफों को असह्य वेदना के समय फरेब में डालने वाली मृग मरीचिका है । वेदना के उत्ताप में स्नेह के प्यासे हृदय वालों को गंगा के किनारे नाचने वाली खड़खड़िया (मृगतृष्णा) कहां ले जायेगी । सारा तंत्र-मंत्र चिकित्सा-ज्ञान बिल्कुल बच्चों का खिलवाड़ है । दस हजार वर्षों के बौद्धिक व्यायाम से क्या मिला वैज्ञानिकों को? कोई भी रास्ता नहीं है इस मृत्यु-व्यूह को भंग कर देने वाला । "हुं ह" एक आवाज बोलती है, "तुम पागल होगे व्यथा से, इस तरह, यह तो मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था । यह वेदना तुम्हें इसलिए तोड़ रही है, कि तुम अहंकार को बरकरार रखते हुए मृत्यु पर विजय चाहते हो । वह देखो सामने तुम्हारे कमरे के ठीक सामने एक्जोरा का फूल हंस रहा है ।"

"हंसने दो, हंसने दो यह फूल नहीं है यह मुखाग्नि लगती है मुझे, मैं आत्महत्या करूंगा ।"

"पागल पन छोड़ दो, शांत, शांत, शांत होकर सोचो।"

"देखो एक्जोरा का गुच्छा मुसकुरा रहा है ।" आवाज ने कहा था, "प्रकृति तुम्हारे साथ है, इसे तुम अचानक पहचान लोगे । क्योकि जब भी वह सहयोग देती है तब एक न एक फूल खिलखिला कर हंस उठता है । 'समथिंग' वह आगे

भरी डलियों को देखकर मैं चिन्तित हो जाता हूं । हमारे चिताभष्मालेपो दिक् पटधरो (नग्न) भोले बाबा की पूजा में तो विघ्न नहीं पड़ेगा पर ये लोग इसी डलिया के फूलों से बिंदुमाधव या गोपाल मंदिर के मदन बिहारी अथवा मुकुंद जी या कोई भी नाम लो भगवान कृष्ण के वहां उनकी मूर्ति पर फूलों को चढ़ाने के लिए डलिया की भूमिका मुझे मुस्कारहट से भर देती है । आप के घर में कोयले के चूल्हे पर खाना न बनता हो तो न सही, क्योंकि वह कोयला, मंहगा काफी होता है। तो भी किसी अतिथि के आने पर जल्दी से जल्दी चाय बनाने के लिए लकड़ी का कोयला तो इस्तेमाल में आता ही होगा । क्या आप को मालूम है कि इस कोयले का पचास प्रतिशत हिस्सा मुर्दघट्टी से आता है । छोड़िए । गंगा के पानी से घर धुलाये जाते हैं कि मृत आत्मा के भौतिक स्पर्श के सूतक हटा दिया जाय । क्या वह पानी मुर्दघट्टी के फूलों, राखों, अधजले मांस के टुकड़ों के बीच लेटी जीर्ण-शीर्ण गंगा से ही तो आता है ।

गुरुदेव, पानी से बचकर चलें । इन मुर्दों के दाह से ज्यादा कष्टकर तो वह धुआं है जो नाक को मुर्दघट्टी की दुर्गंध से भर देता है । मेरे सामने हरिश्चंद्र घाट है, नीचे गंगा से निकलकर सूखे बालू की राशि-राशि ढेर; किंतु इस चक्रव्यूह का भेदन कर चुके हैं तो शेष के लिए जल्दी और तड़प क्यों? क्या तुम्हें लगता है कि यह लाश मंजु की नहीं है? क्या तुम प्रमाण खोज रहे हो कि मंजु कब मरी, कैसे मरी तुम्हारे शरीर के सब कपड़े नोच लिये गये । मारकीन का एक टुकड़ा कमर के नीचे को और एक गले के नीचे शरीर ढंकने के लिए बहुत हैं । "जरा देख के हो" विजयी बोले, "गुरूजी का मुंडन पहली बार हो रहा है न तो बाल छूटना चाहिए न तो छुरे की खरोच लगनी चाहिए ।"

"अब खरोच से कौन बचायेगा विजयी । मरी लाश पर जैसे सात मन वैसे अपने शरीर का वजन जोड़ दूं तो नौ मन-क्या फरक पड़ेगा इससे ।"

नाई कुछ समझ न पाया । बोला, "सरकार आप निशांखातिर रहें । आज तक सूरत नाई ने इसी घाट पर कम से कम दस हजार मुंडन किये हैं । आपको तो मालूम ही होगा सरकार कि दुनिया का हर मुश्किल काम बाबू लोग नाई से ही कराते थे । शादी-ब्याह में बाबाजी और नाई-ठाकुर दोनों का दरजा बराबर होता था, क्यों?"

"अब तुम्ही बोलो नाऊ ठाकर ।"

"मैं एक से एक बबुआन और दूसरी ओर पत्तल चाटने वाले कुत्तों से भी गंदी जिंदगी बिताने वालों के यहां भी जजमानी कर चुका हूं । हमारे बाप की जजमानी कुल पचास गांव थी और अब मेरे और मेरें बेटों की जजमानी में पांच सौ गांव

समाये है । यह सब इसलिए सरकार की सूरत नाई हराम की रोटी नहीं खाता, आपकी औरत आप की भेदभरी बात को उगल सकती है पर सूरत नाई के पेट से हवा भी निकल जाय, मुमकिन नहीं ।"

बात सामने आयी चिता के लिए अग्नि की । मैंने कभी अपने ही शहर के किसी नवोदित रिपोर्ताज लिखने वाले का फीचर देखा था, शीर्षक तो उतना ही याद है जितना होना चाहिए यानी—डोम राजा ।

डोम राजा सामने वाले मकान में रहते थे । ऊपरी छत पर जाने का कभी दुर्भाग्य तो देखा नहीं पर डोम राजा की विरुदावलि सुनकर नरेंद्र के कंधे का सहारा लेते हुए मकान के कोने में बनी सीढ़ियों से धीरे-धीरे अपने को संभालते हुए पहुंचे उनके दरबार में, "भइया आग दे दो, मेरी बेटी की चिता सज गयी है।"

उस शराब में डूबे डोम राजा के हाकिम ने पूछा, "क्या करते हो?

"पढ़ाता हूं ।"

"हूं, चलो निकालो एक हरा पत्ता"

"इतना क्यों मांग रहे हो जी?" नरेंद्र ने कहा, "यह किसी धनपशु की बेटी नहीं है ।"

"चलो पचहत्तर ही सही" डोम राजा का अमला बोला, "चलो भाई पचास दो।"

"हम दस रुपये से अधिक एक पैसा नहीं देंगे, सुन लो ।" मैं तिनक गया।

"डॉक्टर साहब, इन लोगों के सामने हाथ जोड़कर मुखाग्नि मांगनी पड़ती है, गुस्से से नहीं ।" राणा ने कहा ।

"चलो पचीस निकालो, और सुन रे ललुवा आग निकाल कर दे दे धुनी से ।" आग प्रज्वलित की गयी । मेरे हाथ में जलती हुई लुकाठी थी । मैंने उसे मुख के पास रखा।"

यह चिताग्नि नहीं, मुखाग्नि नहीं यह तो नचिकेताग्नि है बेटे, जा अपने अपराधी बाप की पलकों में उलझे आंसुओं के मोहजाल तोड़ के तू ब्रह्मांड भेद कर ।"

परिक्रमा होती रही । मैंने गले की रुद्राक्ष माला निकाली और चिता में फेंक दी । मैंने तुझे अपने पास रखने के लिए तो बुलाया नहीं था । विदा तो तुम्हें देनी ही थी, तू तो किसी की अमानत थी । तुझे धरोहर की तरह रक्खा । तुझे वह सब दिया जो भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर तुझे सक्रिय बनाये रहे । किंतु इस वज्रपात

को सहने की हममें सामर्थ्य नहीं थी । न सही पुरानी डोलियां, गेंदे के गजरों से सजी मोटरकार से ही सही, तेरे जाने की घड़ियां गिनते रहे । अचानक मेरे मन में कुहरों और आसुओं से धीरे-धीरे उकसती एक नागिन वैखरी से टकराने को उद्यत होना चाहती थी,

खोरन खोर वन, बेटी दुधवा पिअवली
दहिया खिअवलीं साढ़ी दार जी
एतनहुं पर जस मनलू ना बेटी
चललू सुनर बर साथ जी
काहे के बाबा दुधवा पिअवला
दहिया खिअवला साढीदार जी
जनते त रहला बाबा धिया नाहीं आपनि
काहे के कइला दुलार जी ।

मैंने कटोरे से भरे दूध पिलाये, मोटी साढ़ियों वाली दही खिलाया तव भी तूने मेरे वारे में कुछ नहीं सोचा । तू सुंदर वर के साथ चली जा रही हो, "बाबा, तुमने दूध क्यों पिलाया, साढ़ीदार दही क्यों खिलाया, तुम तो जानते थे कि बेटी पराया धन होती है फिर इतना दुलार क्यों किया ?" ठीक है बेटे, सब ठीक है । मैं पिंडदान में विश्वास नहीं करता । इसलिए मैं अर्जुन की तरह यह सोच-सोचकर दुवला नहीं वन रहा हूं कि पिंडदान और जलतर्पण के वंद हो जाने से वर्ण-संकर उत्पन्न होंगे । वड़े परेशान थे बेचारे वर्ण-संरकरता से, उन्होंने कभी सोचा ही नहीं कि महाभारत के युद्ध के वाद एक ऐसी संस्कृति जन्म लेगी जिसमें शक, कुषण, हूण, हेफतल, मुंडा, किरात आदि जातियों की वर्ण-संकरता से हजारों रंग और सुगंध वाले फूल एक नये वातावरण का निर्माण करेंगे, काश विराट पुरुष को देखने के लिए उन्हें दिव्य चक्षु मिले, वैसे ही चक्षु चाहिए हर बौद्धिक को जो न तो अतीत में उलझा रहे, न तो वर्तमान में वंधा रहे, बल्कि उसका अगला क्षण भविष्य की ओर उठ जाये, वह आने वाले भविष्य को देख सके ।

यह कैसा अद्भुत मृत्यु-वरण
तनये, मैं अहं ग्रस्त वतलाता रहा तुझे नित्य
मानव का होता सीमातीत प्रदीपितु
अन्तःकरण । क्या जानो तुम इसे, क्योंकि तुम्हीं
रोक सकती हो अपने वल से अपना
प्राण क्षरण । तुमने तो राह दिखा दी

निरासक्त विरविदा कहा
फिर कर लिया संवरण
सब कुछ जो तेरा था, मेरा क्या, धिक् राम नाम
धिक् अशरण शरण

और कह भी क्या सकता हूं । मृत्यु इतनी आनन्द प्रदायनी वस्तु होती है, ऐसा तो कभी जाना नहीं । मै तो इतने दिनों से इसे प्यार से बुलाता रहा । पर वह शान्ति नहीं मिली । तुलसी बाबा, तुम्हें क्या कहूं । जन्मत-मरत दुख सह दुख होई—"तुझे दु ख क्यो नही हुआ बेटी," इतनी खुशी होती है मरते वक्त? कितना मूर्ख बाप हूं । अब तो संबल वह एक क्षण रह गया जब, पृथ्वी अपनी धुरी पर रुक गई थी । एक सामान्य लड़की की आत्मशक्ति से डरकर हवा निस्पन्द होकर स्तब्ध थी । *यही क्षण भगुरता को तोड दे । यही मुझे तुझसे सदा सदा के लिए जोड दे ।* मै मृत्युंजय हो गया बेटे, चिर विदा ।

थका लगता हूं आज ।

तीन दिन, तीन रातों तक अमावस्या का अंधकार छाया रहा । उन क्षणों में मेरी बुद्धि के तन्तुजाल में सिर्फ चार नाम फंस गये जो अब भी निकाले नहीं निकलते । भाई त्रिभुवन जी तीनों दिन सुबह और सायं लगातार आते रहे । पिंडदान का कार्य पूरा होता और वे मेरे साथ गंगा नहाकर चले जाते । शाम को गीता-पाठ के समय लगातार दो घंटे बैठे रहते, श्री सुधाकर सिंह और मेरे अनुज डॉ सूर्यनारायण द्विवेदी तो अग्नि के पास उपस्थित रहते ही थे और चौथा व्यक्ति *था बाबूलाल, वह बिना कुछ कहे स्वतः आता रहता और पिंडदान-स्थल को* झाड-बटोरकर स्वच्छ कर देता । दूसरे लोगों को तो मै उनका प्राप्य देकर कृतज्ञता से मुक्त हो जाऊंगा किंतु मंजु शोक-कथा के आरंभ से अब तक भाई त्रिभुवन जी ने जो किया, उससे मै उऋण नही हो पाऊंगा । तुम पितरों से भी श्रेष्ठ थीं, तेरा पिंड महानारायण के विराट पिंड में मिला दिया गया । मै जानता हू कि इन चीजों को तुम वाहियात कहती रही हो। तुम निचले स्तर मे नही हो । मै यदि वैसा ही सोचूं जैसा रघु के पुत्र अज ने सोचा तो यह पिंडदान तुम्हारी आत्मा की शांति के लिए नही, मै इसे एक कर्तव्य मानकर पूरा कर रहा हूं ।

कहूं कि यह सब लोक-संग्रह के लिए है तो लोग उपहास करेंगे कि बड़बोला *गीता के उपदेशक कर्ता की तरह अपने को महान् मानता है,* अहंकारी है, घमंडी है।मुझे न कभी ऐसी बातों से परेशानी हुई है न तो कभी होगी ।

वैसे मैं मार्ग भूला प्रगतिवादी भी नहीं हूं कि गीता में अंतरविरोध ढूंढूं । *मै गीता*

के सामने केवल इसलिए ही नतमस्तक नहीं होता क्योंकि वह विश्व की सबसे पुरानी सभ्यता वाले देश के करोड़ों लोगों की आंतरिक आस्था से जुड़ी महान संजीवनी है । गीता पूरे विश्व में अकेली पोथी है । अस्तित्ववादियों ने कहा कि यहां कुछ भी सत्य नहीं है । बस एक विराट और अंधेरा सत्य है—मौत । मौत? और हमारी गीता बताती है कि इस अमर मौत को मारने के लिए कुछ सीखना पड़ता है । यानी साम्पराय में अविजित कैसे रहा जाता है ।

हम चुपचाप अंतिम पिंडदान देकर घर लौट रहे थे । सब लोग विदा लेकर चले गये। अंत में बचा मैं और होता भी क्या है, एकाकी, अकेला, चाहकर भी समाज से जुड़ न सकने वाला, सब कुछ को दांव पर रखकर हारे हुए जुआरी की तरह... एक व्यक्ति, या वह भी नहीं ।

रवींद्र पुरी की मुख्य सड़क से अगले चौराहे तक, जहां आचार्य शुक्ल की प्रतिमा लगी है, गुरुधाम की ओर मुड़ना होता है । मै उस मोड़ पर पहुंच भी नहीं पाया था कि बगल के एक घर से कैसट बज रहा था । गाने वाले का दर्द तो उभर का आ ही रहा था । संभवतः दो एम्प्लिफायर्स लगे थे, बड़ी गमक आवाज में:

आभार

चिकित्सा विज्ञान संस्थान
काशी हिंदू विश्वविद्यालय

1. डा. राणा गोपाल सिंह *(नेफ्रोलॉजी)*
2. डा. पी. एन. सोमानी *(कार्डियोलॉजी)*
3. डा. एस. एन. तुली *(डाइरेक्टर)*
4. डा. के. के. त्रिपाठी *(नेफ्रोलॉजी)*
5. डा. शैलेन्द्र सिंह *(कार्डियोलॉजी)*
6. डा. डी. एन. पांडेय *(पायथालॉजी लैब)*
7. डा. अम्बष्ट *(यूरोलॉजी)*

चंडीगढ़

8. डा. चुग *(नेफ्रोलॉजी पी. जी. आई.)*
9. डा. धर्मपाल मैनी *(हिंदी)*
10. डा. यादव *(यूरोलॉजी पी. जी. आई.)*
11. डा. सुधाकर पांडेय *(इतिहास)*

क्रिश्चियन मेडिकल कालेज एवं हास्पिटल, वेल्लोर

12. डा. जे. सी. एम. शास्त्री *(नेफ्रोलॉजी)*
13. डा. अवधेश प्रसाद पांडेय *(यूरोलॉजी ट्रांसप्लांट सर्जन)*
14. डा. जाकोब *(नेफ्रोलॉजी)*
15. डा. श्री निवास *(नेफ्रोलॉजी)*
16. डा. घोष *(नेफ्रोलॉजी क्यू-1 वेस्ट)*
17. डा. सिस्टर एलिस *(डायलसिस)*
1.8 डा. सिस्टर रिचेल *(आफ्टर ट्रांसप्लांट रूम)*

दिल्ली

19. डा. रघुवीर सहाय
20. श्री कन्हैया लाल नंदन *(संपादक सारिका)*
21. श्री पद्मधर त्रिपाठी

वाराणसी

22. डा. गंगा सहाय पांडेय
23. डा. सी. एम. बाजपेयी

24. डा. राजेन्द्र नारायण शर्मा
25. डा. विजय सिंह
26. जगरदेव *(डोनर)*
27. सत्यनारायण
28. डा. श्रीकान्त पांडेय
29. डा. विजयी सिंह
30. डा. श्रवण तुली
31. डा. श्रीमती निर्मल तुली
32. श्रीमती सुजाता जेना
33. कनक मंजरी जेना
34. इन्दू खन्ना
35. श्रीमती मोहिनी सिंह *(मुगलसराय)*
36. श्रीमती सुमन श्रीवास्तव
37. श्रीमती माणिक्य राजी
38. सुश्री अनुबेने पुराणी
39. डा. गया सिंह
40. डा. आलोक सिंह
41. शिव कुमार गुप्त 'पराग'
42. डा. श्याम नारायण पांडेय
43. श्री उमेश प्रसाद सिंह
44. डा. देवेन्द्र प्रताप सिंह
45. श्री प्रदीप सिंह
46. डा. रामनारायण शुक्ल
47. डा. सूर्य नारायण द्विवेदी
48. डा. विजय पाल सिंह
49. श्री वशिष्ठ मुनि ओझा *(पत्रकार)*
50. श्री चंचल *(पत्रकार)*
51. डा. त्रिभुवन सिंह
52. राणा प्रताप बहादुर सिंह
53. काशी नाथ सिंह *(अधिवक्ता)*
54. विजय त्रिवेद श्रीमती त्रिवेद
55. डा. चौथी राम यादव
56. प्रो. इकबाल नारायण *(भू. पू. कुलपति, बी. एच. यू.)*
57. हिंदी विभाग, काशी हिंदू विश्वविद्यालय के सभी अध्यापक, कर्मचारी एवं सत्र 1980-81 की सभी छात्र-छात्राएं
58. श्री अरविन्द आश्रम पांडिचेरी *(रक्तदान के लिए)*